॥ श्रीः ॥

विद्याभवन राष्ट्रभाषा ग्रन्थमाला

३४



प्राचीन भारतीय मिट्टी के बर्तन

पुरातत्त्व

डाक्टर राय गोविन्दचंद

चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी-१

प्रकाशक : चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी
मुद्रक : विद्याविलास प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि० संवत् २०१७
मूल्य : १२-००

The Chowkhamba Vidya Bhawan,
Chowk, Varanasi-1 (INDIA)
1960
Phone 3076

विषय-सूची



दो शब्द

जब मैं सन् १९५३ में योरोप में था तो मुझे विविध देशों के जैसे मिस्र, यूनान, मेसोपोटामिया, ईरान, चीन और भारत के प्राचीन मिट्टी के बरतनों को देखने का अवसर प्राप्त हुआ। इन्हीं के साथ अमेरिका, अफ्रीका तथा योरोप के भी बरतन प्रदर्शित थे। इनके स्वरूप की कला को देख कर मेरे मन में यह भाव उत्पन्न हुआ कि उस प्राचीन काल का मनुष्य इनको कैसे बनाता था। इस जिज्ञासा की शान्ति प्रोफेसर काडरिंगटन ने स्कूल आफ ओरियण्टल अफ्रिकन स्टडीज में इन बरतनों के बनाने के ढङ्ग में जिस प्रकार विकास हुआ उसे दिखा कर की। इस विकास को समझने के पश्चात् मैंने अपना अध्ययन इस ओर आकृष्ट किया कि प्रत्येक देश के मनुष्य ने कैसे अपनी प्रतिदिन में व्यवहार आने वाली वस्तु को कलात्मक बनाने का प्रयत्न किया।

भारतीय सामग्री योरोप के संग्रहालयों में कम थी, इस कारण वहाँ भारतीय मिट्टी के बरतनों के विकास का अध्ययन अपूर्ण ही रहा। भारत लौटने पर यहाँ संग्रहालयों में सुरक्षित मिट्टी के बरतनों का मैंने अध्ययन किया। फिर भी उसका विकास पूर्ण रूप से समझ में नहीं आता था। राजघाट में जब सन् ५७ में खोदाई हुई और विविध स्तरों से मैंने भी मिट्टी के बरतनों को निकाला, उस समय इसके विकास की कहानी समझ में आने लगी। उसके पश्चात् और स्थानों की खोदाइयों को देखने का अवसर प्राप्त हुआ जिससे इस निष्कर्ष पर मैं पहुँचा कि अलग अलग प्रदेशों के अलग अलग स्थानों में विकास का क्रम अलग अलग है। भारत बहुत बड़ा देश है और किसी एक स्थान को लेकर उसके विकास के अध्ययन के आधार पर सारे भारत के मिट्टी के बरतनों के विकास को समझना असम्भव है। विविध स्थानों में विविध काल में अलग अलग प्रक्रियायें चलती रही हैं और उनका अलग अलग अध्ययन ही समुचित होगा। इसी दृष्टि से मैंने पुनः अध्ययन आरम्भ किया और मुझे सफलता भी मिली। प्रस्तुत पुस्तक में इसी तथ्य को सिद्ध करने का प्रयत्न है। परन्तु जब अपनी धारणाओं को मैं लिपिबद्ध करने लगा तो दूसरी कठिनाई सामने उपस्थित हुई। जो कुछ भी इस दिशा में कार्य हुआ था वह सब या तो अंग्रेजों ने किया था या उनके भारतीय शिष्यों ने। इस कारण भारतीय बरतनों के नाम तथा उनके विवरण सब विदेशी भाषा में लिखे गये थे; जैसे कटोरी को बॉल की संज्ञा दी गई थी तथा थाली को डिश की। डिश तथा थाली में जो अन्तर है उसको बताने की आवश्यकता नहीं है। यही हाल विवरण का भी था। इनका पुनः भारतीयकरण करना पड़ा तथा

इनके हिन्दी में जो प्रचलित नाम थे उनकी खोज करनी पड़ी जिससे हिन्दी भाषभाषी यह समझ सकें कि यह कौन सा बरतन है। इस विषय पर न अंग्रेजी में और न हिन्दी में कोई पुस्तक मिल सकी जिससे कुछ सहारा लिया जा सकता।

कुछ लेख मैंने इस विषय पर 'आज' में लिखे थे परन्तु जब लिखने बैठा तो उसमें भी संशोधन करना पड़ा क्योंकि खोदाई हमारे देश में नित्य हो रही है और कुछ न कुछ नये तथ्य प्रत्येक वर्ष सामने आ जाते हैं। जहाँ तक हो सका है सन् १९५९ तक की खोदाई की सामग्री का इसमें समावेश कर लिया गया है फिर भी बहुत सी बातें छूट गयी हैं। यह एक अध्ययन है यही सोच कर प्रकाशक को मैंने छापने को दे दिया। पाठक त्रुटियों को क्षमा करेंगे।

मुझे इस कार्य में जिन महानुभाव विद्वानों से सहायता मिली है उन सब के प्रति मैं आभार प्रदर्शित करता हूँ। विशेष रूप से श्री अमलानन्दन घोष डाइरेक्टर जेनरल आफ आर्केआलाजी का मैं आभारी हूँ जिनकी कृपा से मुझे दिल्ली के संग्रहालयों में सुरक्षित सामग्री के अध्ययन का सुअवसर प्राप्त हुआ। इसी विभाग के और सज्जनों का भी जैसे श्री वी० वी० लाह, श्री एम० एन० देशपाण्डेय, श्री कृष्णदेव, श्री रघुवीर सिंह का मैं अनुगृहीत हूँ। इन सब विद्वानों से मैंने कुछ सीखा है। प्रो० काडरिंगटन के प्रति सुचारु रूप से कृतज्ञता प्रकट करना कठिन है क्योंकि उन्होंने ही मुझे इस ओर सर्वप्रथम आकृष्ट किया। प्रो० गोवरधन राय शर्मा, श्रीमान् राय कृष्णदास जी, डा० अल्टेकर, डा० अवध किशोर नारायण से भी इस कार्य में मुझे बड़ी सहायता मिली है और बहुत सी सामग्री भी इन्हीं की कृपा से प्राप्त हुई है। श्री शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र' का भी मैं आभारी हूँ जिन्होंने इसके प्रूफ संशोधन में मेरी सहायता की। चौखम्बा संस्कृत सीरीज के व्यवस्थापक ने जिस प्रकार इस पुस्तक को प्रस्तुत किया है वह उन्हीं का काम था। आज हिन्दी-जगत् में ऐसे साहसी प्रकाशकों की बड़ी कमी है जो मेरे जैसे आलसी आदमी से भी काम करा लें।

गोविन्दचन्द

भूमिका

किसी प्राचीन कला-कौशल के अध्ययन के हेतु यह आवश्यक है कि उसके आधुनिक स्वरूप का ज्ञान प्राप्त किया जाय। जो ज्ञात है उसी के धरातल पर अज्ञात का अन्वेषण वैज्ञानिक रूप धारण कर सकता है। प्राचीन भारत के मिट्टी के बरतनों के अध्ययन के हेतु आज के मिट्टी के बरतनों के बनाने की क्रिया, उनके आकार तथा उन पर हुई चित्रकारी उतनी ही उपयोगी सिद्ध होगी जितनी आज की मूर्ति-कला के ढंग को जान कर प्राचीन मूर्ति-कला का अध्ययन। सौभाग्य से भारत में अब भी प्राचीन कला-कौशल कुछ-कुछ उसी रूप में विद्यमान हैं जिस रूप में आज से दो हज़ार वर्ष पूर्व थे। इस कारण इस प्रकार के अध्ययन में वे बहुत सहायक हो सकते हैं। भारत के प्रत्येक नगर और गाँव में कुम्हार मिट्टी के बरतन बनाते हैं और हर नगर की अपनी-अपनी विशेषता है। इनमें अपनी-अपनी सुगढ़ता है। काशी, लखनऊ, प्रयाग, पटना सभी स्थानों पर पुरवे, कसोरे बनते हैं परन्तु आकार इन सभी के एक प्रकार के नहीं होते। काशी के बरतनों की गोलाई शुद्ध रहती है, कोर एकदम समतल, पेंदी साफ कटी हुई, बाहर और भीतर के भाग चिकने परन्तु पटने के बरतन मोटे होते हैं, उनमें वह सफाई नहीं पायी जाती। काशी के बरतनों को देखकर बहुत से बाहर के यात्रियों को यह भ्रांति हो जाती है कि ये साँचे में ढले हैं। इनके आकार कला की दृष्टि से अत्यन्त उत्कृष्ट हैं।

ये बरतन प्रायः कुम्हार चाक पर बनाते हैं। केवल बड़े बरतन जैसे नाँद और कुण्डे, थपुओं से पीट कर बनाए जाते हैं। खिलौने के हेतु साँचे व्यवहार में लाये जाते हैं परन्तु बरतनों के हेतु नहीं। कुम्हार के चाक का भारत में कब आविष्कार हुआ यह कहना कठिन है क्योंकि हमें आज से ५००० वर्ष पूर्व के भी जो बरतन 'सिन्धु-सभ्यता' के प्राप्त हुए हैं वे भी हाथ के चाक पर बने हुए हैं। इसके आविष्कार ने मनुष्य के जीवन में एक क्रांति उत्पन्न कर दी होगी, इसमें सन्देह नहीं है। यह चाक, जो हमें आज कुम्हारों के घरों में दिखाई देता है, प्रायः उसी आकार का है जैसा प्राचीन भारत में व्यवहृत होता था। इसके आकार में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। यूरोप में चाक का आकार बहुत कुछ बदल चुका है। वहाँ चाक सीने की मशीन की भाँति पैर से चलने लगा है और उसी आकार का बनने लगा है।[1]

प्रायः आजकल तीन प्रकार के बरतन बनते हैं—एक सादे, दूसरे रंगीन और तीसरे चमकदार! सादे मिट्टी के बरतनों का रंग पीला, भूरा या सिलेटी रहता है। रंगीन बरतनों का रंग चमकता हुआ लाल रंग का होता है और चमकदार बरतन

१, वेबस्टर्स न्यु इण्टर नेशनल डिक्शनरी–पृ० १९३३।

चुनार के बरतनों की भाँति चमकदार रहते हैं। चमकदार बरतन प्रायः हरे, नीले, भूरे, काले रंग के मिलते हैं। काशी में आज भी मिट्टी के बरतनों का व्यवहार और नगरों की अपेक्षा बहुत अधिक है क्योंकि यहाँ के निवासी मिट्टी के बरतनों को सबसे पवित्र समझते हैं और एक ही बार व्यवहार करके फेंक देते हैं। सबसे अधिक व्यवहार में आने के बरतनों में पुरवा, कसोरा, परई, हँड़िया, गगरी, दिउली, दीया, सुराही, गौरइया, तश्तरी इत्यादि हैं। सभी एक बार व्यवहार में आते हैं। सुराही, गगरी जिसमें पानी रखा जाता है कुछ दिनों तक काम में लायी जाती है। चिलम में आग रहती है इससे यह अशुद्ध नहीं समझी जाती, परन्तु पुरवा जिससे पानी या दूध पीया जाता है, जूठा हो जाने के कारण अशुद्ध हो जाता है और एक बार व्यवहार के बाद फेंक दिया जाता है। इसी प्रकार और भी बरतन—जैसे कसोरा इत्यादि भी व्यवहार के पश्चात् फेंक दिये जाते हैं।

कुम्हार इनके बनाने के हेतु प्रायः मिट्टी आस-पास के प्राचीन पोखरों से लाते हैं, जिनमें प्रायः पानी साल भर रहता है। प्राचीन नगरों में छिछले कच्चे जलाशय कम नहीं हैं, यों इनकी संख्या धीरे-धीरे कम होती जा रही है। प्रायः बरतन बनाने की मिट्टी जलाशय के बीच से लायी जाती है क्योंकि यहाँ मिट्टी प्रायः चिकनी रहती है और पानी में पड़े-पड़े सड़ कर लसदार हो जाती है। इस मिट्टी को घर लाकर कुम्हार ५-६ दिन भलीभाँति पानी देकर पाँव से रौंदते और सड़ाते हैं जिससे उस मिट्टी में और लस उत्पन्न हो जाय। इसके पश्चात् मिट्टी का लोंदा बना कर उसे हाथ से बेलते हैं जिससे छोटी-छोटी कंकड़ी साफ हो जायँ। फिर लोंदे बना कर पृथ्वी पर पटकते हैं जिससे हवा के बुलबुले जो मिट्टी में रहते हैं निकल जायँ। इतना परिश्रम करने के बाद मिट्टी चाक पर रखने के लायक होती है। मिट्टी की यह दुर्गति देखकर बरबस कबीर का निम्नांकित दोहा याद आ जाता है—

माटी कहे कुम्हारसे, तू क्या रूँधे मोहिं।
एक दिन ऐसा होयगा, मैं रूँधूँगी तोहिं॥

चाक के, जिस पर बरतन बनता है, दो भाग होते हैं—एक नीचे का, दूसरा ऊपर का। एक गोल पत्थर जिसका वृत्त प्रायः १॥ फुट रहता है, पृथ्वी में गाड़ दिया जाता है। इसके बीचोंबीच एक खूँटी, जो पुराने इमली के पेड़ के तने की लकड़ी की होती है, पत्थर में छेद करके ठोंक दी जाती है। इसी खूँटी पर ऊपर का पत्थर घूमता है, इस कारण इसे खूब पक्की लकड़ी का बनाते हैं। ऊपर के पत्थर का वृत्त प्रायः ४ फुट रहता है। यह भी गोल रहता है। इसकी मोटाई १॥ इंच से अधिक नहीं रहती और इसके ऊपर के भाग में एक रेखा कोर के पास बनी रहती है और बीच में एक गोल आकार एक सूत उठा हुआ पत्थर में कटा रहता है। कोर इस पत्थर की गोल रहती है, इस ऊपर वाले पत्थर में नीचे की ओर एक छेद रहता है। प्रायः ये दोनों पत्थर चुनार के पत्थर के बनते हैं और इन्हें संगतराश बड़ी सुन्दरता से गढ़ते हैं। ऊपर के

पत्थर को खूँटी पर रख कर कुम्हार दाहिने से बायें एक नुकीली लकड़ी के डण्डे के सहारे घुमा देता है। डण्डे की नोंक को ऊपर के पत्थर की कोर के पास बनी रेखा में डाल कर पत्थर घुमाया जाता है। कुम्हार प्रायः पूर्व या उत्तर की ओर मुँह करके बैठता है। चाक पर बैठा हुआ कुम्हार ब्रह्मा की भाँति जब चाक को घुमा देता है तब ऐसा भान होता है कि वह संसार से परे का कोई जीव है जो इस संसार-चक्र को चला कर अलग बैठा हुआ उसकी गतिविधि का निरीक्षण कर रहा है।

मिट्टी के लोंदे को घूमते हुए चाक पर रख कर कुम्हार अँगूठे, उँगलियों और हथेली के सहारे कभी मिट्टी को दबा कर, कभी छोड़ कर इच्छित आकार के बरतन निर्माण करता है। जैसे मनुष्य एक ही आकार के होते हुए भी भिन्न-भिन्न रहते हैं, उसी प्रकार इन बरतनों में भी कुछ न कुछ भिन्नता रहती है। सधे हुए हाथ से बनने के कारण प्रत्यक्ष तो कोई अन्तर अनुभव नहीं होता, परन्तु यदि सूक्ष्म जाँच की जाय तो थोड़ा-बहुत फेरफार मिल ही जायगा। हाथ कभी यन्त्र की पूर्ति नहीं कर सकता, यह तो मन से सम्बन्धित होने के कारण मन की ही भाँति चलता है। बरतन को चिकना करने के लिए कुम्हार प्रायः हाथ में पानी लगाता है जो उसके पास ही पुरवे में रखा रहता है। परन्तु कभी-कभी वह एक छोटी चिकनी लकड़ी का भी चाक पर घूमते हुए बरतनों पर उन्हें चिकना करने के हेतु व्यवहार करता है जिसमें अँगुलियों की रेखाएँ भी बरतन पर से मिट जाती हैं। ज्यों ही बरतन बन कर तैयार होता है कुम्हार इस शीघ्रता से उसे पतले डोरे के सहारे काट कर अलग करता है कि दर्शक देखते ही रह जाते हैं। यह डोरा उसके अँगूठे में से लेकर एक छोटी लकड़ी के टुकड़े से बँधा रहता है। कभी-कभी बरतन को चाक पर से उतार कर चाकू से भी छील कर साफ किया जाता है।

इन बरतनों को काठ के तख्तों पर सुखाने के लिए रख दिया जाता है। ये जब थोड़ा कड़ा हो जाते हैं तब इन्हें उठा कर धूप में रखते हैं। इनमें प्रायः प्रातःकाल के ही सूर्य की रश्मियाँ लगने दी जाती हैं जिससे ये अधिक गर्मी पाकर चिटकने न लगें। दिन के दस बजते-बजते इन्हें पुनः धूप से अलग करके घर में रख देते हैं। लम्बे तख्ते पर रखने के कारण इन्हें उठा कर एक दूसरे स्थान पर ले जाने में कठिनाई नहीं होती। थोड़ा सूख जाने पर गौरइया में टोटी, दीयट में मूँठ, प्याले में पेंदी इत्यादि लगायी जाती है। इस प्रकार के बरतनों की टोटी, मूँठ, पेंदी इत्यादि अलग से बना कर जोड़ी जाती है। टोटी तो प्रायः बरतन में छेद करके लगाते हैं, मूँठ बरतन के ऊपर से मिट्टी और पानी लगा कर जोड़ते हैं, पेंदी बरतन सूखने पर उसे सादी चाक पर रख कर जोड़ते हैं। बरतन के और अंग जैसे सुराही की ग्रीवा या चिलम की बैठक भी पीछे से जोड़ी जाती है। ये सब बरतन जब पूर्ण रूप से सूख जाते हैं तभी इन्हें आँवाँ में पकाया जाता है।

आँवाँ लगाने की भी एक विशेष क्रिया है। आँवाँ लगाने के पूर्व पृथ्वी को गोबर से लीप कर शुद्ध करते हैं क्योंकि हिन्दू प्राचीनकाल से अग्नि को देवता मानते हैं और अग्नि

का आवाहन शुद्ध स्थान पर किया जाता है। दूसरा लाभ यह होता है कि गोबर आग की गर्मी को पृथ्वी में लुप्त होने से रोकता है। इसके पश्चात् बीच में एक मिट्टी की चिमनी रख कर गोहरी खड़ी चुन देते हैं और उस पर फूस रख देते हैं। फिर इन गोहरियों पर चारों ओर बरतन चुन देते हैं, बरतन उलट कर एक के ऊपर दूसरा रखते हैं। बड़े-बड़े बरतन नीचे और छोटे ऊपर रहते हैं परन्तु पुरवे की एक कतार सबसे पहिले आँवें के चारों ओर लगायी जाती है। ये यों बरतनों को चुनते हुए चार फुट ऊँचाई तक चले जाते हैं फिर इन बरतनों पर राख चढ़ा देते हैं और उसके पश्चात् गोहरी चारों ओर ऊपर तक सजाते हैं। इनके साथ स्थान-स्थान पर फूस और सूखी पत्ती इत्यादि रखते जाते हैं। इसके पश्चात् फिर राख चढ़ा कर मिट्टी से लेप कर आँवाँ बन्द कर देते हैं। आँवाँ में नीचे पृथ्वी के पास एक छिद्र छोड़ते हैं और ऊपर का मुँह खुला रखते हैं। इस ऊपर के मुँह में से आँवाँ में अग्नि डाल देते हैं। अग्नि के समावेश से फूस जल उठता है और गोहरी को भी प्रज्वलित कर देता है। नीचे के छिद्र से हवा प्रवेश करके धुआँ को ऊपर उठने में सहारा देती है। जब धुआँ निकल जाता है और आँवाँ दहकने लगता है तो ऊपर के मुँह को भी पत्थर से बन्द कर देते हैं। आँवाँ अपने आप बुझता है, बुझाया नहीं जाता। इस प्रकार जब आँवाँ लाल होकर बरतनों को भी लाल रंग का कर देता है तो ऐसा ज्ञात होता है कि ये मिट्टी के नहीं सोने के बने बरतन हैं। धीरे-धीरे बरतन पक जाते हैं और आग भी बुझ जाती है। जब तक आँवाँ बाहर से बिलकुल ठंढा नहीं हो जाता वह खोला नहीं जाता। आँवाँ खोलने पर भी बरतनों को राख में एक दिन पड़े रहने देते हैं जिससे वे धीरे-धीरे ठण्ढे हों। कभी-कभी बरतनों पर काले दाग जो दिखाई देते हैं वे बरतन के पूर्ण न सूखने के कारण पड़ जाते हैं। यदि इन्हें पुनः आँच पर रखा जाय तो ये दाग विलीन हो जाते हैं।

एक दूसरे प्रकार से भी आँवाँ बनाया जाता है। यह आँवाँ तेज़ आँच देने के लिये विशेष उपयुक्त होता है। इसको बनाने के लिये पृथ्वी खोद कर एक गोल-सा गढ़ा करते हैं। एक ओर से उसका मुँह बनाते हैं जो लम्बा होता है। फिर भी उस गढ़हे को सीकचे से पाट कर उस पर मिट्टी फैला देते हैं और बीच-बीच में छेद बना देते हैं। उस पर साधारण आँवें की भाँति गोहरी चुन कर बरतन जमा देते हैं। नीचे से इसमें आँच लगाते हैं और ऊपर भी गोहरी की आँच रहती है।

रंगीन बरतन आजकल प्रायः लाल रंग के बनते हैं। इनको पकाने के पूर्व ही रँगना पड़ता है। धूप में सूखे हुए बरतनों पर आँवाँ में रखने के पहिले कुम्हार एक प्रकार का लेप लगा देते हैं जो कापिस (एक प्रकार की विशेष मिट्टी), खैर (कत्था), सिन्धुरिया आम की छाल और कपड़ा धोने वाला सोडा मिला कर बनाया जाता है। यह लेप कपड़े के पोचाड़े से बरतनों पर कुम्हारों की स्त्रियाँ लगाती हैं। कापिस धान के खेत से पुरुष ही खोद कर लाते हैं। इसे स्त्रियों को नहीं छूने देते। इसमें लोहे का अंश विशेष रहता है। इस लेप के सूखने पर जब इन बरतनों को आँवें में पकाते हैं तो इन पर एक प्रकार का चमकदार लाल रंग चढ़ जाता है। लाल रंग हमारे यहाँ

शुभ समझा जाता है। इसी कारण इसका विशेष प्रयोग होता है। दूसरे रंग भी इसी प्रकार बरतनों पर चढ़ाये जा सकते हैं परन्तु उनमें कापिस का होना आवश्यक है।

चमकीले बरतन बनाने का ढंग भिन्न है। ये पहले सादे बरतनों की भाँति पका लिये जाते हैं परन्तु सादे बरतनों से ये कुछ मोटे बनते हैं। रंग लगाने के पूर्व इन्हें धूप में रखते हैं। धूप में जब ये गरम हो जाते हैं तब इन पर कूची से रंग, पीसा हुआ काँच और सोहागे का लेप चढ़ाते हैं। यह लेप ठण्डे पानी में बनाया जाता है। काशी के हड़हा मुहल्ले में काँच की शीशी इत्यादि बनती हैं, यह काँच बहुत पतला रहता है, इसी को कुम्हार पीस लेते हैं। रङ्ग धातु के दिये जाते हैं जैसे काले भूरे रङ्ग के लिए मैंगनीज का व्यवहार करते हैं, हरे रङ्ग के हेतु ताम्बे का बुरादा, लाल रङ्ग के लिए लोहे का बुरादा इत्यादि। इस रङ्ग को सुहागे के साथ पीसते हैं। प्रायः रङ्ग की मात्रा २० प्रतिशत, काँच की ५० प्रतिशत, सोहागे की ३० प्रतिशत रहती है। सूखने के पश्चात् इसपर चमक चढ़ाई जाती है अर्थात् इसी बरतन पर सोहागा और केवल काँच का लेप एक बार और चढ़ा देते हैं और फिर सुखा देते हैं। जब यह लेप भी सूख जाता है तो बरतन को हल्के हाथ से पानी से पोंछ देते हैं जिससे भट्ठी में ये एक दूसरे से चिपक न जायँ। इसके पश्चात् इन बरतनों को भट्ठी में रख देते हैं।

इस प्रकार के बरतनों पर चमक चढ़ाने के हेतु एक विशेष प्रकार की भट्ठी बनती है। इस तरह की भट्ठियाँ भारत में प्रायः ५००० बर्ष से बनती रही हैं क्योंकि इसीसे कुछ मिलती जुलती भट्ठियाँ हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में भी प्राप्त हुई हैं।[1] यह भट्ठी ईंटा और गारे से बनायी जाती है। प्रायः यह गोल रहती है और इसकी ऊँचाई चार फुट के लगभग होती है। ईंट जोड़कर इसे बनाते हैं और भीतर बाहर मिट्टी का पलस्तर कर देते हैं। इसमें ऊपर के तीन-चौथाई भाग को छोड़कर, लोहे की छड़ लगाकर और उस पर मिट्टी चढ़ाकर एक खण्ड और बना देते हैं जिससे यह भट्ठी भीतर की ओर से दो खण्डों में विभाजित हो जाती है। नीचे आग रहती है और ऊपर बरतन। बीच की छत में कई छिद्र रहते हैं जिससे आग ऊपर जाती है। इसी हेतु सामने से भट्ठी में एक मुँह बना रहता है जिससे ऊपर हवा खिंचती है। इसी के ऊपर एक छोटा छिद्र भी रहता है जिससे भीतर की आग का निरीक्षण हो सके। धुआँ निकलने के हेतु भट्ठी के ऊपर के भाग में एक ओर एक चिमनी-सी लगी रहती है। यह भी हवा को ऊपर खींचने में सहायक होती है। बरतन इस भट्ठी में अलग अलग चुनकर बीच के छेद के चारों ओर रखे जाते हैं और आग प्रज्वलित करने के पश्चात् भट्ठी के ऊपर का मुँह एक गोल पत्थर से बन्द करके मिट्टी से लेस दिया जाता है। भट्ठी में इस प्रकार प्रायः ७०० या ८०० डिग्री सेण्टीग्रेड का ताप उत्पन्न हो जाता है जिससे बरतनों के ऊपर का काँच मिश्रित लगा हुआ लेप गलकर बरतन पर फैल जाता है। फिर बरतन को

---

१. वत्स—एक्सकवेशन्स एट हड़प्पा-पृ० ४७०; मांकेन-फरदर एक्सकवेशन्स एट मोहन-जुदाड़ो-प्लेट ५० वी० डी०।

धीरे-धीरे ठंडा हो जाने देते हैं। जब भट्ठी बिलकुल तापरहित हो जाती है तब उसे खोलकर बरतन निकाल लेते हैं। यदि किसी बरतन पर कोई धब्बा आ जाता है तो उसको बोरसी (गोरसी) की आँच पर गरम करके रङ्गमिश्रित घोल पुनः लगाते हैं। उपर्युक्त भट्ठी बहुत दिनों तक काम देती है, आँवाँ की भाँति एक ही बार नहीं चढ़ती।

कुछ बरतन जैसे तश्तरी मिट्टी को चकले पर रोटी की भाँति बेल कर और फिर मिट्टी के साँचे से दबा कर बनाई जाती है। नाँद दूसरी नाँद पर मिट्टी थोप कर बनती है। थोड़ा सूखने पर उसे उतार लेते हैं और फिर सुखाकर उसे आँवें मे पकाते हैं।

मिट्टी के खिलौने जो रंगीन बनते हैं उनको साँचे में ढाल कर आँवें में पका लेते हैं परन्तु इनके लिए बड़ा आँवाँ न लगा कर छोटा सा आँवाँ गोहरी (कण्डा) का लगा लेते हैं और ये जब पक जाते हैं तब इन्हें खड़िया में पहले रँगते हैं और उसके पश्चात् विविध रंग गोद मे मिला कर लगाते हैं। सब रंग सूखने पर इन पर चपड़े की वारनिश करते हैं। कुछ चमकीले खिलौने जैसे चुनार मे बनते हैं, काशी मे भी बनते हैं। उनको बनाने के हेतु उपर्युक्त चमकदार बरतनों के बनाने की युक्ति अपनानी पड़ती है।

कुछ बरतनों पर नक्काशी भी बनती है। यह दो प्रकार से बनती है—या तो खोद कर या ऊपर से चिपका कर। खोदाई जब बरतन कच्चा रहता है तभी की जाती है और चिपकाने के लिए फूल-पत्ती साँचे में ढाल कर बरतन सूखने पर उस पर पानी के सहारे चिपका देते हैं। यह सब कृत्य बरतन को आँवाँ में डालने के पहले ही किया जाता है। बरतनों पर छापे का कार्य अब प्रायः नहीं होता। प्रथम शताब्दी के राजघाट के बरतनों पर बड़ी सुन्दर छपाई प्राप्त हुई है।

इन बरतनों में एक विशेष आकर्षण है क्योकि इनमें कला है। बिखरे हुए तत्त्वों को एक नियन्त्रण में बाँधने का प्रयास है, स्वरूप का चिन्तन तथा उसका प्रत्यक्षीकरण है। यदि हम सहृदयता से देखें तो हम इसके आकार की सुन्दरता पर मुग्ध हो जायँगे। इनके पीछे हजारों वर्ष के प्रयत्न का इतिहास है जैसा हम आगे इस पुस्तक में देखेंगे। जिन व्यक्तियों ने मुझे इस कार्य मे सहायता दी उनका मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूँ।

प्राचीन भारतीय मिट्टी के बर्तन

प्रस्तर युग के भारतीय मिट्टी के बर्तन

यह जानने की किस को इच्छा न होगी कि हमारे पूर्वज किस प्रकार के बरतन में अपना धान्य एकत्रित करते थे, किन में वे भोजन बनाते थे, किन में वे भोजन करते थे तथा किन में वे पेय द्रव्य पीते थे। धातु के बने विविध बरतनों के अतिरिक्त हमें प्राचीन स्थानों की खोदाई में विविध भाँति के मिट्टी के बरतन प्रचुर मात्रा में प्राप्त हुए हैं। इनमें हण्डियाँ, कसोरा, परई, कुण्डे, तश्तरी, भिक्षापात्र इत्यादि अनेक बरतन हैं जो नित्य प्रति साधारण जनता के व्यवहार में आते थे। ये सब एक ही आकार-प्रकार के नहीं हैं। भिन्न स्तरों से प्राप्त हुए ये मिट्टी के बरतनों के टुकड़े अलग-अलग काल के अलग-अलग ढंग के हैं। किसी-पर-किसी प्रकार की चित्रकारी है तो किसी-पर-किसी प्रकार की। किसी की ग्रीवा पतली है तो किसी की फैली हुई इत्यादि-इत्यादि। इनके बनाने में, इनकी मिट्टी मांडने में, सुखाने में, पकाने में, आकार-प्रकार में, रंगाई तथा चित्रकारी इत्यादि में जो उत्तरोत्तर विकास तथा परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं जिनमें मनुष्य के जीवन का इतिहास छिपा हुआ है क्योंकि मनुष्य बहुत प्राचीन काल से मिट्टी के बरतनों का व्यवहार करता आ रहा है और अब भी भारत में तो करता ही है। साधारण जनता तो इसी को अपने काम में आज भी लाती है। ऐसे महापुरुषों की संख्या अभी कम है जो चीनी के बरतनों में भोजन करते हैं। यही कारण है कि आज के इतिहासज्ञ अपनी सामग्री के अध्ययन में इन मिट्टी के टुकड़ों को विशेष महत्व प्रदान कर रहे हैं और यही कारण है कि हमारे संग्रहालयों में इनको एक विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ है। आज इनके आधार पर प्रत्येक-काल के मनुष्य-जीवन की परिस्थितियों का पता लगाया जा रहा है।

आज जो अध्ययन मनुष्य के जीवन के विकास का हो रहा है उससे ऐसा पता लगता है कि प्राथमिक युग में मनुष्य को किसी प्रकार के बरतनों की आवश्यकता न थी। वह तो अपना जीवन कच्चा मांस तथा कच्चे फल

खाकर व्यतीत कर लेता था[1]। उस युग में उसे पत्थर के हथियार ही सर्व-उपयोगी होते थे। अति प्राचीनकाल में मनुष्य पत्थरों को दूसरे पत्थरों से एक ओर तोड़कर नुकीला बना लेता था और उनसे काम लेता था। फिर उसने उन पत्थरों को दो-तीन ओर से तोड़कर हथियार बनाना प्रारम्भ किया। इस युग में मनुष्य रहने के हेतु अपनी झोपड़ियाँ नहीं बनाता था। वृक्ष ही वर्षा, ग्रीष्म तथा हिम से उसकी रक्षा करते थे। कन्दराओं में वह निवास करता था, शिलाखण्ड ही उसकी शय्या थी, जलप्रपात तथा नदियाँ उसके जल संग्रहालय थे, तथा मारे हुए जानवरों के चमड़े उसके तन ढाँकने के काम आते थे। यह युग कब तक चला यह कहना कठिन है। तीसरा युग बरतनों के व्यवहार की दृष्टि से वह था जब मनुष्य मिट्टी की झोपड़ियों में तो रहने लगा था परन्तु मिट्टी के बरतनों का व्यवहार वह नहीं करता था। वह आखेट करके अपना भोजन प्राप्त कर लेता था। ऐसे जीवन का एक स्तर क्वेटा से ४ मील दूर पर कील गुल मोहम्मद में प्राप्त हुआ है।[2] इसे पात्ररहित युग की संज्ञा दी जा सकती है।

प्रस्तर युग में मिट्टी के बर्तन

इस युग के पश्चात् का काल वह था जब मनुष्य हाथ से मिट्टी के बरतन बनाने लग गया था। ये बरतन प्रायः सादे रहते थे। भारत में कई स्थानों से इस प्रकार के मिट्टी के बरतन प्राप्त हुए हैं। जैसे ब्रह्मगिरि[3] क्वेटा[4] राना घुण्डई[5] इत्यादि। इन बरतनों की बनावट से यह पता चलता है कि मनुष्य ने इस युग में पेड़ की टहनियों से दौरी बनाना प्रारम्भ कर दिया था और मिट्टी को भली भाँति सानकर उसकी लोई बनाकर हाथ से बेल कर मिट्टी की लम्बी-लम्बी डोरी बना लेता था। उसी को गोलिया कर बरतन का आकार बनाता था (फलक १, क, मोहनजोदड़ो से प्राप्त) पुनः उसे हाथ से चिकना करके दबाकर स्थान-स्थान से उसको स्वरूप

---

[1] वी० डी० कृष्ण स्वामी—स्टोन एज इन इण्डिया—एनशण्ट इंडिया नं० ३ (१९४७) पृ० १२।

[2] फेयर सर्विस—अमेरिकन म्युजियम नावियप्ट्स नं० १५८७ सेप्टेम्बर १९५२ पृ० १८ तथा डी० एच० गारडन—एनशण्ट इण्डिया नं० १०, ११ (१९५४-५५) पृ० १६७।

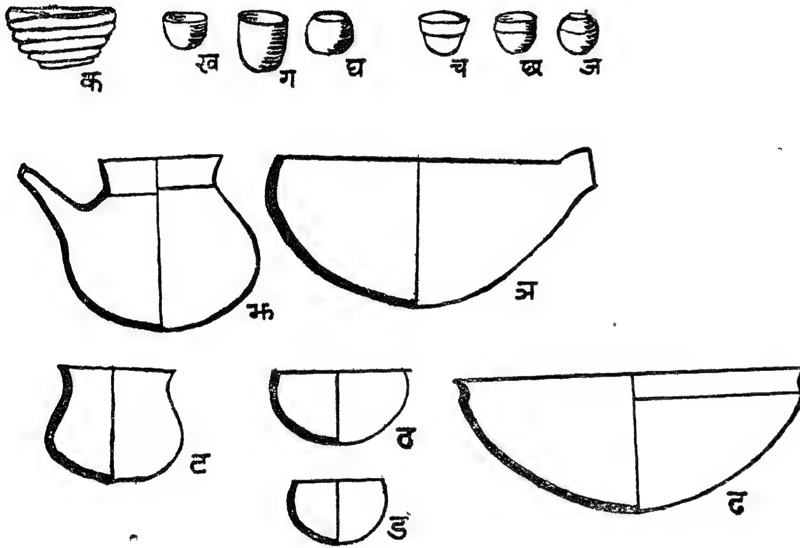
[3] कृष्णस्वामी—एनशण्ट इंडिया नं० ३ (१९४७) पृ० ३९।

[4] कील गुलमुहम्मद का द्वितीय स्तर गार्डन-उपर्युक्त पृ० १६७।

[5] रास—ए चाल कोलोयिक साइट इन नारदर्न बलूचिस्तान-जर्नल आफ नीयर ईस्टर्न स्टडीज—खण्ड ५ (१९४६) पृ० २८९ तथा आगे।

प्रदान करता था। इन बरतनों का आकार-प्रकार प्रायः पत्थर अथवा चमड़े के बरतनों की भाँति होता था। (फलक १ आकृति ख, ग, घ, च, छ, ज) मिट्टी को सानने के पूर्व भली भाँति पत्थरों से उसे उस युग का मनुष्य कूँचता था। इस प्रकार बरतन बनाकर उसे सूर्य की रश्मियों में सुखा लेता था। इन बरतनों के टूटे हुए कोर को देखने से उनके बनाने की विधि स्पष्ट हो जाती है। प्रायः ये बरतन गोल आकार के चौड़े मुँहवाले गोल पेंदी के बनते थे। जैसा हम फलक १ (ख) और उसके पश्चात् की आकृति[1] (ग) पर बने बरतनों में पाते हैं। फलक १ पर कुछ बरतन जो ब्रह्मगिरि से प्राप्त हुए हैं उनके भी नमूने हैं[2]। इन बरतनों को बनाने के लिए मिट्टी

फलक १



छिछले जलाशयों से कदाचित् लायी जाती थी। ऐसे स्थान की मिट्टी पानी में रहने से सड़ जाती थी। इस मिट्टी को अपने यहाँ लाकर पुनः लोंदा बना-बनाकर पृथ्वी पर वे लोग फेंकते थे जिसमें बुलबुले निकल जायँ। कील गुल मोहम्मद से जो बरतन मिले हैं उन पर साधारण चटाई के चिह्न हैं। इस छाप से[3] ऐसा ज्ञात होता है कि बरतन सूखने के पूर्व ये चटाई से दबाकर बराबर किये जाते थे। ब्रह्मगिरि में भी हाथ के बने मिट्टी के

---

[1] एस० ग्राहम ब्रेड वर्क्स—टीच योर सेल्फ आर्केआलोजी पृ० ७३।

[2] ह्वीलर-ब्रह्मगिरि एण्ड चन्द्रावली—एनशण्ट इण्डिया नं० ४ पृ० २२६ फिग० १९।

[3] फेयर सर्विस—उपर्युक्त पृ० १७, १८।

बरतनों में जो पूर्वकालीन हैं उनमें कुछ के ऊपर रेखाएँ चित्रित हैं जो पकाने के पश्चात् उन पर गेरू से बनायी गयी थीं। इन रेखाओं का रंग भूरा बैंगनी-सा ज्ञात होता है[१]। इनका काल २००० वर्ष ईसा से पूर्व निर्धारित किया गया है। गुजरात में हरिपुर और लंघनाज से जो बरतन प्राप्त हुए हैं[२] वे भूरे पीले रंग के हाथ के बने और सूर्य की किरणों में सुखाये हुए हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि इस युग के पूर्व ही कुछ खेती आरम्भ हो गयी थी तथा लोग पत्थर और हड्डी के अस्त्र व्यवहार में लाने लग गये थे[३]। धूप में सुखाये हुए ये बरतन जल्दी टूट जाते रहे होंगे और इनके बनाने में समय भी अधिक लगता रहा होगा जिससे मनुष्य को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता रहा होगा। ऐसा ज्ञात होता है कि किसी ने संयोगवश किसी बरतन को आग के पास छोड़ दिया होगा जिससे यह पता लगा होगा कि आग के पास यदि ये बरतन रख दिये जाँय तो ये पक जाते हैं। इस आविष्कार के पश्चात् कदाचित् पकाने के हेतु लकड़ी जलाकर बरतनों के चारों ओर रख देते रहे होंगे जैसा आज भी अफ्रीका में करते हैं। यह अनुमान करना अनुचित न होगा कि इस आविष्कार ने उस युग के मनुष्य के जीवन में एक क्रांति उत्पन्न कर दी होगी और आगे चलकर इसी आविष्कार ने आँवों को जन्म दिया होगा। ऐसा अनुमान होता है कि यह युग भी कुछ दिन चलता रहा। आँच में पकाये हुए हाथ के बने बरतन हलके भूरे रंग के और सिलेटी रंग के नागार्जुन कोण्डा से भी प्राप्त हुए हैं। परन्तु ये प्रस्तर युग के पीछे के काल के हैं।

चाक का आविष्कार

इस के पश्चात् हमें कुम्हार की चाक पर बने बरतन मिलने लगते हैं। श्री गार्डन की राय है कि यह चाक भारत में पश्चिम से आयी[४] परन्तु यह विचार सर्वमान्य नहीं हो सकता। पाश्चात्य विद्वानों के इस निश्चय ने कि जो भी आविष्कार हुए वे सब पश्चिम में हुए और पश्चिमवालों ने हमको सभ्यता के सब चिन्ह प्रदान किये हमारे मन को बड़ा सन्दिग्ध कर रखा है। ईरान तथा मेसोपोटामियाँ की सभ्यता को भारत की सिन्धुघाटी की

---

[१] ह्वीलर—ब्रह्मगिरि एण्ड चन्द्रावली—एनशण्ट इण्डिया नं० ४ पृ० २२२।

[२] सांखलिया—इनवेस्टिगेशन इन हिंस्टारिक आर्केआलोजी आफ गुजरात (१९४६) पृ० १३८।

[३] गार्डन—दी स्टोन इण्डस्ट्रीज आफ दी हालो सेन, एनशण्ट इण्डिया नं० ६ (१९५०) पृ० ७३।

[४] गार्डन—दी पाटरी इण्डस्ट्रीज आफ दी इण्डो इरानियन वार्डर एनशण्ट इन्डिया नं० १०, ११, पृ० १५९।

सभ्यता से प्राथमिकता देना उसी मनोवृत्ति का फल है। हम यह क्यों नहीं सोच सकते कि सिन्धुघाटी में चाक का प्रथम आविष्कार हुआ तथा सूर्य ने पूर्व से पश्चिम को प्रयाण किया, पश्चिम से पूर्व को नहीं या यों कहा जाय तो कदाचित् अनुचित न होगा कि प्रत्येक सभ्यता ने अलग-अलग जन्म लिया, अलग-अलग फली-फूली और अलग-अलग समय में आवश्यकतानुसार उसके आविष्कार हुए।[1] हमारे यहाँ तो ऐसी किंवदन्ती है कि असुरों ने चाक का सबसे पहिले आविष्कार किया[2] तथा इसी कारण मिट्टी के बने बरतनों का प्रेतकर्म में व्यवहार निषिद्ध है। सिन्धुघाटी की सभ्यता में नीचे के स्तरों से भी चाक के बने बरतन प्राप्त हुए हैं जिनको पिग्गट ने ईरान से प्राप्त बरतनों का समकालीन कहा है[3]। इससे भी यह सिद्ध होता है कि भारत में भी उसी काल में चाक का व्यवहार होने लगा था जब ईरान में हो रहा था।

इस चाक ने पूर्वकाल के मनुष्य के जीवन में जो परिवर्तन कर दिया होगा उसका हम अनुमान नहीं लगा सकते। इस अविष्कार को करनेवाला असुर कौन था यह हमें पता नहीं, न हम यही कह सकते हैं कि इसका आविष्कार प्रथम कहाँ हुआ। ऐसा विचार उठता है कि किसी मेधावी बालक ने मिट्टी का एक लोंदा खेल में बनाया होगा और उसे गोल करने के लिए उस पत्थर को जिस पर वह बना था घुमा दिया होगा। हाथ में पकड़े हुए मिट्टी के उस लोंदे को गोल होते देखकर वह बालक उछल पड़ा होगा और वृद्धजनों ने इस नयी खोज से लाभ उठाकर मिट्टी का लोंदा पत्थर पर रखकर और उसे घुमाकर बरतन बनाना प्रारम्भ किया होगा क्योंकि लोंदे के आकार में आज भी मिट्टी चाक पर रखी जाती है, परन्तु उस घूमती हुई चाक से बरतन को अलग करना बहुत कठिन रहा होगा और उसे पत्थर की छुरिका से ही काटकर निकालते रहे होंगे।[4] धागे से काटकर बरतन को अलग करना तो बहुत पीछे का आविष्कार ज्ञात होता है।

इस चाक को हमारे पीछे के जीवन में इतना महत्त्व दिया गया कि विवाह इत्यादि शुभ कर्मों में (उत्तरी भारत में) तो इसका पूजन भी प्रचलित हो गया तथा प्रत्येक विवाह इत्यादि कर्म इन नये बनाये हुए मिट्टी के बरतनों से प्रारम्भ होने लगे। यह प्रथा प्राचीन समय से चली आयी

[1] ग्लिन, ई, डानियल—ए हण्डरेड इअर्स आफ आर्केआलजी—पृ० २०८।

[2] श्री माधव अनन्त फडके—असुरों का उत्कर्षापकर्ष पृ० ३।

[3] पिग्गट्ट—ए न्यू प्री हिस्टारिक सिरामिक फ्राम बलूचिस्तान-एनशण्ट इण्डिया नं० ३ पृ० १३६, १४२

[4] पत्थर की छुरिका के चिह्न मोहनजोदड़ो के एक बरतन पर विद्यमान हैं—माके एक्सकवेशन एट मोहनजोदड़ो—पृ० १७९, प्लेट ५७—नं० १५,

हुई ज्ञात होती है जब चाक का हमारे सामाजिक जीवन में एक विशेष महत्त्व रहा होगा। वैदिक इण्डेक्स के अनुसार शतपथ में इसे कुलालचक्र की संज्ञा दी गयी है (शत० ११।८।१।१ वैदिक इण्डेक्स १।१७१)। मिट्टी के बरतनों के आकार प्रकार तो आवश्यकता ने हमें बनाना सिखाया क्योंकि आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है। घूमती हुई चाक पर कुम्हार अपनी अंगुलियों से सीधे खड़े बरतन जिस फुर्ती से बना देता है उसको देखकर हम आश्चर्यचकित रह जाते हैं, परन्तु उसके पीछे कितनी शताब्दियों का मनुष्य की असफलताओं का इतिहास है यह कभी हमारे ध्यान में नहीं आता।

परन्तु इस आविष्कार के पश्चात् भी सभी बरतन चाक से नहीं बनने लगे थे। कुछ हाथ से भी बनते थे जिसके उदाहरण हमें मोहनजोदड़ो और हडप्पा में प्राप्त होते हैं[1] तथा क्वेटा में भी मिलते हैं[2]। इस प्रकार के बरतन इन नगरों में नीचे के स्तरों से प्राप्त हुए हैं। इनके आकार-प्रकार चाक के बरतनों के सदृश हैं। परन्तु ये उतने सुघर नहीं हैं। इससे ऐसा समझना युक्तिसंगत ज्ञात होता है कि चाक के बने बरतन उस काल में बनने प्रारम्भ ही हुए होंगे और महँगे होने के कारण हाथ के बने बरतन भी चलते रहे होंगे।

प्रस्तर युग को तीन भागों में विद्वानों ने विभक्त किया है। एक तो वह जिसमें मनुष्य पत्थर को एक ओर से कुछ दूसरे पत्थर के सहारे तोड़कर चोखा कर लेता था। दूसरा वह काल जब इसी प्रकार कई स्थानों से पत्थर को चोखा करता था और उससे कुल्हाड़ी भी बनाता था तथा चोखा करने की इस क्रिया में जो पत्थर के टुकड़े निकलते थे उनको पुनः चोखा कर लेता था और उनसे तीर इत्यादि बनाता था। तीसरा युग वह था जिसमें इन छोटे टुकड़ों को भी वह व्यवहार में लाता था और पत्थर की कुल्हाड़ी को चिकना करने के लिये पत्थर पर रगड़ कर साफ करता था। भारत में प्रस्तर युग के बीचवाले काल के प्रस्तर-आयुधों के साथ कई स्थानों से मिट्टी के बरतनों के टुकड़े प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार के बरतन सबसे पूर्व ब्रूसफुट को पटपाड तथा कुरनूल से दुधिया (अगेट) तथा लहसुनिया के उपरत्न (चाल्सेडोनी) के बने हथियारों के साथ प्राप्त हुए थे। ये बरतन पीले भूरे रंग के हैं।[3] प्रस्तर युग के बीच के काल को दो भागों में बाँटा जा सकता है एक पहिले का काल और दूसरा पीछे का। लंघनाज से प्राप्त बरतन

[1] माके-उपर्युक्त पृ० १८०, वत्स एक्सकवेशन एट हड़प्पा—पृ० २७५।

[2] पिग्गट-ए न्यु हिस्टारिक सिरामिक फ्राम बलूचिस्तान-एनशन्ट इण्डिया नं० ३, पृ० १३६।

[3] वी० डी० कृष्ण स्वामी-प्राग्रेस इन प्रीहिस्ट्री एनशण्ट इण्डिया न० ९ पृ० ६७।

पहिले काल के हैं। दूसरे के गोदावरी की तलहटी में नासिक, जोरवे तथा बहाल (जो पूर्वी खान देश में है) से काली मिट्टी में पाषाण आयुधों के साथ प्राप्त काले रंग से चित्रित बरतन हैं। इनके साथ ताँबे की कुल्हाड़ी तथा आभूषण भी मिले हैं।[1] बहाल की खोदाई में श्री देशपाण्डेजी को इसी प्रकार की काली मिट्टी के ऊपर एक अलग सतह प्राप्त हुई है जिसमें उत्तरी काली चमकवाले बरतनों के टुकड़े मिले हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि काले रंग से चित्रित बरतन प्रायः ईसा पूर्व १००० से ७०० वर्ष के हैं। श्री देशपाण्डेजी को इसी प्रकार के चित्रित बरतन काली मिट्टी में पाषाण आयुधों के साथ नासिक जिले के भोजपुर नेवासा स्थान से भी प्राप्त हुए हैं जिससे इस बात की पुष्टि होती है कि इस प्रकार के बरतन इन हथियारों के युग में बनने लगे थे।

मध्यभारत के माहेश्वर से श्रीसांकलिया को भी इसी प्रकार के बरतन काली मिट्टी में पाषाण आयुधों के साथ-साथ प्राप्त हुए हैं।[2] इस प्रकार के बरतनों का विवरण दक्षिण भारत के मिट्टी के बरतनों के परिच्छेद में कुछ विशेष रूप से दिया गया है।

तीसरा प्रस्तर युग के उस काल में जिसमें चिकनी की हुई कुल्हाड़ी प्राप्त होती है तथा ताँबे की बनी कुल्हाड़ी और आभूषण भी प्राप्त होते हैं मिट्टी के बरतन बहुतायत से मिलते हैं। इसी प्रकार का एक स्तर हरिद्वार के वटादराबाद में प्राप्त हुआ है[3] जहाँ से पत्थर के हथियारों के साथ साथ ताँबे की कुल्हाड़ी इत्यादि भी मिली हैं[4]। इस स्थान के बरतन पीले लाल रंग के हैं। मैसूर के ब्रह्मगिरि, हैदराबाद के कुल्लूर तथा महाराष्ट्र के नासिक और जोरवे में भी इसी प्रकार के स्तर मिले हैं। यहाँ के मिट्टी के बरतनों पर काली चित्रकारी है। ऐसे ही एक बरतन से जोरवे में चिपटी ताँबे की कुल्हाड़ी तथा हाथ के कड़े मिले हैं। इस युग के बरतनों को देखने से ज्ञात होता है कि मनुष्य किस प्रकार कष्ट सहता हुआ प्रकृति से लड़ता हुआ आगे बढ़ा है और छोटे से छोटे आविष्कार के हेतु उसको कितना समय लगाना पड़ा है।

---

[1] वी० डी० कृष्ण स्वामी-उपर्युक्त प्लेट ११।

[2] श्री एच० डी० सांकलिया, वी सुब्बाराओ, एस० बी० देव-एक्सकवेशन्स इन दी नर्मदावाली-जरनल महाराजा सियाजी राव युनिवर्सिटी आफ वरोदा खण्ड २ न०२ (१९५३)

[3] वी० डी० कृष्ण स्वामी-प्राग्रेस इन प्री हिस्ट्री, एनशण्ट इण्डिया न० ९ पृ० ७१।

[4] वी० डी० कृष्णा स्वामी-उपर्युक्त-प्लेट ३१।

सिन्धुघाटी की सभ्यता के बरतन

सिन्धु सभ्यता के बर्तन

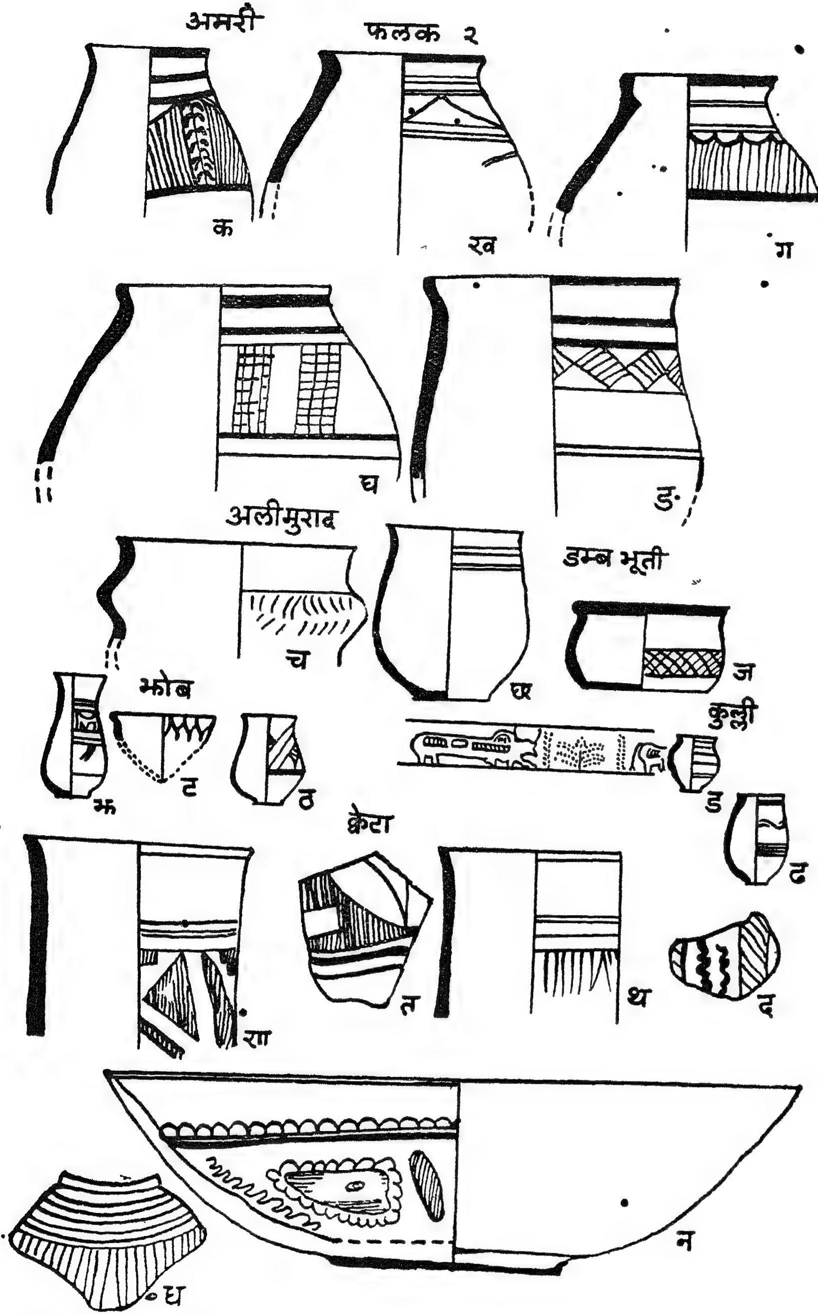
प्रस्तर युग के पश्चात् जो मिट्टी के बरतन भारत में प्राप्त हुए हैं उनमें सबसे प्राचीन बरतन तो क्वेटा के कील मोहम्मद, देह मोरासी, डम्ब सादात, केचीवेग इत्यादि स्थानों के हैं[1]। इनमें नीचे के स्तरों से तो हाथ के बने मिट्टी के पात्र मिले हैं। इन हाथ से बने मिट्टी के पात्रों की मिट्टी बहुत अच्छी तरह माड़ी नहीं गयी है और योंही लकड़ी का ढेर लगाकर पकाये हुए ज्ञात होते हैं। इस प्रकार के कुछ सादे बरतन हैं और कुछ चटाई से दबाए हुये प्रतीत होते हैं। ठीक इसके ऊपर चाक के बने हुए बरतन प्राप्त हुए हैं[2]। ये सिन्धुघाटी के अमरी के नीचे के प्राचीन स्तरों से प्राप्त बरतनों से बहुत मिलते हैं। क्वेटा के इन बरतनों पर एक प्रकार का मखनियाँ रंग का लेप है और उन पर केवल काले रंग से चित्रकारी की गयी है (फलक २ ण, त, थ, द, ध, न,) अमरी से प्राप्त बरतन की मिट्टी का रंग हल्के लाल रंग का है। इन पर हल्के लाल रंग या मखनियाँ रंग का लेप है। इस लेप को चिकना करने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया है।[3] इन पर काले रंग से चित्रकारी की गयी है परन्तु कहीं-कहीं लाल रंग का भी व्यवहार हुआ है। चित्रकारी के विषय 'ईंट का आकार' एक चतुष्कोण दूसरे के भीतर, चोटी का आकार, सीढ़ी का आकार इत्यादि हैं, (फलक २ क, ख, ग, घ, ङ) ये ही आकार क्वेटा के बरतनों पर भी मिलते हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि यह चित्रकारी काले रंग के लिए काजल और लाल रंग के लिए गेरू में गोंद मिलाकर की गयी है। सफेद लेप खड़िया का है[4] तथा लाल गेरू का। इन बरतनों के आकार पीछे के मोहनजोदड़ो के आकारों से

[1] फेयर सरविस—अमेरिकन म्युजियम नोविटेट्स (सितम्बर १९५२) न० १५८७ पृ० ३ तथा आगे।

[2] गार्डन—दी पाटरी इण्डस्ट्रीज आफ दी इण्डो इरानियन व रडर-एनशण्ट इण्डिया, न० १०-११ पृ० १६०।

[3] एन० जी० मजूमदार—एक्सप्लोरेशन्स इन सिन्ध, आर्कैआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया मेमायर्स नं० ४८, पृ० २७।

[4] ह्वीलर—हड़प्पा (१९४६) एनशण्ट इण्डिया नं० ३, पृ० १०१।



भिन्न प्रतीत होते हैं। पुरवे तथा कसोरों में किसी की कोर नहीं बनायी गयी है। या तो ये बरतन सीधे खड़े आकार के हैं या गोल शरीर के फैले

हुए। मुँह इनके खिले हुए हैं। आकार में भी अमरी के बरतन क्वेटा के बरतनों से बहुत कुछ मिलते हुए हैं।

कला की दृष्टि से नुन्दारा के प्राथमिक बरतन अमरी के समान ही चित्रित होते हुए भी आकार-प्रकार में इनसे कुछ निखरे हुए प्रतीत होते हैं। नुन्दारा के बरतनों पर लाल लेप है तथा काली लकीरों से चित्रण किया गया है। नल से प्राप्त बरतनों पर मखनिया रंग का लेप है तथा काली रेखाओं से चित्रण किया गया है, परन्तु लाल, पीले तथा नीले रंगों का भी चित्रण करने में प्रयोग किया गया है।[1] कलात के पास से प्राप्त टेगाऊ के बरतन भी नुन्दारा के बरतनों की भाँति चित्रित हैं।

झोबकी तलहटी से जो बरतन प्राप्त हुए हैं अमरी के बरतनों से मिलते हुए ही हैं। कुल्ली मेही से प्राप्त बरतन की चित्रकारी झोब की तलहटी से प्राप्त बरतनों से[2] तथा हड़प्पा के बरतनों की चित्रकारी से मिलती हुई है। यहाँ के बरतनों को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि ये दो स्तर के हैं। पूर्व-कालीन बरतन झोब बरतनों से मिलते हैं और दूसरे स्तर के हड़प्पा से। जैसा कि पहिले लिखा जा चुका है इन पर बने पीपल के पेड़ तथा पशुओं के चित्र हड़प्पा से मिले बरतनों के चित्रों से बहुत मिलते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि एक ही कुल के चित्रकारों ने दोनों स्थानों के बरतनों पर चित्रकारी की है।

मोहनजोदड़ो इत्यादि से प्राप्त बरतन

उपर्युक्त सभी स्थानों से जो बरतन मिले हैं वे इतने टूटे हुए हैं कि उनके आकार-प्रकार का भली भाँति अध्ययन बहुत सम्भव नहीं है। पूर्ण तथा अच्छी दशा में तो बरतन हड़प्पा, कोट डीजी[3], मोहनजोदड़ो और रंगपुर, लोथल स्थानों से ही प्राप्त हुए हैं जिनका कला की दृष्टि से पूर्ण अध्ययन हो सकता है। मिस्र में प्रायः इसी युग में (३०००-१००० ई० पू०) जिस प्रकार मिट्टी के बरतन बनते थे वे वहाँ की कब्रों की दीवार पैर बने प्राप्त हुए हैं।[4] हड़प्पा इत्यादि स्थानों से प्राप्त बरतनों की मिट्टी तीन प्रकार की है। कुछ बरतनों की मिट्टी सिलेटी रंग की है। इसी प्रकार के बरतन कुछ केटा की ओर

---

[1] पिग्गट—दी क्रानालाजी आफ प्री—हिस्टारिक नार्थ वेस्ट इण्डिया, एनशण्ट इण्डिया नं०, १ पृ० ११।

[2] गार्डन-उपर्युक्त-पृ० १६२।

[3] सैयद हसनत अहमद-ए प्री—हडप्पन सिविलिजेशन-दी लीडर १२ मई १९५८ वीकली पृ० १।

[4] ई० रोजेनथाल-पाटरी सरेमिक्स-पृ० १४।

भी पाये गये हैं[1]। यह रंग पकी हुई मिट्टी का नहीं है अपितु मिट्टी के बतरन को बन्द भट्ठी में लकड़ी, गोहरी, ऊँट की लेंड़ी के साथ धूएँ में पकाने के कारण हो गया है। उद्‌जन के अभाव में मिट्टी का रंग ऐसा रह जाता है। बरतनों में कहीं कम और कहीं अधिक आँच लगने से, स्थान स्थान पर भेद भी होता है। इसी कारण आँवें में से सभी बरतन एक रंग के नहीं उतरते। इसी नियम के अनुसार यहाँ के कुछ बरतनों का रंग हल्का सिलेटी है तो कुछ का गहरा सिलेटी[2]। इस प्रकार के बरतन मोहनजोदड़ो में नीचे के स्तरों से अधिक पाये गये हैं। इन बरतनों पर ऊपर की ओर इनको चमकाने के हेतु कदाचित् किसी प्रकार का तेल लगाकर तथा बरतन को कपड़े से रगड़कर आँवे में पकाया गया है। यह रंग आवें में आज भी ऊँट की लेंड़, बेंर, गोबर की चिपड़ी इत्यादि से धूआँ करके भट्टी में उत्पन्न किया जाता है। इसी प्रकार के बरतन अनाउ,[3] निनवे[4] तथा सुमेर में[5] भी प्राप्त हुए हैं।

दूसरे प्रकार के बरतन वे हैं जिनकी मिट्टी पकाने पर गुलाबी रंग की हो गयी है। इन बरतनों की मिट्टी को पकाने के पूर्व भलीभाँति न सानने के कारण ये पकते समय स्थान-स्थान से चिटक गये हैं। फिर भी इस मिट्टी से बड़े सुन्दर आकार के पात्र बनाये गए हैं। हाथ के बने मिट्टी के इन पात्रों पर सादी चित्रकारी भी बड़ी मोहक है। कुछ इस प्रकार के बरतन केटा क्षेत्र से भी पाये गए हैं[6] (फलक २ ।)

तीसरे प्रकार के बरतन वे हैं जिनकी मिट्टी पकने पर श्वेत गुलाबी रंग की हो गयी है। कदाचित् यह रंग मिट्टी में चूना मिलाने के कारण आ गया है। वह मिट्टी खूब सनी और ऐसा ज्ञात होता है कि खूब सड़ायी तथा माड़ी गयी है। यह मिट्टी बहुत सुन्दर-सुन्दर बरतनों के बनाने में व्यवहार में आयी है और ऊपर के स्तरों में इस मिट्टी के बरतनों के प्राप्त होने के कारण यह धारणा होती है कि पीछे कला के उत्तरोत्तर विकास के फलस्वरूप इस प्रकार की मिट्टी बरतन बनाने के लिए व्यवहार में आने लगी होगी।

---

[1] पिग्गट—दी क्रानालाजी आफ प्री—हिस्टारिक इण्डिया—एनशण्ट इण्डिया नं० १ पृ० ११।

[2] माके-फरदर एक्सकवेशन्स एट मोहनजोदड़ो—पृ० १७५।

[3] गार्डन चाइल्डे—एण्टिक्वेरी—सितम्बर १९३२, पृ० ३८४।

[4] मलोवन—दी टाइम्स-सितम्बर १९३०, पृ० ६।

[5] माके—एन्थ्रापालेजी मेमायर्स, फील्ड म्युजियम, शिकागो-ख० १, पृ० १४०।

[6] पिग्गट—ए न्यू प्रीहिस्टारिक पाटरी फ्राम बलूचिस्तान-एनशण्ट इण्डिया नं ३, पृ० १३६।

मिट्टी में मेल

ऐसा अनुमान होता है कि इस मिट्टी में चूना तथा अबरक मिली बालू मिलायी जाती थी। चूने के टुकड़े तो कुछ बरतनों में से स्पष्ट रूप से प्राप्त हुए हैं[1]। इसी कारण ऐसी धारणा होती है। अबरक मिट्टी में चमक रही है और बालू के कण भी मिट्टी में दिखायी देते हैं। अबरक तो सिन्धु नदी के तट की बालू में प्राकृतिक रूप से पाया जाता है। इसमें थोड़ी भी बालू मिट्टी में माड़ने के समय मिला देने से वह दिखाई देता रहेगा। इस प्रकार की बालू को मिलाने से दो लाभ होते हैं। एक तो बरतन बनाते समय मिट्टी शीघ्र सूखती नहीं तथा दूसरा इस मिट्टी के बरतन को सुखाते समय ये चिटकते नहीं।

मिट्टी में चूना भारत में ही इस काल में नहीं मिलाया गया है अपितु और देशों में भी जैसे सुमेर में अल उबाइड तथा जमदेत नस्र समय में[2] तथा प्राचीन प्री डाइनिस्टिक मिस्र में।[3] चूने से बरतन थोड़ी आँच में भी अच्छा पकता है। आज भी शीशे के बरतन बनाने के लिए चूने का प्रयोग बालू के साथ किया जाता है जिससे थोड़ी ही आँच में काम चल जाय।

सिन्धु-घाटी का चाक

सिन्धुघाटी के बरतन कुछ को छोड़कर चाक पर बने हुए हैं। यह चाक कदाचित् उतनी शीघ्रता से नहीं घूमती थी जैसी आज की घूमती हैं, परन्तु थी वह इसी प्रकार की, अर्थात् ऊपर एक गोल पत्थर जिसमें नीचे की ओर एक गड्ढा तथा नीचे एक छोटा गोल पत्थर जिसमें लकड़ी की एक खूँटी। ऊपर का पत्थर नीचे के पत्थर की खूँटी पर घूमता था। ऊपर के पत्थर का गड्ढा कदाचित् बहुत सफाई से न बनने के कारण उतनी शीघ्रता से नहीं घूम पाता रहा होगा। चाक पत्थरों की भाँति के दो पत्थर मोहनजोदड़ो से प्राप्त हुए हैं।[4] ऊपर के भाग के पत्थर को घुमाने के हेतु नीचे का पत्थर पैर से घुमाया जाता रहा होगा। हो सकता है इस कारण भी चाक वेग से न घूमता रहा हो। आज भी पंजाब में कुछ स्थानों पर इसी प्रकार चाक को घुमाते हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि घूमते हुए चाक पर की मिट्टी को अँगूठे और अँगुलियों में पानी लगा दबा कर बरतन बनाए जाते थे।

---

[1] मांके—फरदर एक्सकवेशन्स एट मोहनजोदाड़ो, पृ० १७६।

[2] हाल एण्ड वूली—अल उबाईड-पृ० १६२।

[3] मांके-आन्थ्रापालिजिकल मेमायर्स-फील्ड म्युजियम, शिकागो, ख० १, पृ० २३३।

[4] मांके-फरदर एक्सकवेशन्स चित्र-१०४-फिगर १, २।

बरतनों का छीलना

यहाँ के बरतनों को चाक पर उतारने के पूर्व उनको छुरी से छीला भी गया है जैसा कि आज भी बड़े बरतनों के आकार बनाने के हेतु किया जाता है। यह छिलाई ऊपर से नीचे की ओर की गयी है; आज की भाँति गोलाई में नहीं। अनुमानतः इस कार्य के हेतु पत्थर की चौड़ी छुरी व्यवहार में लायी गयी है। बरतन पर इसी प्रकार की छिलाई मिस्र[१] और क्रीट में[२] भी हुई है। यह कार्य बरतन के आकार को शुद्ध करने के हेतु किया जाता था।

भट्ठी

सिन्धुघाटी से प्राप्त बरतनों को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि बरतन नियन्त्रित आँच में पकाए गए हैं क्योंकि मिट्टी का रंग बरतन में सब स्थान पर एक-सा है। ऐसा तभी सम्भव होता है जब आँच पर कुम्हार का पूर्ण अधिकार हो अर्थात् वह जब चाहे जितनी आँच दे सके। कुछ बरतन जो अधिक पके मिले हैं, वे नगण्य हैं। उनका रंग हरा हो गया है जो कदाचित् लोहे तथा चूने के मिश्रण के फलस्वरूप प्रकट हुआ है।

बरतनों को पकाने के हेतु जो भट्ठी बनायी जाती थी उसके नमूने भी हमें मोहनजोदड़ो[३] तथा हड़प्पा[४] में प्राप्त हुए हैं। यह प्रायः गोल आकार की है तथा दो खण्ड में बनी हुई है, एक नीचे का भाग तथा दूसरा ऊपर का। नीचे का भाग लकड़ी की आग देने के काम में आता होगा और ऊपर का भाग बरतन रखने के। नीचे और ऊपर के बीच में गोल-गोल छिद्र बने हुए हैं जिनमें आँच ऊपर लग सके। नीचे का हिस्सा जिसमें लकड़ी जलायी जाती थी,[५] ईंटों से गोल आकार का बना हुआ है जिसमें आग की गरमी सीधे ऊपर जाय। ऊपर का भाग गोल मिट्टी का बना है तथा उसमें भी ऊपर की ओर छिद्र है जिससे आँच ऊपर खिंच सके। इसी प्रकार की भट्ठी सुमेर के जमदेत नस्र में प्राप्त हुई है।[६] कीश में जो भट्ठियाँ मिली हैं वे चतुष्कोण हैं[७]। इससे यह सिद्ध होता है कि इस प्रकार की भट्ठी प्रायः ईसा से

---

[१] ब्रटन-काऊ एण्ड वडरी-ख० २, पृ० ४।

[२] इवान्स-पालिश आफ माइनास-ख० १, पृ० ७५।

[३] मांके-फरदर एक्सकवेशन्स-प्लेट-४०, फिगर-बी० डी०

[४] वत्स-एक्सकवेशन्स एट हरप्पा-पृ० ४७०, ४७४।

[५] मोहनजोदाड़ो से लकड़ी की राख प्राप्त हुई है-मांके-फरदर एक्सकवेशन्स-पृ० १०२

[६] वेतेलाँ-मेमुआर डेलिगासियों आंपेर्स-टोम २०, प्लांश ३, फिग्यूर १६।

[७] मांके-फील्ड अन्थ्रापालोजी लीफलेट नं० ११, फील्ड म्युजियम शिकागो, प्लेट १२।

३००० वर्ष पूर्व भी मिट्टी के बरतन बनाने के काम में आती थीं। हड़प्पा से प्राप्त भट्टियाँ तो और भी सुन्दर हैं। इनमें कुछ तो नाशपाती के आकार की हैं; परन्तु ये कदाचित् मिट्टी के बरतन पकाने के हेतु नहीं व्यवहार की जाती थीं क्योंकि ये बहुत छोटी हैं।

इस प्रकार भट्टी में बरतन पकाने में आँच का नियन्त्रण पूर्णरूप से हो सकता है, बरतन एक सा पकता है और ईंधन की भी बचत होती है। यदि बरतन को सिलेटी रंग का करना हो तो हवा के छिद्रों को बन्द किया जा सकता है[1]। आज भी इसी प्रकार की भट्टी चुनार के बरतनों पर ऊपर की चमक देने में लायी जाती है। आगे चलकर हम देखेंगे कि इस प्रकार की भट्टी प्राग्मौर्य तथा मौर्यकाल के बरतनों के बनाने में कितनी सहायक सिद्ध हुई। मांके का मत है कि आजकल सिंध में जो खुले आँवें बनते हैं उनमें भी कुम्हार वैसे ही बरतन बना लेते हैं जैसे प्राचीन समय में बन्द भट्टियों में बनते थे[2]। परन्तु बात ऐसी नहीं है। आज के कितने ही बरतनों पर काले धब्बे पड़ जाते हैं और आँच बराबर न लगने के कारण वे शीघ्रता से टूट भी जाते हैं। भट्टी के छिद्रों को ढकने के हेतु बरतन के टुकड़े व्यवहार में आते थे। ऐसे टुकड़े भट्टियों के पास ही प्राप्त हुए हैं[3]। कदाचित् इनको छिद्रों पर रखकर मिट्टी और राखी से लस देते थे जिससे धुँआं बाहर न जाय। परन्तु यह तभी किया जाता होगा जब सिलेटी रंग का बरतन निकालना होता होगा। ऊपर से भट्टी के मुँह को पत्थर से ढँककर मिट्टी से बन्द करके और उस पर राखी डाल देते होंगे जिसमें भीतर की आग भीतर ही रह जाय।

रंगाई

ऐसा अनुमान होता है कि सिन्धुघाटी में बरतनों की सुन्दरता बढ़ाने तथा उनके दोष को छिपाने के हेतु उन पर रंग का लेप चढ़ाया गया होगा। यह लेप प्रायः गोंद मिलाकर बरतन पकाने के पश्चात् लगाया हुआ प्रतीत होता है। कुछ बरतनों पर हल्का मखनिया रंग का लेप लगाया गया है, लेकिन अधिक बरतनों पर तो गेरू का रंग गोंद मिलाकर लगाया गया है। मखनियाँ रंग कदाचित् खड़िया का है। बहुत थोड़े बरतनों पर बैंगनी रंग का भी लेप दिखायी देता है। यह रंग कैसे बनता था यह ज्ञात नहीं होता। कुछ बरतनों पर दो रंग के लेप दिये गये हैं, कुछ दूर पर लाल और

---

[1] हरिसन-पाट्स एण्ड पान्स, पृ० २२।

[2] मांके-फरदर एक्कवेशन्स, पृ० १७७।

[3] मांके-उपर्युक्त पृ० १७८।

फिर मखनियाँ[1] कड़े बरतनों की पेंदी की ओर का भाग सादा है जैसे आज-कल के कुण्डों के अधोभाग का रहता है। कदाचित् ये बरतन पृथ्वी में गाड़कर रखे जाते थे, इस कारण इनके नीचे का भाग सादा छोड़ दिया गया है। इन बरतनों को पृथ्वी पर रखकर रंगते थे जैसा इनके रंग के फैलाव से ज्ञात होता है। मांके का यह कहना है कि इनको चाक पर ही रंगते थे[2] कुछ उपयुक्त नहीं ज्ञात होता क्योंकि ऐसा करने की आवश्यकता ही नहीं थी। कुछ बरतनों के लेप से ऐसा अनुमान होता है कि सिधुघाटी के कुम्हार इस बात का भी प्रयत्न कर रहे थे कि बरतन पानी न सोखे[3] परन्तु इस कार्य में वे सफल न हो सके। मोटा पलस्तर देने पर भी बरतन पानी सोखते ही रहे। ऐसा अनुमान होता है कि कुछ बरतनों पर आम की छाल को कापिस (एक प्रकार की मिट्टी जिसमें लोहे का अंश रहता है) में मिलाकर इसी ध्येय से पकाने के पहिले लगाया गया है। कुछ को पकाने के पश्चात् शीशे के चूरे के घोल में डालकर पुनः पकाया गया है जिससे उन पर चमकीला लेप चुनार के बरतनों की भाँति चढ़ गया है। ऐसे टुकड़े बहुत कम हैं जिनसे अनुमान होता है कि बरतन मोटे होने के कारण इस क्रिया में अधिक टूटते होंगे इस कारण इस पद्धति को अधिक प्रोत्साहन नहीं मिला होगा।

पात्रों पर चित्रकारी

यहाँ के बरतनों पर की चित्रकारी प्रायः काजल से की हुई प्रतीत होती है। इसे पानी में गोंद के साथ मिलाकर बरतनों पर लगाते थे। ऐसा ज्ञात होता है कि कभी-कभी सिंदूर और दूसरे रंगों के हेतु विविध धातुओं का भी व्यवहार करते थे। रंग पतला होने के कारण यह बरतन की मिट्टी तक ऊपर के लेप को पार करके पहुँच गया है। इसे लगाने के लिए पतली कूँची व्यवहार में लाई गई है। ऐसा ज्ञात होता है कि महीन लकीरें कदाचित् सरकण्डे की कलम से बनायी हुई हैं। सरकण्डे की कलम का व्यवहार क्रीट में इसी काल या इसके कुछ ही पीछे के काल में मिलता है। एक पात्र पर सरकण्डे की लेखनी से लिखा हुआ एक लेख भी प्राप्त हुआ है[4]। हड़प्पा में भी कई पात्रों पर सिंधुघाटी की सभ्यता के अक्षरों के लेख प्राप्त होते हैं। वे किसी लेखनी द्वारा लिखे ज्ञात होते हैं। इनमें कुछ तो ऐसे हैं जो

---

[1] मांके-उपर्युक्त पृ० १७९।
[2] मांके-उपर्युक्त पृ० १७९।
[3] मांके-उपर्युक्त पृ० २१२।
[4] ईवान्स-पैलेस आफ माइनौस, खं० ३, पृ० ४२२, ४२४।

बिना फाड़ी हुई लेखनी से लिखे गए[1] हैं और कुछ ऐसे हैं जो नोक फाड़कर बनायी हुई लेखनी से लिखे गये प्रतीत होते हैं[2]। इससे यह सिद्ध होता है कि दोनों प्रकार की लेखनियों का व्यवहार सिन्धु सभ्यता में भी होता था। बरतनों के नीचे के भाग सादे हैं और ग्रीवा से लेकर बरतन के मध्य भाग तक ही चित्रकारी सीमित रखी गई है। जो आकार बनाये गये हैं एक परिधि के भीतर। परिधि की चौड़ी रेखाएँ एक भाग को दूसरे से अलग करती हैं। प्रायः ग्रीवा से नीचे का भाग दो हिस्सों में बँटा हुआ मिलता है। इनमें अलग-अलग आकार बनाये गये हैं।

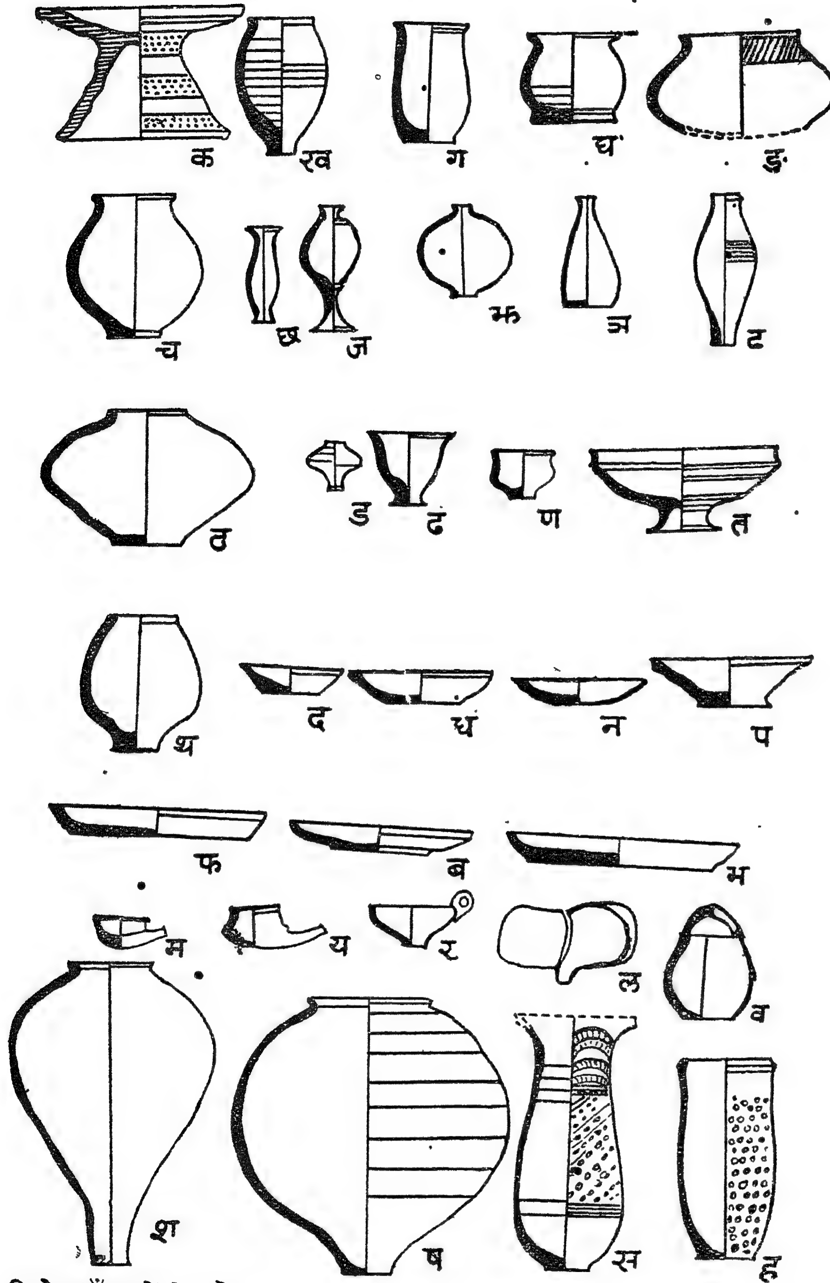
चित्रकारी का विषय ध्यानपूर्वक अध्ययन करने से ऐसा अनुमान होता है कि कुम्हार मनुष्य की आकृति बहुत कम चित्रित करते थे[3]। यों सिंधुघाटी की सभ्यता में मनुष्य की आकृति की अनेक मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं और एक पात्र के टुकड़े पर मनुष्य की आकृति किसी पतली लेखनी से बनी हुई भी प्राप्त हुई है[4] परन्तु चित्रकारी में इसका प्रायः अभाव ही रहा। केवल किसी-किसी पात्र के टुकड़े पर आँख के सदृश चिह्न बने प्राप्त होते हैं[5]। पशुओं की भी आकृति अपेक्षाकृत कम ही बनी। इनमें मुख्य तो आइवेक्स की[6] है। बारहसिंघे, मछली, वृषभ, बत्तक इत्यादि की आकृतियाँ (फलक ४, ब, भ, म, य) भी प्राप्त होती हैं[7]। वृक्षों में पीपल के पेड़, केले के पेड़, पीपल के पत्ते आदि हैं,[8] विशेष रूप से केले के पेड़ पीछे राजपूत कला की चित्रकारी में भी ऐसे ही दिखाये गये हैं, जैसे मोहनजोदड़ों में मिलते हैं।

मृत्पात्रों पर चित्रकारी सर्वत्र ही रेखांकनों द्वारा की गयी है। आड़ी-बेड़ी रेखाओं द्वारा अनेक प्रकार के सुन्दर-सुन्दर नमूने यहाँ बने हुए हैं। कहीं-कहीं इन्हीं रेखाओं द्वारा नदियाँ भी चित्रित की गयी हैं[9] (फलक ४ व)। चित्रकारी जो भी सिंधुघाटी की सभ्यता से प्राप्त होती है वह ऐसे रंगों से की गयी है

---

[1] वत्स—एक्सकवेशन्स एट हड़प्पा-खण्ड २, प्लेट—१०२, फिगर—११, २२, २७।
[2] वत्स-उपर्युक्त प्लेट—१०२, फिगर—१७, १८।
[3] वत्स—एक्सकवेशन्स एट हड़प्पा-चित्र ६९, नं० ३, २६, १८।
[4] वत्स-उपर्युक्त-चित्र १०४, नं० ७५।
[5] मांके—फरदर एक्सकवेशन्स एट मोहनजोदड़ो-चित्र ६८, नं० २१, २४।
[6] मांके-उपर्युक्त-पृष्ठ २१७।
[7] वत्स-उपर्युक्त-चित्र ६५, नं० १७ [मत्स्य] चित्र ६७, नं० ५३ [वृषभ] नं० ६९, बारहसिंघा इत्यादि।
[8] मांके-फरदर एक्सकवेशन्स एट मोहनजोदड़ो, चित्र ७०, नं० २८ (पीपल) चित्र ६९, नं० १२ (केला) चित्र ६०, नं० २५ (नीम)।
[9] मांके-उपर्युक्त चित्र-६८, नं० २५।

फलक ३



कि रेखाएँ पात्रों में से अलग प्रस्फुटित होती दिखाई देती हैं तथा पात्रों के आकार को ध्यान में रखते हुए की गयी हैं। जितना स्थान मिला है

चित्रकारी भी की गयी है जिससे वे पात्र का एक अंग प्रतीत होती हैं। ऐसा अनुमान है कि प्राचीनतम बरतन पर की चटाई की रेखाओं की नकल करने की प्रवृत्ति ने पीछे की पात्र पर की चित्रकारी को जन्म दिया। मृत्पात्रों पर की इन रेखाओं में एक विचित्र स्पन्दन है, एक अद्भुत गति है जो हृदय को अविलम्ब प्रभावित करती है। सिंधुघाटी में लोग प्रायः वास्तविक सांसारिक वस्तुओं के अंकन से सांकेतिक आकृतियों को अधिक महत्त्व देते थे। एक दूसरे को काटते हुए वृत्त के आकार कई बर्तनों पर चित्रित किये गये हैं। इन वृत्तों को कम्पास से बनाते थे ऐसा ज्ञात होता है क्योंकि कम्पास का निशान कतिपय बर्तनों पर दिखाई देता है।[1] इस प्रकार की कारीगरी में गेहूँ के दाने की भाँति के आकार बीच-बीच में बन जाते हैं[2]। ऐसा अनुमान है कि कम्पास का व्यवहार केवल भारतीय सभ्यता में उस काल में हुआ। घड़ियाल के चमड़े के ऊपर की दिउली भी कुछ बर्तनों पर अंकित की गई है।[3] कुछ बर्तनों पर खोदाई करके भी आकार बनाने का प्रयत्न किया गया है।

सिन्धुघाटी के बर्तनों के आकार

प्रायः बर्तनों के आकार-प्रकार मिट्टी की मुलायमियत पर तथा मनुष्यों की रुचि और आवश्यकता पर निर्धारित रहते हैं। सिन्धु घाटी के बर्तनों के आकार-प्रकार को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि प्रायः लोग गोलाई लिए हुए बर्तन पसन्द करते थे। एकदम सीधे अथवा कोने निकले हुए बर्तन यहाँ नहीं के बराबर प्राप्त हुए हैं। कन्धे और पेट के बीच के भाग में कोने निकले हुए बर्तन जैसे कीश, सूसा या मूसियन में प्राप्त हुए हैं यहाँ नहीं मिले हैं। बर्तनों की पेंदी चिपटी भी बनती थी तथा गोल भी। बर्तनों को रखने के हेतु नीचे की गेंडुरी भी मिली है। कुछ बर्तनों की छोटी पेंदी को देखकर ऐसा अनुमान होता है कि बड़े कुण्डे की भाँति ये बर्तन पृथ्वी में गाड़कर रखे जाते होंगे[4] जैसे अनाज के कुण्डे आज भी गाड़कर रखे जाते हैं। छोटे मुँह के बर्तन कम मिले हैं परन्तु इनका नितान्त अभाव नहीं है[5]। मूठदार बर्तन भी प्राप्त हुए हैं[6] जो आज-कल के प्याले की भाँति

---

[1] मांके-फरदर० एक्सकवेशन्स एट मोहनजोदड़ो-पृ० २२१।

[2] मांके-फरदर० चित्र ६४-नं० ४।

[3] मांके-फरदर० चित्र ६९ नं० १३, १५।

[4] मांके-फरदर० चित्र ६६ नं० ३१ इत्यादि।

[5] मांके-फरदर० चित्र ६६ नं० ४, ५, ६, ७ इत्यादि।

[6] मांके-फरदर० चित्र ६७ नं० १४, १५।

ज्ञात होते हैं। मिट्टी के बने दीवट की भाँति की फल रखने की चौकियाँ भी प्राप्त हुई हैं जो बीच में सँकरी तथा नीचे और ऊपर फैली हुई हैं। कदाचित् इन चौकियों पर देवताओं को नैवेद्य अर्पित किया जाता होगा। (फलक ४, क) ये चौकियाँ प्राय: दो भागों में बनाई गयी हैं, ऊपर का भाग अलग और नीचे का पावा अलग। इनको बड़ा पक्का जोड़ा गया है। जो टूटी हुई चौकियाँ प्राप्त हुई हैं वे भी उस स्थान से नहीं टूटी हैं जहाँ से जोड़ी गयी होंगी[1]। लम्बी सुराही की भाँति के बर्तन अधिक मात्रा में प्राप्त हुए हैं। इनकी पेंदी छोटी है, बीच में से फैले हुए हैं तथा मुँह सँकरा हैं[2]। ऐसा ज्ञात होता है कि ये पात्र पानी रखने के काम में आते रहे होंगे (फलक ३ ट)।

दूसरे आकार के बर्तन जो प्राप्त हुए हैं वे आज के ग्लास के ढंग के हैं। इनका मुँह फैला हुआ है, बीच का भाग प्राय: सीधा है तथा गोलाई बहुत कम है और नीचे की पेंदी चौड़ी है। कदाचित् इस प्रकार के छोटे ग्लासों से पानी अथवा मद्य पिया जाता रहा होगा। (फलक ४ ग)

छोटे बर्तनों के बीच का व्यास २ इंच और ऊँचाई ५ इंच है। इनसे बड़े बर्तनों की ऊँचाई ६ इंच, बीच का व्यास २॥ इंच और मुँह का व्यास २ इंच है। इनके सुन्दर आकार को देखकर मिस्र के प्राचीन बर्तनों का स्मरण हो आता है[3]। इनके आकार में एक अपना लोच है। कुछ ऐसी हंडिया प्राप्त हुई हैं जो नीचे से चौड़ी तथा ऊपर आकर संकरी हो गई हैं। इनका आकार भारी भरकम है। कुछ की पेंदी इनमें चिपटी है (फलक ३ ठ) तथा कुछ की पेंदी अलग से बनाकर जोड़ी हुई ज्ञात होती हैं[4]। (फलक ३, घ)।

प्राय: ८ इंच या ६ इंच ऊँचे ऐसे बर्तन भी प्राप्त हुए हैं जो सम्भवत: मसाले रखने के काम में आते रहे होंगे। ये बर्तन नीचे से पतले और ऊपर से चौड़े हैं। इनकी ग्रीवा बनाने के हेतु ऊपर से तनिक भीतर की ओर दबा दिया गया है। इनके आकार बिलकुल ही आधुनिक से प्रतीत होते हैं।

गोल पेंदी की छोटी और बड़ी हंड़िया भी प्राप्त हुई है। नीचे से फैली हुई ये हँड़ियाँ आजकल की हँड़ियों से भिन्न नहीं हैं और कदाचित् आज की भाँति भोजन पकाने के ही काम में आती होंगी (फलक ३, ङ)।

---

[1] मांके-फरदर० पृ० १९१।

[2] मांके-फरदर० चित्र ५२, नं० ९।

[3] हनी-डब्लू० बी०-दी आर्ट आफ दी पाटर चित्र १।

[4] मांके-फरदर एक्सकवेशन्स० चित्र ५३ नं० २८, ३३ इत्यादि।

पेंदीदार घड़े भी यहाँ प्राप्त हुए हैं। इनकी पेंदी और मुँह के वृत्त के बराबर होने से ये देखने में बड़े सुन्दर प्रतीत होते हैं। बीच का गोल आकार पूर्ण वृत्ताकार है (फलक ३, च)।

कुछ छोटे लम्बे पात्र भी ऐसे प्राप्त हुए हैं जो कदाचित् मद्यपान के काम में आते थे। इनका आकार यूनान के बने पात्रों से बहुत कुछ मिलता हुआ है। छोटे मुँह के कई प्रकार के बर्तन प्राप्त हुए हैं जो कदाचित् कोई विशेष महत्त्व के तरल पदार्थ रखने के काम आते थे। मुँह छोटे इस कारण बनाये जाते थे कि एक समय में बहुत अधिक पदार्थ उलटने पर न निकले (फलक ३, ज, झ, ञ, ट)। ग्रीवा रहित हँड़िया बीच से फूली हुई भी यहाँ से प्राप्त हुई है। इसका आकार नितान्त भिन्न है। इस प्रकार की छोटी-बड़ी कई हँड़ियाँ प्राप्त हुई हैं। छोटी हँड़ियों में लम्बी पेंदी हैं। (फलक ३, ड)।

प्याले भी कई प्रकार के यहाँ प्राप्त हुए हैं (फलक ३, ढ, ण, त)। कसोरे भी कई प्रकार के मिले हैं। प्रायः ये चौड़े मुँह के बनते थे, पेंदी भी चौड़ी रहती थी। किसी-किसी की पेंदी एकदम गोल बनती थी (फलक ३, द, ध, न, प)।

भोजन की थालियाँ जो मिट्टी की बनी हुई प्राप्त हुई हैं, वे प्रायः गहरी नहीं हैं। किसी-किसी में पेंदी भी बनी है (फलक ३, फ, ब, भ)। इनमें मोहनजोदड़ो के लोग भोजन करते होंगे।

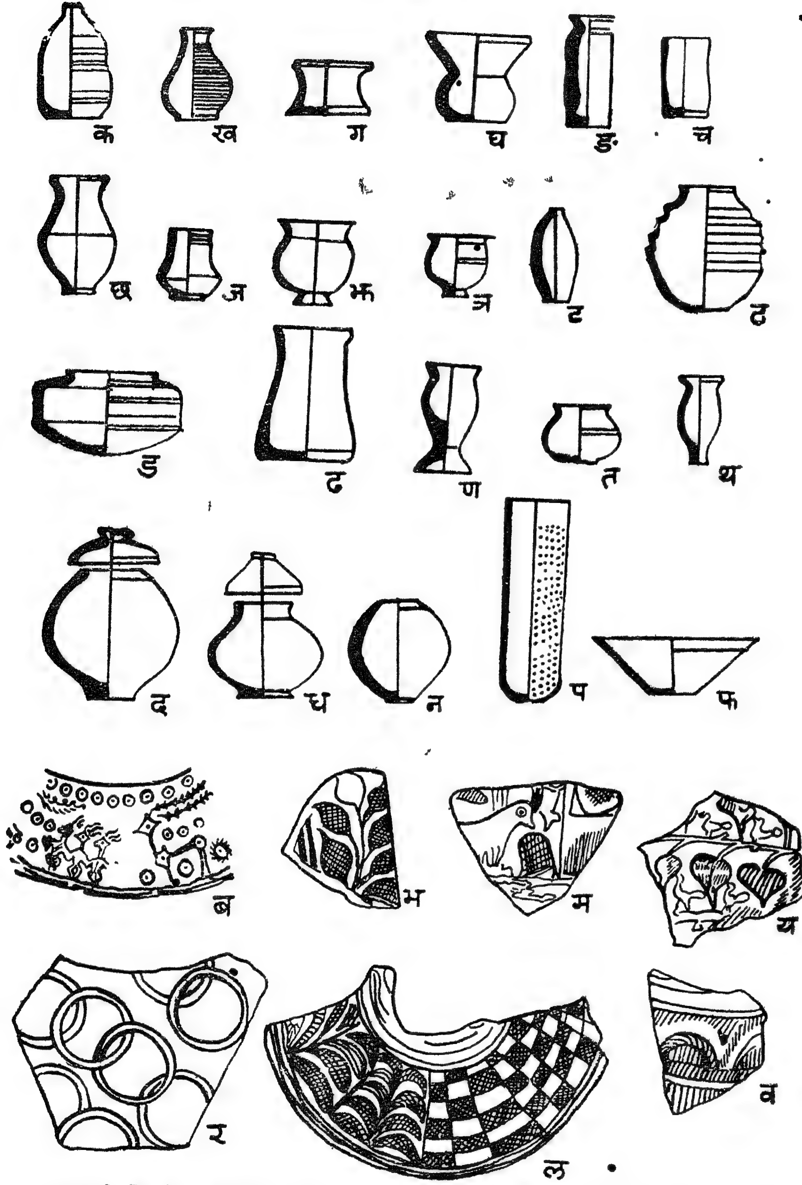
कुछ विशेष प्रकार के बरतनों में छोटे बच्चों को दूध पिलाने की सितुही की भी गणना की जा सकती है। ये भी कई आकार की है (फलक ३ म, य)। मूँठ लगे प्याले जो कदाचित् दीपक के काम में आते थे वे भी प्राप्त हुए हैं (फलक ३, र)। दो खाने के बर्तन जिनका कदाचित् चौघड़े की भाँति व्यवहार होता था तथा कमण्डलु जिनमें पानी रखा जाता था; वे भी यहाँ से प्राप्त हुए हैं (फलक ३ ल, व)। यहाँ के धान्य रखने के कुण्डे भी कई प्रकार के हैं (फलक ३, श, ष, स)। कुछ छेददार बने बरतन ऐसे प्राप्त हुए हैं जो सम्भवतः पेय पदार्थ को छानने के हेतु व्यवहार में आते थे (फलक ३, ह)। एक बरतन ऐसा भी प्राप्त हुआ है जो एक मेढ़े के आकार का है। भीतर से यह खोखला है[1]।

पंजाब के हड़प्पा से प्राप्त बरतनों के आकार प्रायः मोहनजोदड़ो से मिलते हुए ही हैं, परन्तु कोई-कोई पात्र आकार में भिन्न भी हैं। इनके ऊपर प्रायः लाल रंग का लेप है। इन पर की चित्रकारी बहुत कुछ मोहनजोदड़ो से मिलती-जुलती है।

---

[1] मांके—फरदर एक्सकवेशन्स० पृ० १८८, चित्र ६६, २३।

फलक ४



सुराही के दो नमूने जो मोहनजोदड़ो में नहीं मिले हैं वे यहाँ से प्राप्त हुए हैं (फलक ४, क, ख)। ये सुराहियाँ गरारीदार हैं। कुछ ऐसे बरतन मिले हैं जिन्हें वत्स ने अनाज नापने के नपुये बताया है।[1] परन्तु

[1] वत्स—एक्सकवेशन्स एट हड़प्पा-पृ० २८३, चित्र ७२, नं० १५, १७।

ऐसा प्रतीत होता है कि ये बरतन वास्तव में अंगीठी के काम में आते थे। इस आकार की अंगीठी आज भी बनती हैं (फलक ४ ग, घ)। दो लम्बी बोतलें भी मिली हैं (फलक ४, ङ)। ऐसी बोतलें मोहनजोदड़ो में नहीं दिखाई देतीं। कदाचित् ये अंचार रखने के कार्य में प्रयुक्त होती होंगी। ऊपर की सतहों में प्राप्त होने के कारण ऐसा अनुमान होता है कि इनके आकार बाहर के देशों से आये। पानी पीने के ग्लास भी जो यहाँ मिले हैं वे बिलकुल ही आधुनिक आकार के एक दम खड़े बने हैं, पेंदी भी चिपटी है (फलक ४, च)। एक बरतन अनार के आकार का भी प्राप्त हुआ है[1] जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि अनार अथवा उसी आकार का कोई फल उस समय लोग खाते थे। सिन्धु घाटी के पास आज भी पहाड़ों पर जंगली अनार होते हैं इस कारण यहाँ के लोगों का इस आकार से परिचित होना कोई आश्चर्य नहीं है। सिन्धुघाटी से प्राप्त बरतनों में कुछ छोटे-छोटे बरतन भी हैं। इनके आकार-प्रकार बड़े बरतनों से मिलते हुए हैं। कदाचित् इन्हें बच्चों के खेलने के हेतु बनाया जाता था, जिससे उन्हें प्रारम्भ से ही रूप का ज्ञान हो जाय और उन बरतनों के नाम भी स्मरण हो जांय। आज भी इसी प्रकार के पीतल तथा मिट्टी के बरतन लड़कों के खेलने के हेतु भारत में बनते हैं जो प्रतिदिन व्यवहार में आनेवाली चीजों के नाम और रूप का बोध कराने में सहायक होते हैं। कुल्ली मेही की सभ्यता के बरतनों को दो भागों में बाँटा जा सकता है; एक तो हड़प्पा के समकालीन हैं और उसी आकार-प्रकार के हैं और दूसरे हड़प्पा के यौवन काल के पूर्व के हैं। हड़प्पाकाल के बरतन जो कुल्ली से प्राप्त हुए हैं वे फलक २ ठ, ड, और ढ पर अङ्कित हैं।

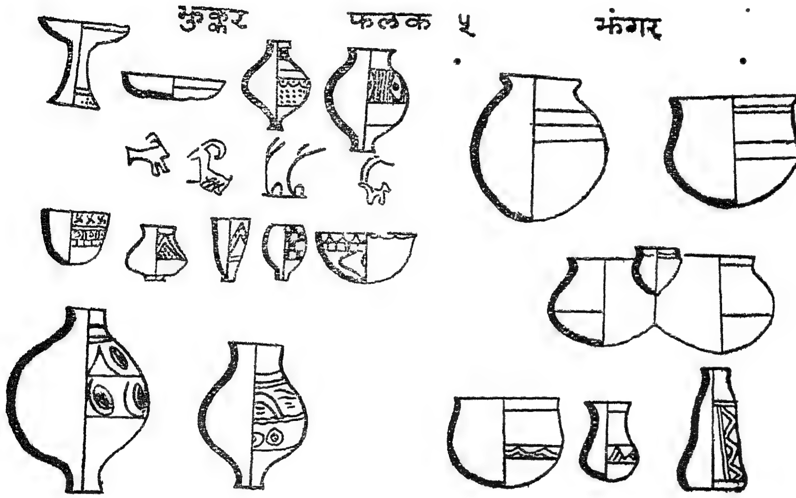
इस प्राचीन सभ्यता की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई प्रगति के फलस्वरूप बर्तनों के बनाने, उसपर लेप चढ़ाने तथा चित्रकारी करने का क्रम प्रायः १५०० वर्ष तक चलता रहा। उत्तरी बलूचिस्तान के रानाघुण्डई की खोदाई से जो प्रमाण प्राप्त हुए हैं उनसे ऐसा ज्ञात होता है कि प्रायः तीसरे काल के अन्त में इस सभ्यता को ध्वस्त करके नये आदमियों ने इस क्षेत्र में पुनः अपनी सभ्यता जमायी। इस सतह पर जो राख मिली है उससे ऐसा ज्ञात होता है कि कोई बहुत बड़े ध्वंसकारी जत्थे ने आक्रमण करके इस सभ्यता को नष्ट कर दिया[2]। कुछ इसी प्रकार के प्रमाण बलूचिस्तान के नल के सोहर डम्ब से तथा हाल की हुई खोदाई से प्राप्त कोटडीजी के सतहों से मिलते हैं।[3]

[1] वत्स—उपर्युक्त-पृ० २८८, चित्र ७१, २१।

[2] पिग्गट—प्रिहिस्टारिक इण्डिया-पृ० २१५।

[3] सय्यद हसनत अहमद—ए प्री हड़प्पन सिविलीज़ेशन-दी लीडर, १२ मई १९५७ वीकली पृ० १।

भी प्राप्त होते हैं। उसी क्षेत्र के डाबरकोट में ऊपर के स्तरों की राख के ढेरों से भी ऐसा ही पता लगता है। चान्हुदारों की खोदाई से भी इसी बात की पुष्टि होती है।[1] इस काल के बरतन हल्के पीले रंग के हैं तथा इन पर चित्रकारी लाल और काले रंग से की गयी है। चित्रकारी के विषय या तो रेखांकित वृत्त, त्रिकोण, चतुष्कोण इत्यादि हैं या काल्पनिक वृक्षों तथा पशुओं के आकार के हैं



(फलक ५)। इस युग के बरतनों में नीची पेंदीवाले बोतल, मटके, रकाबी और दीवट हैं। पतली पेंदी के कुण्डे और कुल्हिया मुख्य हैं। इनको देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि हड़प्पा, कुल्ली इत्यादि कई स्थानों के बरतनों के आकार-प्रकार के प्रभाव इन पर विद्यमान हैं। काल्पनिक चित्रकारी में पशुओं की आकृतियाँ हैं। उनमें भी एक विचित्र प्रवृत्ति दिखाई देती है। किसी की सींग लम्बी कर दी गयी है जो पीठ को भी पार कर जाती है तो किसी का धड़ ही बड़ा लम्बा कर दिया गया है।[2] ऐसा अनुमान होता है कि अच्छे कुम्हारों के मरने पर कुछ उन्हीं के घर के बचे-खुचे लोगों ने इन बरतनों को बनाया है। इन बरतनों को देखकर ऐसा ज्ञात होता है कि इस काल में एक मिश्रित कला का प्रादुर्भाव हुआ जैसा मुगलराज्य के अन्तिम दिनों में हुआ था।

---

[1] पिग्गट—वही—पृ० २२२। अन्युअल रिपोर्ट आफ अर्कैआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया १९३५–३६, पृ० ३९, ४०।

[2] मजुमदार—मेमायर्स–४८ चित्र ३५ नं० १३।
पिग्गट—दी क्रानोलोजी आफ प्रि-हिस्टारिक नार्थवेस्ट इण्डिया—एनशण्ट इण्डिया नं० १, (१९४६) पृ० १४, फिगर—३।

सम्भवतः ये नये लोग भी अधिक दिन तक सिन्धुघाटी में टिक नहीं सके। इनके पीछे भी और एक बड़ा जत्था पश्चिम से आया जिसने इन्हें पूर्व की ओर खदेड़ दिया। इस जत्थे को सिलेटी रंग के बरतन कदाचित् पसन्द थे और उस काल में वैसे ही बरतन बने। इन पर कोई चित्रकारी नहीं है, केवल कच्चे बरतनों पर खोदाई करके कुछ शृंगार कर दिया गया हैं। रंगे हुए प्राचीन बरतनों से ये बिल्कुल भिन्न हैं। इनका सिलेटी रंग पश्चिम से प्राप्त बरतनों पर कुछ मिलता है। ये उत्तरी काली चमकवाले बरतनों के रंग से भिन्न हैं तथा पिग्गट का यह विचार[1] कि ये सुंगकाल के बरतनों से मिलते हुए रंग के हैं, भ्रामक है। दोनों के रंगों में अन्तर है। इन सिलेटी रंग के बरतनों पर मौर्यकाल की चमक है ही नहीं। ये हाथ के बने हैं तथा इन पर का सिलेटी रंग कलछौंट लिए हुए है। इस रंग के बने हुए कई पात्र प्राप्त हुए हैं जिनमें तीन जुड़ी हुई हंड़ियाँ, गगरे, छोटी नांद, लोटे इत्यादि मुख्य हैं।[2] इनके स्वरूप निखरे हुए हैं (फलक ४ व) तथा प्रारम्भिक युग की कला के द्योतक नहीं हैं। यह काल प्रायः १४०० वर्ष ईसा से पूर्व का होना चाहिए। यह वही काल था जब पश्चिम से जत्थों ने पूर्व की ओर प्रस्थान किया क्योंकि इसी समय के लगभग पाये जाने वाले बरतनों की चित्रकारी जो सियाल्क (ईरान) में पायी जाती है वही बलूचिस्तान के लोडो में और वही जिनावरी आदि में। कुछ लोगों का मत है कि ये आर्यों के ही जत्थे थे पर यह विवादग्रस्त विषय है और प्रस्तुत प्रसङ्ग में उसकी समीक्षा समीचीन प्रतीत नहीं होती।

संक्षेप में यह हमारे सबसे प्राचीन मृण्मय पात्रों के विकास का इतिहास है। इस काल की कला के इस उत्थान पतन में प्रायः १५०० वर्ष का समय लगा। इस दीर्घकाल में दूसरी बाहरी सभ्यताओं का, समय-समय पर बरतनों के बनाने तथा चित्रकारी करने में जो प्रभाव पड़ा वह एक विशेष अध्ययन का विषय है जिस पर कुछ कार्य हो चुका है और अब भी हो रहा है।



---

[1] पिग्गट—प्रिहिस्टारिक इण्डिया-पृ० २२७।

[2] पिग्गट—दि क्रानोलोजी आफ प्रिहिस्टारिक नार्थवेस्ट इण्डिया, एन्शिएण्ट इण्डिया नं० १, पृ० १२, फिगर २, झंगर कलचर; अन्युअल रिपोर्ट आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया १९३५-३६ पृ० ३९।

महाभारतकाल से (१) सुंगकालतक के मृत्पात्र

सिंधु सभ्यता का अन्त होने के पश्चात् तथा उसके स्थान पर दूसरी सभ्यता के आविर्भाव के बीच का काल अभी तक बरतनों के आधार पर संतोषजनक रूप से निश्चित नहीं हो सका है। पंजाब में रूपड़ की खोदाई के फलस्वरूप तथा हस्तिनापुर की खोदाई से प्राप्त मिट्टी के बरतनों को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि उत्तरी भारत में एक प्रकार का गुलाबी पीला बरतन सिन्धु सभ्यता का अन्त होने पर बनने लग गया था[1]। इन बरतनों के टुकड़े बहुत कम प्राप्त होते हैं, इस कारण इनका पूर्ण स्वरूप नहीं ज्ञात हो पाता (फलक ६, अ, आ, इ)। यहाँ के कारीगर कहाँ गये, इसका भी पता नहीं लगता। हाल में लोथल की खोदाई से कुछ ऐसा अनुमान होता है कि सिंधुघाटी के लोग आर्यों के आगमन पर गुजरात की ओर से दक्षिण की ओर भागे होंगे, परन्तु अभी यह विशुद्ध अनुमान ही है। लोथल में एक प्रकार का लाल-काला बरतन ठीक हड़प्पा काल के बरतनों के ऊपर मिला है। परन्तु अब भी यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि हड़प्पा काल के बरतनों के पश्चात् किस प्रकार के बरतन बने।

इसके बाद के युग में एक प्रकार का सिलेटी रंग का बरतन प्राप्त होने लगता है जिसपर काले रंग से चित्रकारी की गयी है। इस प्रकार के बरतन अम्बाला जिले के रूपड़ स्थान से तथा कोटला निहंग खाँ के ढूहे से और बागपत, तिलपत, अहिच्छत्र, उज्जैन आदि स्थानों से प्राप्त हुए हैं[2]। इनमें तीन प्रकार की आभा दृष्टिगोचर होती है। कुछ बरतनों का सिलेटी रंग तो सफेद आभा लिए हुए है, कुछ का गुलाबी आभा लिये हुए और कुछ का पीलापन लिए हुए है[3]। इन पर शृङ्गार के हेतु जो रेखाएँ बनायी गयी हैं वे अत्यन्त दृढ़ हैं जैसा फलक ६, के देखने से ज्ञात होता है। इस प्रकार के बरतनों में प्रायः अथरी के आकार के बरतन तथा ऊँचे बार की थाली के आकार के भिक्षापात्र और कसोरे के आकार के बरतन ही विशेष रूप से

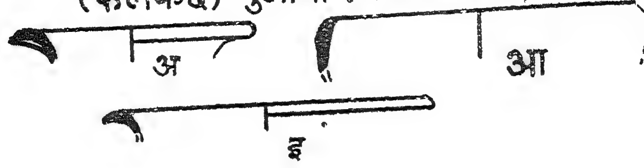
---

[1] बी० बी० लाल-एक्सकवेशन्स एट हस्तिनापुर एण्ड अदर एक्सप्लोरेशन्स, एनशण्ट इंडिया, १०, ११, पृष्ठ ३१ फलक ५।

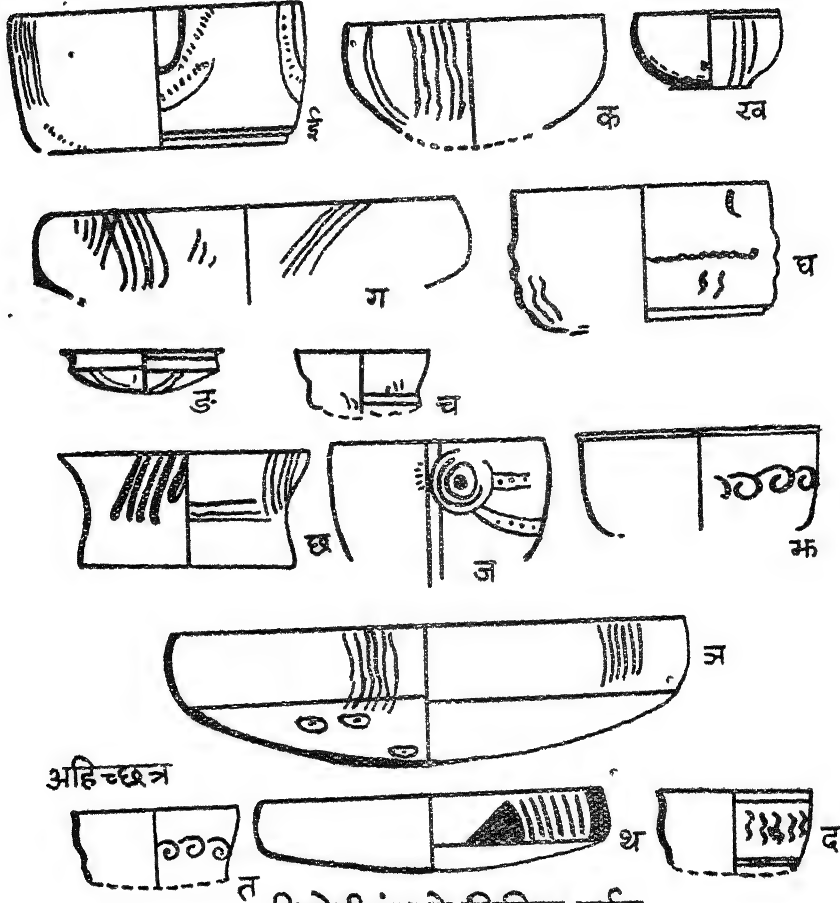
[2] बी० बी० लाल-वही पृष्ठ १३८, १४६।

[3] बी० बी० लाल-वही चित्र नं० ७२।

(फलक ६) गुलाबी रंग के बरतन



हस्तिनापुर



सिलेटी रंग के चित्रित बर्तन

प्राप्त हुए हैं। कई बरतनों में बाहर और भीतर दोनों ओर रेखाओं से चित्रकारी की गयी है। (फलक ६ ई–द) इन पात्रों के आकार में एक प्रकार का भारीपन है जो उस सभ्यता की पुष्टता का द्योतक है। इनके आकार में वह नजाकत नहीं है जो कि हड़प्पा के बरतनों में पायी जाती है।

ये सब बरतन तीव्र गति से घूमती हुई चाक पर बनाये गये हैं जैसा कि इन पर पड़ी अँगुलियों के चिह्नों से विदित होता है। ये पतली धारियाँ चलती हुई चाक पर अँगुलियों की रेखाओं से बनी हुई प्रतीत होती हैं। इन बरतनों को बनाने के हेतु भली भाँति कूँदी हुई मिट्टी व्यवहार की गयी है। ये पतले बरतन भट्टी में पूर्णरूप से पकाये गये विदित होते हैं क्योंकि इनका सिलेटी रंग सब स्थान पर एक-सा है। सफेद, गुलाबी और पीली आभायें किस प्रकार उत्पन्न की गयी हैं इसका पता अभी नहीं लग सका है। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, सिलेटी रंग के बरतन बन्द आंवें में धुआँ करके बनाये जाने से इनका ऐसा रंग हो गया है। इन पर कोई रंग नहीं लगाया गया है। चित्रकारी के हेतु ऐसा ज्ञात होता है कि एक पतली रेखा काजल या सिन्दूर से बरतनों पर पहले खींच लेते थे और उसे पुनः मोटी कर लेते थे। ये रेखाएँ अधिक संख्या में काली हैं परन्तु किसी-किसी पात्र पर लाल रंग की भी हैं। प्रायः रेखाएँ खड़ी या आड़ी-बेड़ी हैं, परन्तु बरतन के सब भाग पर नहीं हैं। (फलक ६) ये रेखायें ऐसी ज्ञात होती हैं जैसी कभी-कभी चित्रकार रंग देखने के लिए कूँची से कागज पर खींच देता है। इन चित्रों के आकार में प्रौढ़ता है।[1] ये रेखाएँ बालचापल्य की द्योतक नहीं हैं। इन बरतनों का समय १००० वर्ष ईसा-पूर्व से लेकर ८०० वर्ष ईसा-पूर्व का श्री लॉल ने निर्धारित किया है।[2]

रूपड़ में इस प्रकार के चित्रकारी वाले सिलेटी रंग के बरतन सिन्धुघाटी की सभ्यता के ठीक ऊपर वाली सतह से भी प्राप्त हुए हैं।[3] इससे भी यह अनुमान होता है कि ये बरतन प्राय १००० वर्ष पूर्व के हैं, परन्तु अभी यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि ये बरतन महाभारत काल के हैं। श्री बी० बी० लाल ने जो बरतनों के विशेषज्ञ हैं, इन्हें महाभारत काल का अनुमान किया है[4] परन्तु स्वयं महाभारत का कोई ऐतिहासिक प्रमाण अभी उपलब्ध नहीं है। इन्हें हम केवल प्राचीन आर्यों के बरतन कह सकते हैं। कोटला निहंग खां से भी इसी प्रकार के बरतन सिन्धुघाटी की सभ्यता के अवशेष के ऊपरी स्तरों से प्राप्त हुए हैं।[5] अहिच्छत्र में सब से नीचे के

---

[1] बी० बी० लाल-वही फलक ६, ७, ८, ९।

[2] बी० बी० लाल वही फलक ३।

[3] वाई० डी० शर्मा-एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टोरिकल साईट्स-एनशण्ट इण्डिया, नं० ९, पृ० १२५, फलक ४।

[4] बी० बी० लाल-एक्सकवेशन्स एट हस्तिनापुर आदि—एनशण्ट इंडिया, नं० १०, ११, पृष्ठ १४९।

[5] माधवस्वरूप वत्स-एक्सकवेशन्स एट हड़प्पा-पृष्ठ ४७६-७७।

स्तर के ठीक ऊपर के स्तरों से ऐसे बरतन मिले हैं।[1] इससे भी यह संकेत मिलता है कि ये प्राचीन आर्यों के बरतन हैं। इन्हीं बरतनों से आर्यों के उत्तर भारत से दक्षिण की ओर बढ़ने का भी प्रमाण प्राप्त होता है।[2] राजघाट में इसी से कुछ मिलते-जुलते टुकड़े उत्तरी काली चमकवाले बरतनों के साथ प्राप्त हुए हैं[3] परन्तु ये चित्रित नहीं हैं। महाभारत में जिन-जिन स्थानों के नाम आये हैं उन सभी स्थानों से अथवा अधिक से अधिक स्थानों से इस प्रकार के बरतन मिलने की संभावना होनी चाहिये, क्योंकि उस काल तक आर्य इन सभी स्थानों पर पहुँच गये रहे होंगे परन्तु खोदाई में बहुत से स्थानों से ऐसे बरतन नहीं मिले हैं जैसे विदिशा। इस कारण भी इन्हें महाभारत काल का कहना उचित नहीं है।

इन्हीं बरतनों के साथ जो और मामूली बरतन मिले हैं वे लाल रंग के हैं। इन पर लाल रंग की धुलाई भी है। कुछ बरतन काले रंग के भी मिले हैं जिनको रगड़कर चिकना किया गया है तथा भट्टी में धुवाँ देकर पकाया गया है। कुछ बरतन लाल रंग के लेप से आच्छादित भी प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार सिलेटी रंग के बरतनों के साथ और तीन प्रकार के बरतन प्राप्त होने से[4] ऐसा ज्ञात होता है कि सिलेटी रंग के बरतन अमीरों के काम में आते थे तथा अन्य बरतन गरीबों के। प्रायः लाल रंग के बरतन सादे हैं। कुछ बरतनों के नीचे के भाग हाथ के बने प्रतीत होते हैं, परन्तु ग्रीवा तथा ऊपर के भाग चाक पर बने हुए हैं। इस प्रकार के बरतनों की मिट्टी में अबरक और धान की भूंसी मिलाई हुई जान पड़ती है। कुछ बरतन जिन पर लेप हैं उनकी मिट्टी भली भाँति माड़ी हुई है और वे अच्छी तरह पकाये भी गये हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि कुम्हारों ने काली मिट्टी के बरतन से उत्तरी काली चमकवाले बरतनों को बनाने का प्रयास प्रारम्भ किया होगा। इन पर कोई लेप न होने के कारण ये कुछ पानी सोखते हैं और कुछ बरतन भीतर से काले और बाहर से लाल और काले हैं जिससे ऐसा अनुमान होता है कि ये आँवाँ में उलटे करके चुने गये थे जिससे ये ऊपर से तो उद्जन गैस के प्रभाव से लाल हो गये और अन्दर से गोहरी पर रहने के कारण उसके धुएँ से काले हो गये।

---

[1] श्री ए० घोष-दी पाटरी आफ अहिच्छत्र—एनशण्ट इण्डिया, नं० १, पृष्ठ ५९, फलक १२।

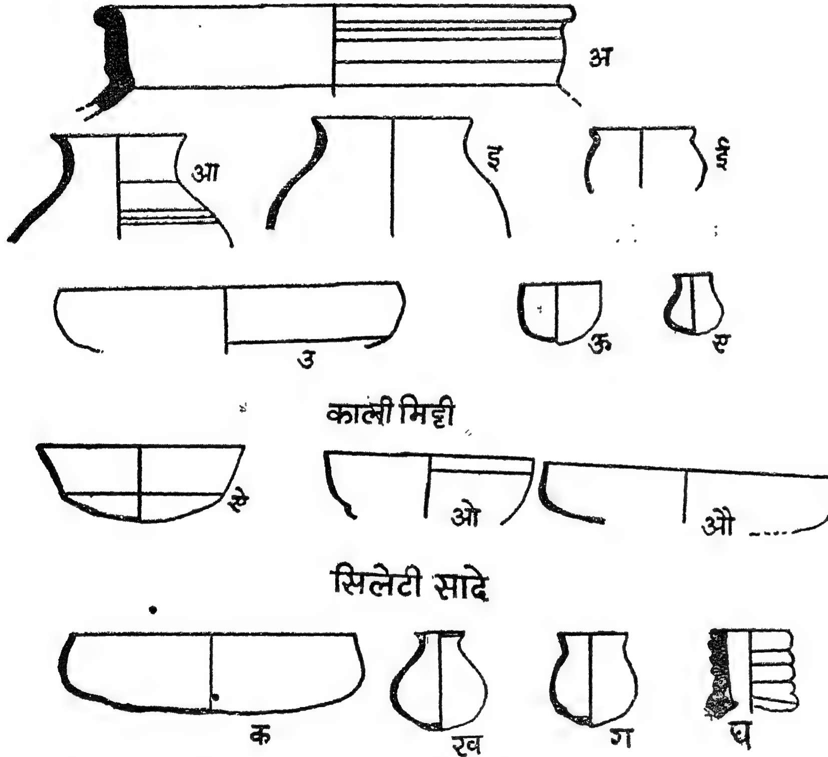
[2] कौशाम्बी से भी इस प्रकार के बरतन के टुकड़े प्राप्त हुए हैं पर उन पर चित्रकारी नहीं है।

[3] श्री ए० घोष-उपर्युक्त पृष्ठ, ५९, इन बरतनों के टुकड़ों पर चित्रकारी नही है।

[4] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन्स एट हस्तिनापुर इत्यादि—एनशन्ट इन्डिया नं० १०, ११ पृ० ३०-४४।

इस प्रकार के लाल काले बरतन जो दक्षिण से प्राप्त हुए हैं इनसे कुछ भिन्न हैं।[1] इसी प्रकार के बरतन हस्तिनापुर और बीकानेर से सिलेटी रंग के चित्रित बरतनों के साथ प्राप्त हुए[2] तथा हाल में उज्जैन से[3] तथा अहार इत्यादि स्थानों से भी प्राप्त हुए हैं। इनमें थाली तथा कसोरे अधिक हैं। लाल रंग के बरतनों में प्रायः कुंडे, गगरी, हँड़िया, कसोरे, लोटिया, थाली इत्यादि के अवशेष हस्तिनापुर से प्राप्त हुए हैं (फलक ७)। काली

(फलक ७) हस्तिनापुर लाल रंग के बरतन



सिलेटी रंग के चित्रित बरतनों के साथ दूसरे बरतन

मिट्टी के बरतनों में अथरी तथा थाली मुख्य हैं। कुछ सिलेटी रंग के सादे बरतन भी प्राप्त हुए हैं जिनमें थाली, लोटे, छोटी हँड़िया इत्यादि मिली हैं तथा एक प्रकार के पनारीदार बरतन भी प्राप्त हुए हैं (फलक ७ घ)।

[1] ह्वीलर-ब्रह्मगिरि तथा चन्द्रावती-एनशण्ट इण्डिया-नं० ४ पृ० २३२।

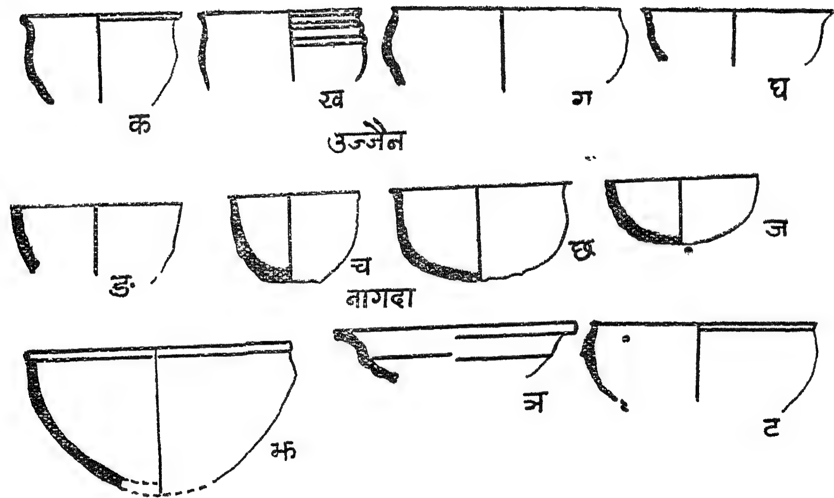
[2] बी० बी० लाल-उपर्युक्त-पृ० ४४-फुटनोट १।

[3] घोष-इण्डियन आर्कैआलजी-५६-५७-पृ० २४।

इस प्रकार के बरतन ईरान के शाह टेप के ताम्रयुग के पिछले काल के स्तरों से भी पहिले मिल चुके हैं। इस कारण कुछ विद्वानों की सम्मति है कि कदाचित् इनका आपस में कुछ सम्बन्ध हो। हो सकता है कि उधर के लोग धीरे-धीरे कुछ शताब्दियों में हस्तिनापुर पहुँचे हों। इनके मुँह चौड़े और शरीर स्थूल होने के कारण इनके आकार में एक प्रकार का भारीपन है। हाल ही में हुई लोथल तथा माहेश्वर[1] की खोदाई में सिन्धु सभ्यता के मिट्टी के बरतनों के टुकड़ों के साथ ऊपरी सतहों में एक प्रकार के लाल और लाल-काले बरतन प्राप्त हुए हैं। ये ऊपर से लाल और भीतर से काले हैं।[2] इसी प्रकार के बरतन दरौली (जिला उदयपुर), उन्दल, विरोली, हिरनजी का खेड़ा, खोर (जिला चित्तौड़गढ़) अहार, माहेश्वर इत्यादि स्थानों से भी प्राप्त हुए हैं,[3] इस कारण ऐसा अनुमान होता है कि ये बरतन चित्रित सिलेटी रंग के बरतनों के समकालीन ही हैं।

इस प्रकार के लाल-काले बरतनों में प्याले जिनका मुँह फैला हुआ है और कोर सीधी अथवा बाहर की ओर उलटी हुई है तथा पुरवे जिनमें कुछ

लाल काले बरतन (राजस्थान फलक ८)



के कन्धे फूले हुए चिपटे हैं; तथा कुछ के कन्धे खड़े हैं और कोर बाहर की ओर उलटी हुई है, कतिपय हँड़िया जिनके कन्धे के कोने बाहर निकले हैं

[1] घोष—इण्डियन आर्केआलजी–१८-५४-५५–पृ० १४।

[2] टी० जे० अर्न–एक्सकवेशन्स एट शाहटेप (१९४५) चित्र ४६–नं० ३२८-३३१।

[3] ए० घोष-इण्डियन आर्केआलजी–१९५४-५५–पृ० १२।

तथा जिनकी कोर बाहर की ओर उल्टी हुई है और कुछ हँड़ियाँ जिनके मुँह कुछ फैले हुए हैं, कुछ प्यालियाँ जिनके शरीर बीच में से दबे हुए हैं, स्थान-स्थान से प्राप्त हुए हैं। (फलक ८)

अहर से जो इस प्रकार के बरतन प्राप्त हुए हैं उनको देखने से इनके विकास पर बहुत प्रकाश पड़ता है। जो सबसे नीचे की सतह से प्राप्त हुए हैं वे अनगढ़ हैं, उनमें सफाई नहीं है तथा केवल बाहर की ओर चमकाये गये हैं। इस सतह के ऊपर से प्राप्त बरतन उनसे बढ़िया बने हैं तथा भीतर और बाहर दोनों ओर चमकाये गये हैं। परन्तु इसके पश्चात् के स्तरों से जो इस प्रकार के बरतन मिलते हैं वे पुनः अनगढ़ हैं।[१]

बीच के काल में जो बरतन प्राप्त होते हैं उन पर बाहर और भीतर सफेद रंग से चित्रकारी भी की हुई है। इसी प्रकार की चित्रकारी और स्थानों से प्राप्त इस प्रकार के बरतनों पर भी मिलती है। चित्रकारी का विषय प्रायः बिन्दु, एक दूसरे को काटते हुए वृत्त, एक बिन्दु समाश्रय वृत्त, टेढ़ी तथा ऊपर से नीचे आती हुई रेखाएँ[२] इत्यादि हैं।

इन पर सम्भवतः चाक पर से उतारने के पश्चात् कापिस, रेह, आम की छाल और खैर का लेप लगाया गया है। इस लेप को बरतन सूखने पर वस्त्र के टुकड़े में तेल लगाकर रगड़ दिया गया है। उसके पश्चात् इसे आँवाँ में गोहरी पर उलटा करके तथा भीतर के भाग में गोहरी भर के पकाया गया है जिससे भीतर धुएं के कारण ये काले पड़ गये हैं और बाहर उद्‌जन के संपर्क से लाल हो गये हैं। यह भी संभव है कि भीतर के लेप में कोयले को बूक कर मिलाया गया हो जो धुएं के कारण काला रंग दे रहा है। आज भी इस प्रकार के बरतन बन सकते हैं।

इन बरतनों के साथ कुछ गहरे लाल रंग के बरतन भी माहेश्वर में[३] मिले हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि इन बरतनों को उपर्युक्त लेप चढ़ाने तथा रगड़ने पर इन्हें भट्ठी पर चढ़ाया गया तथा लेटाकर रखने के कारण और आँच पूरी होने के कारण ये लाल हो गये। अहर में एक प्रकार के लाल रंग के बरतन प्राप्त हुए हैं[४] जिन पर खोदाई की हुई है। ये कदाचित् तेल लगाकर रगड़े न जाने के कारण चमकते नहीं हैं। इन्हें पकाने में आँच भी अधिक नहीं दी गयी है।

इस युग के पश्चात् एक विशेष प्रकार के चमकदार बरतन बनने लग गये

---

[१] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलजी—१९५४-५५—पृ० १४।

[२] ए० घोष—उपर्युक्त—१९५६-५७ पृष्ठ ८।

[३] ए० घोष—उपर्युक्त—१९५४-५५ पृष्ठ १२।

[४] ए० घोष—उपर्युक्त—पृष्ठ १४।

थे जिन्हें प्रायः उत्तरी चमकीले काले बरतनों की संज्ञा दी गयी है। यह संज्ञा आज भी चालू है। यों ये दक्षिण के पैठान तक मिले हैं।[1] ये एक विशेष प्रकार के बरतन हैं, जो छठीं शताब्दी ईसापूर्व से दूसरी शताब्दी ईसापूर्व तक ही मिलते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इनके बनाने के लिए विशेष प्रकार से मिट्टी को पानी में बार-बार छान कर एकदम बारीक कर लेते थे और पुनः खूब मांड़ते थे। जब इन प्रयोगों से मिट्टी बिलकुल लसदार आंटे की भाँति हो जाती थी तो उससे पतले बरतन तीव्र गति से घूमती हुई चाक पर बनाते थे। ज्यों ही एक दिन के बाद मिट्टी कठुआ जाती थी, अर्थात् कुछ सूख चलती थी, इन बरतनों को प्रायः कुम्हारों की स्त्रियाँ हाथ से खूब चिकना करती थीं। सूर्य की किरणों में ये फिर सुखाये जाते थे और इन पर एक प्रकार का लेप चढ़ाया जाता था। यह लेप कुम्हारों के अनुसार तो कापिस मिट्टी में रेह, सिन्धुरिया आम की छाल, खैर और गन्धक मिलाकर बनाया जाता था। भारतीय पुरातत्त्व विभाग के वैज्ञानिकों ने जो इस लेप पर खोज की है उनकी जाँच से ऐसा ज्ञात होता है कि मिट्टी, लोहे का जंग, अलमूनिया, चूना, मैगनिसिया मिलाकर यह लेप बनता था।[2] बरतनों का काला रंग तो आँवाँ में धुआँ देने के कारण हो जाता है, परन्तु एक प्रकार की अद्भुत चमक किस प्रकार आ गयी है जो आँच में भी नहीं बिगड़ती थी, इसका ठीक पता नहीं चलता। ये बरतन पानी बिलकुल नहीं सोखते। यह इनकी एक बड़ी विशेषता है जो गरम बरतन पर गंधक रगड़ने से सम्भव हो जाती है।

उत्तरप्रदेश के निजामाबाद में आज भी कुछ इससे मिलते-जुलते बरतन बनते हैं, परन्तु इनमें उस चमक का अभाव रहता है जो प्राचीन उत्तरी चमकीले बरतनों पर पायी जाती हैं। निजामाबाद के बरतन पानी भी सोखते हैं। वह चमक केवल बरतनों पर ही नहीं मिलती अपितु इस काल के बने कुछ खिलौनों पर भी मिलती है।[3] इस प्रकार के चमकीले बरतन कई रंगों के प्राप्त हुए हैं। कुछ में तो चाँदी और कुछ में सोने की भी झलक है, कुछ सिलेटी रंग के भी हैं, कुछ नीले और कुछ नारंगी रंग के हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इन विविध प्रकार के रंगों को लाने के हेतु विविध प्रकार के धातुओं का लेप में सम्मिश्रण किया जाता था। कुछ बरतनों के टुकड़ों पर सफेद और पीले छींटे भी हैं जो इस धारणा को और भी पुष्ट

[1] वी० डी० कृष्ण स्वामी—प्राग्रेस इन प्री हिस्ट्री, एनशण्ट इण्डिया नं० ९, पृष्ठ ६८।

[2] ए० घोष—दी पाटरी ऑफ अहिच्छत्र—एनशण्ट इण्डिया, पृष्ठ ५८।

[3] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिनापुर आदि—एनशण्ट इण्डिया, नं० १०-११, चित्र संख्या ३६, नं० ४। भारत कलाभवन में भी ऐसे खिलौने हैं, नं० २४८६, २४७०, २४७१ इत्यादि।

करते हैं। इनके लेप की अलग-अलग वैज्ञानिक जाँच होना आवश्यक है[1]। कुम्हार कोई साधारण सी वस्तु मिलाते होंगे जिसका अभी तक ठीक पता नहीं चलता। ऐसा अनुमान है कि इसमें काली चमक के हेतु कोयले का चूरा उपर्युक्त कापिस के लेप में मिलाया जाता था और इसे बन्द आंवे में पकाते थे। कुम्हारों का कहना है कि चाँदी की चमक भट्ठी में बेर का बीज देने से आ जाती है तथा सोने का रंग उपर्युक्त लेप में खली मिला देने से आ जाता है[2]।

उत्तरी काली चमकवाले बरतनों में कुछ ऐसे बरतन भी हैं जिनके समाश्रयवृत्त तथा बीच में एक बिन्दु है। प्रायः थालियों के बीच में उठा हुआ एक बिन्दु और उसके चारो ओर कई वृत्त पिपरहवा के स्तूप की भाँति बने हुए दिखाई देते हैं[3], कई बरतनों पर फूल के आकार भी छपे हुए प्राप्त हुए हैं तथा एक पर ब्राह्मी का 'म' बना हुआ मिला है। ऐसा ज्ञात होता है कि फूल और 'म' के आकार किसी ठप्पे की सहायता से बरतनों पर बनाये गये हैं। इस प्रकार के ठप्पे पीछे बरतनों पर बहुत अधिक संख्या में मिलते हैं। कुछ टुकड़ों पर चित्रकारी भी मिलती है।

इस चमक के बरतनों में विशेष रूप से उल्लेखनीय तो भीतर की ओर कुछ दबे हुए बार की या सीधे बार की थालियाँ, खड़े बार के प्याले, बाहर की ओर निकले हुए बार के तथा पनारीदार बार के ढकने, समथर कोर और बीच से कोना निकली हुई हांड़ियाँ हैं। कोना निकली हुई हांड़ियाँ या बहगुने आज भी प्रायः व्यवहार में आते हैं क्योंकि इस प्रकारके बरतनों में भारतीय चूल्हों पर आग ठीक लगती है और भोजन शीघ्रता से पक जाता है। इस प्रकार की चमक के बरतनों के टुकड़े बहुत संख्या में कौशाम्बी, राजघाट तथा पटना से प्राप्त हुए हैं। परन्तु प्रायः ये इतने छोटे हैं कि यह कहना कठिन है कि उपर्युक्त बरतनों के अतिरिक्त और कौन-कौन से बरतन इस प्रकार की चमक के बनते थे।

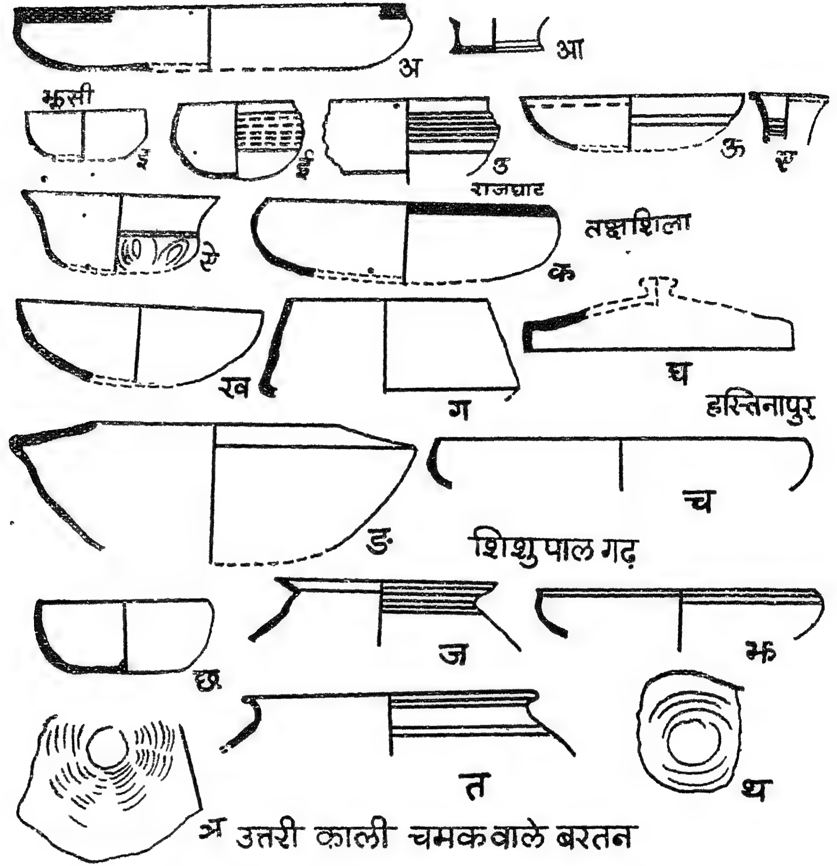
---

[1] यूनान में इस प्रकार की चमक लाने के हेतु बरतन को कई बार आँच पर चढ़ाया जाता था—जी० एम० ए० रिश्टर—जरनल ब्रिटिश स्कूल आफ एथेन्स। सं० ४६ (१९५१) पृष्ठ १४३-५०।

[2] ये प्रयोग करके देखे गये हैं और इसमें सफलता मिली है।

[3] ऐसा अनुमान होता है कि इस प्रकार का स्तूप का आकार बौद्ध भिक्षुओं की थालियों में उसमें रखे भोजन को पवित्र बनाने के हेतु बनाया जाता था। पिपरहवा का स्तूप इसी भाँति का बना है।—विलियम कास्सटन पेपे—दी पिपरहवा स्तूप, जे० आर० ए० स० १८९८ पृष्ठ ५७३।

(फलक ९)



ञ उत्तरी काली चमकवाले बरतन

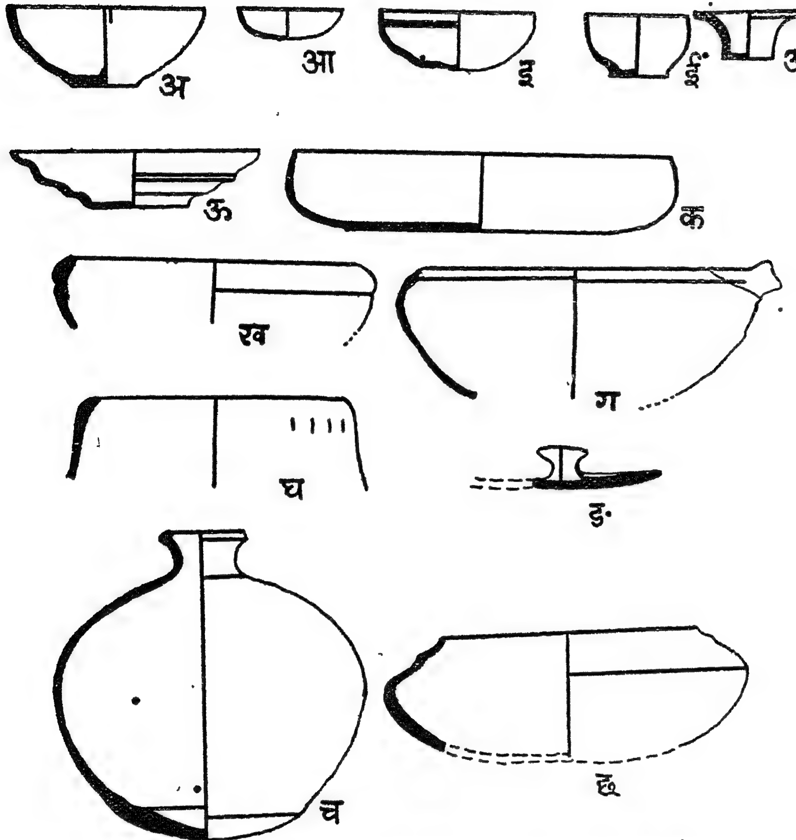
उत्तरी काली चमक के बरतन वानगढ़ से लेकर पश्चिम में नासिक तक प्राप्त हुए हैं और तक्षशिला से उड़ीसा के शिशुपालगढ़ तक मिले हैं[१] इससे ऐसा ज्ञात होता है कि एक समय में इनका विशेष प्रचार था तथा कुछ विशेष स्थानों पर ये बनकर सारे भारत में बिकते थे। इन बरतनों की कीमत और बरतनों से अधिक थी क्योंकि कुछ बरतन ऐसे भी प्राप्त हुए हैं जो तांबे के तार से छेदकर जोड़े गये हैं। इनकी इस सुरक्षा से ऐसा अनुमान करना कुछ अनुचित नहीं है।

ये बरतन प्रायः ५०० वर्ष ईसापूर्व से लेकर २०० वर्ष ईसा पूर्व तक चलते रहे जैसा तक्षशिला, हस्तिनापुर तथा कौशाम्बी और राजघाट की

[१] स्थानों की विस्तृत सूची—बी० बी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिनापुर इत्यादि, एनशण्ट इण्डिया—नं० १०-११ पृ० १४३-१४६। शिशुपालगढ़ का विवरण बी० बी० लाल—शिशुपालगढ़—एनशंट इण्डिया नं० ५ पृष्ठ ७९।

खोदाई से पता चलता है[1]। इस प्रकार इनका काल विशेष रूप से नन्द तथा मौर्य राज्यकाल निश्चित होता है। भगवान् बुद्ध के समय इस प्रकार के बरतन प्रायः व्यवहार में आते रहे, यदि ऐसा अनुमान किया जाय तो कुछ अनुचित न होगा[2]। ऐसा जान पड़ता है कि शुंगकाल के अन्त तक इनका व्यवहार बन्द हो गया था। इस परिवर्तन का क्या कारण था यह कहना

(फलक १०)



सिलेटी रंगवाले बरतन उत्तरी काली चमक वाले बरतनों के साथ प्राप्त

---

[1] बी० बी० लाल—वही—पृष्ठ ५१।

[2] श्री डी० एच० गार्डन का यह कहना कि ये बरतन ईसा पूर्व चौथी शताब्दी तक नहीं जाते, भ्रामक है। यूनान के बने इस प्रकार के बरतन इनसे नितान्त भिन्न हैं उनमें यह चमक नहीं है। डी० एच० गार्डन—दी पाटरी इण्डस्ट्रीज़ एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११—पृ० १७५।

कठिन है। हो सकता है कि इनके लेप में पड़नेवाला कोई मसाला अप्राप्य हो गया हो।

इस प्रकार के बरतनों के आकार में एक प्रकार का सौन्दर्य है। इनमें कहीं से भारीपन नहीं प्रतीत होता। गोलाई लिये हुए इनके आकार से जो रेखाएँ बनती हैं वे बड़ी सुन्दर हैं। ये हलके बरतन बड़े ही हृदयग्राही रहे होंगे। भारत के प्राचीन युग के इन बरतनों के अवशेष देखकर सभी भारतीयों का मन खिल उठता है।

इस प्रकार की चमक के बरतनों के साथ प्रायः और भी कई प्रकार के बरतन मिले हैं जिससे यह बोध होता है कि अलग-अलग स्तरवाले अलग-अलग कीमत के बरतन व्यवहार में आते थे। हस्तिनापुर में इन बरतनों के साथ एक प्रकार के मोटे शरीरवाले सिलेटी रंग के बरतन तथा लाल रंग के बरतन मिले हैं। ये सिलेटी रंग के बरतन चित्रित सिलेटी रंग के बरतनों से भिन्न हैं। न इनका वह रंग है, न ये उतनी कमाई हुई मिट्टी के बने हैं। इनका रंग कुछ कलछौंट लिये हुए है और ये चित्रित सिलेटी रंग के बरतनों से मोटे हैं। ये चित्रित सिलेटी रंग के बरतन सादे हैं परन्तु किसी-किसी बरतन के टुकड़े पर कुछ चित्रकारी भी प्राप्त होती है। यह चित्रकारी प्रायः ऊपर के लेप के स्थान-स्थान से उखड़ जाने के कारण बनी हुई जान पड़ती हैं। इस प्रकार के बरतन के टुकड़े कौशाम्बी से अधिक संख्या में प्राप्त हुए हैं।[१]

प्रायः सिलेटी रंग के बरतनों में कसोरे, प्याले, अथरी, गगरी, पतीली, तसला, थाली इत्यादि मिले हैं।[२] एक दो ऐसे बरतन भी मिले हैं जिनसे द्रव पदार्थ गिराने के हेतु मुँह बना है। (फलक ६ ग)। थालियों में घेरे बने हुए हैं जिनके बीच में गोल आकार है जैसा फलक ६ घ पर दिखाया गया है। कसोरे गहरे और छिछले दोनों भांति के हैं। अथरियों के कोई-कोई आकार तो उत्तरी चमकवाले बरतनों से मिलते हुए है जैसे फलक ६ ङ, का आकार और फलक १०, छ का आकार इत्यादि।

इस प्रकार हमारे बरतन कालान्तर में समयानुसार भिन्न-भिन्न प्रकार के बने तथा इनके आकार-प्रकार भी मनुष्य की आवश्यकतानुसार भिन्न होते गये। इनके अध्ययन से हमें देश की स्थिति का भी पता चलता है जो काल के प्रभाव से निरन्तर बदलती रही। इन विविध स्थानों के मिट्टी

---

[१] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिनापुर एंड अदर एक्सप्लोरेशन्स—एनशंट इण्डिया नं० १०-११ पृ० ५३।

[२] बी० बी० लाल—वही पृ० ५३-६२।

के बरतनों को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि प्रत्येक प्रान्त के विकास का काल भिन्न-भिन्न है तथा इनमें समानता अथवा एकरूपता ढूँढना कुछ उचित नहीं है। यह देश बहुत बड़ा है और इसमें प्रत्येक प्रांत का विकास एक ही समय हुआ हो यह सोचना ठीक नहीं है। नये जत्थों को एक स्थान से दूसरे स्थान में पहुँचने में बड़े देश में समय लगना कुछ आश्चर्य की बात नहीं हैं।



यवन तथा कुषाणकालीन मिट्टी के बरतन

यों तो भारतीय सभ्यता पर यूनान का प्रभाव सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात् पड़ना प्रारम्भ हो गया था, परन्तु स्थायी रूप से इस सभ्यता का विस्तार डेमिट्रियस के काल में ही दृष्टिगोचर होता है। डेमिट्रियस ने अशोक के उत्तराधिकारियों से पश्चिमोत्तर भारत का भूभाग प्रायः ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में छीन लिया था। सीथियन्स के आक्रमण से त्रस्त होकर डेमिट्रियस के उत्तराधिकारी पश्चिमी पंजाब में आ बसे[1] और यहीं उन्होंने अपना घर बना लिया। ये अपने साथ विकसित यवन सभ्यता के रहन-सहन का ढंग भी ले आये। ये रईस थे, इनको भारतीय मिट्टी के पात्र क्यों अच्छे लगते। इन्होंने अपने लिए जो मिट्टी के पात्र भारतीय कुम्हारों से नमूने देकर बनवाने प्रारम्भ किये उससे भारतीय मिट्टी के बरतनों की परम्परा ही बदल गयी। इनको खदेड़ते हुए शक लोग भी भारत पहुँचे, परन्तु उनका प्रभाव मिट्टी के बरतनों पर बहुत नहीं दिखायी देता। इसका मुख्य कारण कदाचित् यह था कि ये लोग सीर दरिया के पास के निवासी थे और घुमक्कड़ जाति के होने के कारण ये अपने साथ कुछ विशेष सामान भारत में नहीं ला सके जिनसे ये अपनी सभ्यता का विस्तार कर सकते। यही हाल पारथियन्स का भी था। परन्तु काडफिसस द्वितीय के भारत आक्रमण की कहानी और है। इसने भारत का बहुत बड़ा भूभाग अपने हाथ में कर लिया था तथा इसके पश्चात् कनिष्क ने तो अपने राज्य का और भी विस्तार किया। उपर्युक्त दोनों राजाओं के काल में पश्चिमोत्तर भारत के नये प्रकार के बरतनों (जो ग्रीक राजाओं ने अपने सेवन के हेतु भारतीय कुम्हारों से बनवाये थे[2]) के आकार-प्रकार की नकल सारे उत्तरी भारत में होने लगी।

---

[1] आर० सी० मजूमदार—एनशन्ट इण्डिया—पृ० १२४।

[2] एन० जी० मजूमदार-एक्सप्लोरेशन्स इन सिंध-आर्केओलाजिकल सर्वे आफ इंडिया मेमायर्स—नं० ४८, पृ० ८, प्लेट १३।११, भक्कर से प्राप्त एक मृत्पात्र पर एक स्त्री ग्रीक बाजा बजा रही है।

उत्तरी भारतीय काली चमकवाले बरतनों का बनना बन्द हो चुका था। अब दूसरे प्रकार के बरतन बनने लग गये, जो हमें स्थान-स्थान पर खोदाई में प्राप्त हुए हैं। इनका काल प्रायः ईसा पूर्व पहिली शताब्दी से लेकर ईसा पश्चात् चौथी शताब्दी तक माना जाता है।

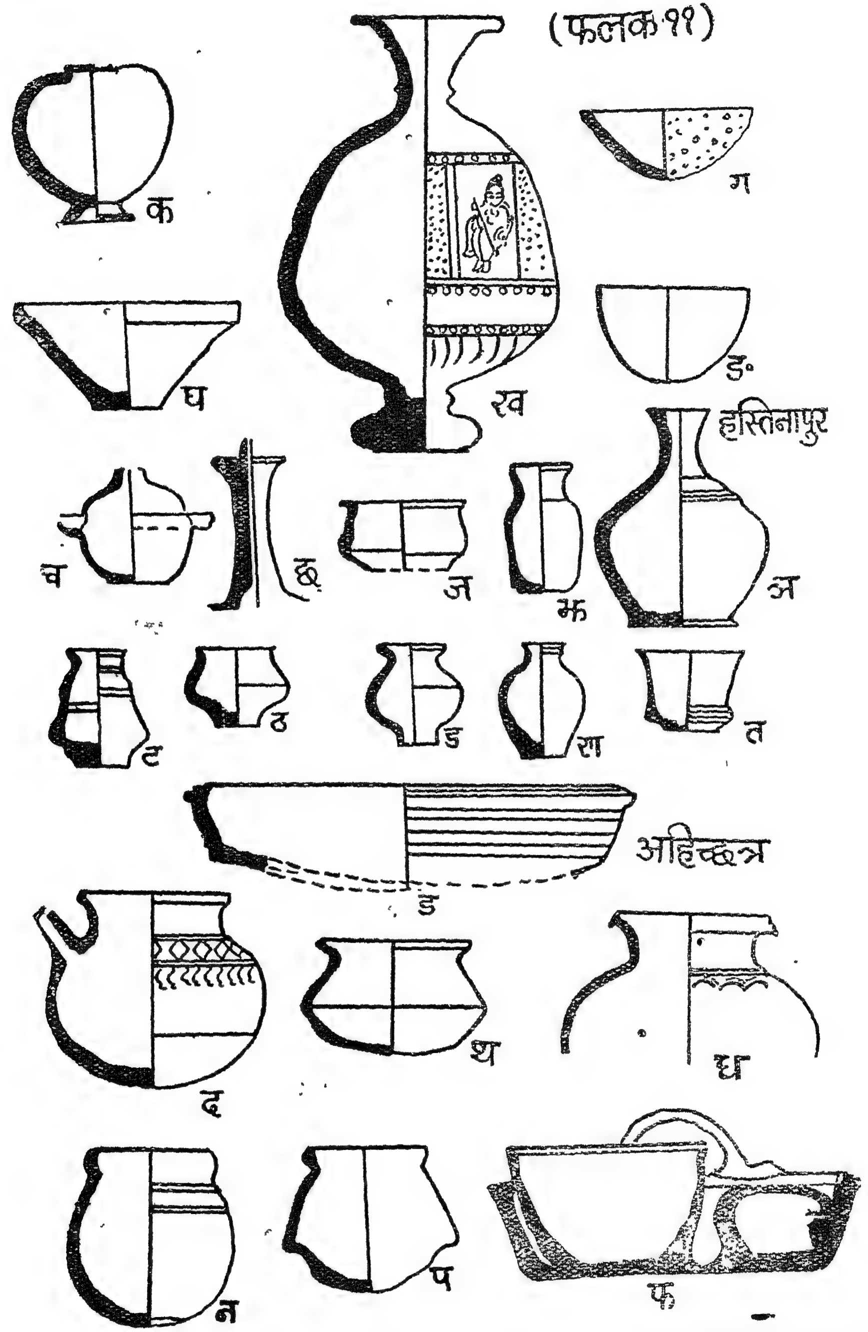
प्रायः पानी तथा मद्य रखने के बरतनों में टोंटी लगी हैं तथा पकड़ने के हेतु कुण्डे बने हैं। इनको सजाने के हेतु पाँच ढंग व्यवहार में लाये गये हैं। या तो ये चित्रित हैं या खोदाई किये हुये हैं या इनपर छिलाई करके उभारदार नक्काशी की गयी है या इनपर ठप्पे लगाये गये हैं अथवा इनपर चमक लायी गई है। चित्रित पात्रों पर प्रायः फूल-पत्ती के आकार बने हैं। ये लाल या काले रंग से लिखे गये हैं और बीच-बीच में चित्रकारी को और सुन्दर बनाने के हेतु पीले, गुलाबी, मखनिया तथा गेरू के रंगों का व्यवहार किया गया है। प्रायः इन चित्रकारों की चौड़ी-चौड़ी रेखाएँ दो और तीन भागों में बाँटती हैं। खोदाई किसी लकड़ी की कलम से कच्चे बरतनों पर की गयी ज्ञात होती है तथा उभारदार चित्रण चाकसे कच्चे बरतन पर किया गया है। लाल चमकदार बरतन ईरान तथा यवनों के नगरों में बहुत बनते थे। इस कारण ऐसा अनुमान होता है कि ये वहीं से भारत में आये। ये काली चमकवाले बरतनों से भिन्न हैं। ईसा पूर्व पहली शताब्दी के पश्चात् इनका मिलना बन्द हो जाता है।

सिन्धु घाटी के मोहनजोदड़ो की खुदाई में मिट्टी का एक बरतन प्राप्त हुआ है जिसे प्रायः ईसा पश्चात् दूसरी शताब्दी का होना चाहिये क्योंकि इस बरतन में जो सिक्के प्राप्त हुए हैं वे कुषाणकालीन हैं[1] जिनमें कनिष्क, वासुदेव के सिक्के तो प्रत्यक्ष पहचान में आते हैं। इस प्रकार इस बरतन का काल सिक्कों के आधार पर निश्चित किया जा सकता है। यह बरतन प्रायः ६ इंच ऊंचा है। गुलाबी मिट्टी का बना हुआ यह पात्र पत्थर के पात्र के समान दिखाई देता है। पत्थर के पात्र का सादृश्य उत्पन्न करने के हेतु स्थान-स्थान पर पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़े भी चिपकाये गये हैं। ऊपर से इसे चमकाकर सुन्दर बनाया गया है। ऐसा ज्ञात होता है कि लाल चमक लाने के हेतु आम की छाल, काविस, रेह इत्यादि का लेप लगाकर पकाने के पूर्व इसे रगड़ा गया है।

इस बरतन की ग्रीवा न होने के कारण ऊपर का मुंह भीतर की ओर घुसा हुआ है। मुँह का व्यास प्रायः डेढ इंच है। पेंदी अलग से बनी होने के कारण यह पृथ्वी पर ठीक से बैठता है। (फलक ११ क) इसी बरतन के साथ कुछ

---

[1] मांके—फरदर एक्सकवेशन्स एट मोहनजोदड़ों—पृष्ठ १८७, प्लेट ५२।१, सिक्के प्लेट—७१।११-१७।



टुकड़े पानी पीने के पात्र के भी प्राप्त हुए हैं जिन पर उत्तरी काली चमक है और जिन पर ब्राह्मी में 'भदत रक्षशास अय कर (क)' 'प्रत्रजितस',

'तस्स संघ रक्षितस्स इद करक' इत्यादि खुदा हुआ है।[1] करक शब्द पाली में पीने के पात्र को कहते हैं, परन्तु[2] इन टुकड़ों को देखने से ये भिक्षा-पात्र के टुकड़े ज्ञात होते हैं जिसका व्यास ११ इंच होना चाहिए, इस कारण कदाचित् करक शब्द[3] भिक्षापात्र के हेतु भी व्यवहार होता था। ये प्राचीन पात्र पवित्र होने के कारण ही इस स्थान पर उस समय के अर्वाचीन पात्र के साथ रखे गये होंगे।

झुकर से जो इस काल के बरतन प्राप्त हुए हैं वे उपर्युक्त चारों भांति से सजाये गये हैं। कुछ पर लेप है और कुछ लाल रंग (गेरू) में धो दिये गये हैं। इनमें कुण्डे लगे हुए मुँहदार बरतन भी हैं तथा अमफोरा मृतबान भी हैं। बरतनों में सबसे सुन्दर एक ऊँची-सी सुराही है जिस पर एक स्त्री ग्रीक सितार (हार्प) बजा रही है[4] दूसरा एक काँटेदार प्याला है जो कदाचित् कटहल के फल के आकार पर बनाया गया है (फलक ११ ख, ग।) इस प्रकार कांटेदार बरतन सिन्धु घाटी में अतिप्राचीनकाल में बनता था।[5] बरतन का एक और टुकड़ा प्राप्त हुआ है जिस पर बुद्ध की मूर्ति धर्मचक्र प्रवर्तन मुद्रा में है।

ढोर ढेरी से, जो लोरालाई क्षेत्र में भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेश में पड़ता था कुशाण कालीन बरतनों के टुकड़े प्राप्त हुए हैं जिन पर ब्राह्मी तथा खरोष्ठी में लेख हैं जो प्रायः ईसा पश्चात् प्रथम शताब्दी के ज्ञात होते हैं।[6] ये बरतन बहुत माड़ी हुई मिट्टी के नहीं बने हैं तथा इन पर सफेद या मखनिया रंग ऊपर से लगाया हुआ ज्ञात होता है। यहाँ से बहुत थोड़े चित्रित टुकड़े प्राप्त हुए हैं जिन पर भूरे रंग से चित्रकारी की गयी है।[7] इनका काल निश्चित करने में उसी स्थान से प्राप्त बहुत से गढ़े हुए पत्थर के टुकड़े जिन पर की खुदाई पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित ज्ञात होती है बड़ी सहायता करते हैं।[8]

---

[1] मांके—फरदर एक्सकवेशन्स एट मोहनजोदड़ो—पृ० १८७, प्लेट ६१।२, ११, १६–२०।

[2] राइस डेविड्स एण्ड स्टीड—पाली इंगलिश डिक्शनरी—पृ० २३।

[3] एन० जी० मजूमदार—एक्सप्लोरेशन्स इन सिन्ध पृ० ७।

[4] एन० जी० मजूमदार—उपर्युक्त प्लेट १३।११,९।

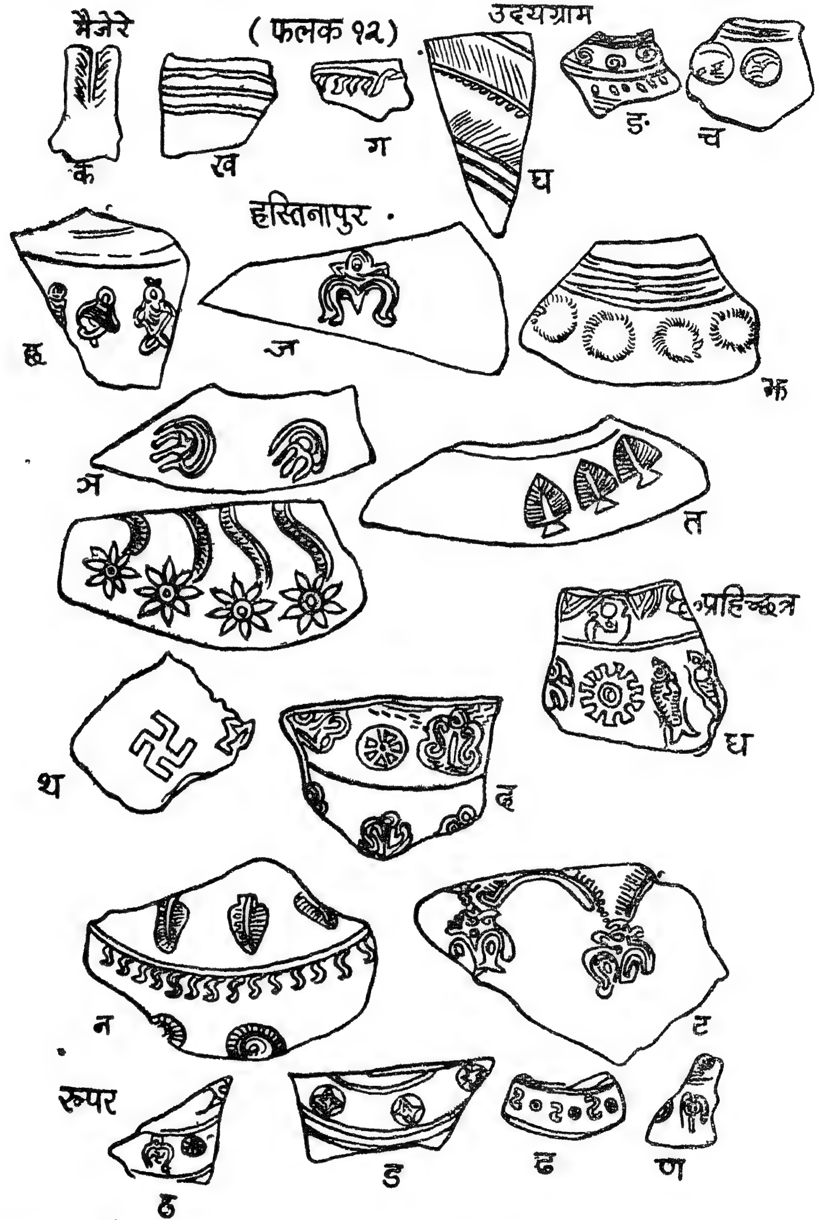
[5] मारशल—मोहनजोदड़ो एण्ड दी इण्डस सिविलिजेशन—ख १, पृ० ३१५।

[6] सर आरेल स्टाईन—ऐन आर्केओलाजिकल टूर इन वजीरिस्तान एण्ड नार्थ बलूचिस्तान—मेमायर—३७, पृ० ६७ प्लेट १७, १९।

[7] सर आरेल स्टाईन—मेमायर—३७, प्लेट १४, टी० डी० ई०—११·१४।

[8] सर आरेल स्टाईन—उपर्युक्त पृ० ६७-६८।

स्वात नदी की घाटी में स्टाईन महोदय को कई ऐसे स्थान प्राप्त हुए जहाँ से उन्हें कुषाणकालीन बरतनों के टुकड़े मिले। इनमें पीर सार, बजीरा,



उदय ग्राम नैजेरे, मंगलपार, जामपुर, ढेरी, शाखोराय स्थान प्रमुख हैं। कुछ टुकड़े फलक १२ क, ख पर दिखाये गये हैं। इन पर की गयी खुदाई विविध स्थानों से प्राप्त इस काल के बरतनों से बहुत कुछ मिलती हुई है जैसा

हम आगे देखेंगे। इन स्थानों से कुषाण सिक्के भी प्राप्त हुए हैं। वजीरा या वीर कोट से तो काडफेसस का भी एक सिक्का प्राप्त हुआ है।[1] इस प्रकार इन बरतनों के कुषाणकालीन होने में कोई सन्देह न होना चाहिये।

राना घुण्डाई से भी पीछे के काल के कुछ सुन्दर बरतन प्राप्त हुए हैं जो प्रायः कुषाणकालीन हैं। इन बरतनों पर लाल रंग हैं और उस पर काले रंग से चित्रकारी की गयी है। इसमें एक प्याले का तथा एक हंड़िया का आकार तो बहुत ही सुन्दर है।[2]

पेरियानी घुण्डई से भी इसी काल का मर्तबान तथा प्याला प्राप्त हुआ है। मर्तबान पर गुलाबी लेप है और उस पर काले रंग से चित्रकारी की गयी है। प्याले पर लाल रंग है और वह काला है।[3] तक्षशिला में सिरकप से जो मिट्टी के बरतन प्राप्त हुए हैं उनका काल दूसरे प्रमाणों के आधार पर प्रायः ईसा पूर्व पहली शताब्दी से लेकर ईसा पश्चात् दूसरी शताब्दी तक[4] निर्धारित किया गया है। ये सब बरतन कुम्हार के चाक पर बने हुए हैं, परन्तु इनकी मिट्टी खूब माड़ी हुई नहीं हैं। इस मिट्टी में बालू भूसी मिली हुई है। बरतन आँवे में पकाने के पूर्व काबिस, आम की छाल, सोडा इत्यादि के लेप से आच्छादित करके[5] लाल पकाया गया है तथा पकाने के पश्चात् ऊपर की काले रंग की चित्रकारी काजल को गोंद में मिलाकर की गयी है। घोष साहब का यह कथन है कि काली चित्रकारी लोहे में या और किसी धातु के काले चूर्ण से बरतन पकाने के पूर्व की गयी है, ठीक नहीं ज्ञात होता[6] क्योंकि इस प्रकार लोहे का चूर्ण भट्टी में मिट्टी के पात्र पर लाल रंग उत्पन्न करता है। मैगनीसिया गहरा भूरा रंग देता है। पुनः नीचे का लाल रंग जब तक पक्का न हो जाय काला रंग ऊपर से चढ़ाया नहीं जा सकता। इन पात्रों पर चित्रकारी का विषय प्रायः त्रिकोण, एक दूसरे को काटती हुई रेखाएँ, खड़ी और बेड़ी रेखाएँ, लहरियादार रेखाएँ तथा मोर और मुर्गे हैं।

ठप्पों से भी बरतनों पर स्वस्तिक, शंख, पत्ती, कमल, वृत्त के ऊपर तीर, हंसपंक्ति इत्यादि के आकार बनाये गये हैं। खोदाई करके भी पात्रों को

---

[1] स्टाईन—मेमायर—४२, पृ० २८।

[2] डी० ए० गार्डन-दी पाटरी इण्डस्ट्रीज आफ दी इण्डो इरानियन बार्डर-एनशण्ट इंडिया त० १०, १—पृ० १८५, फलक ७,-९ फलक ९-२।

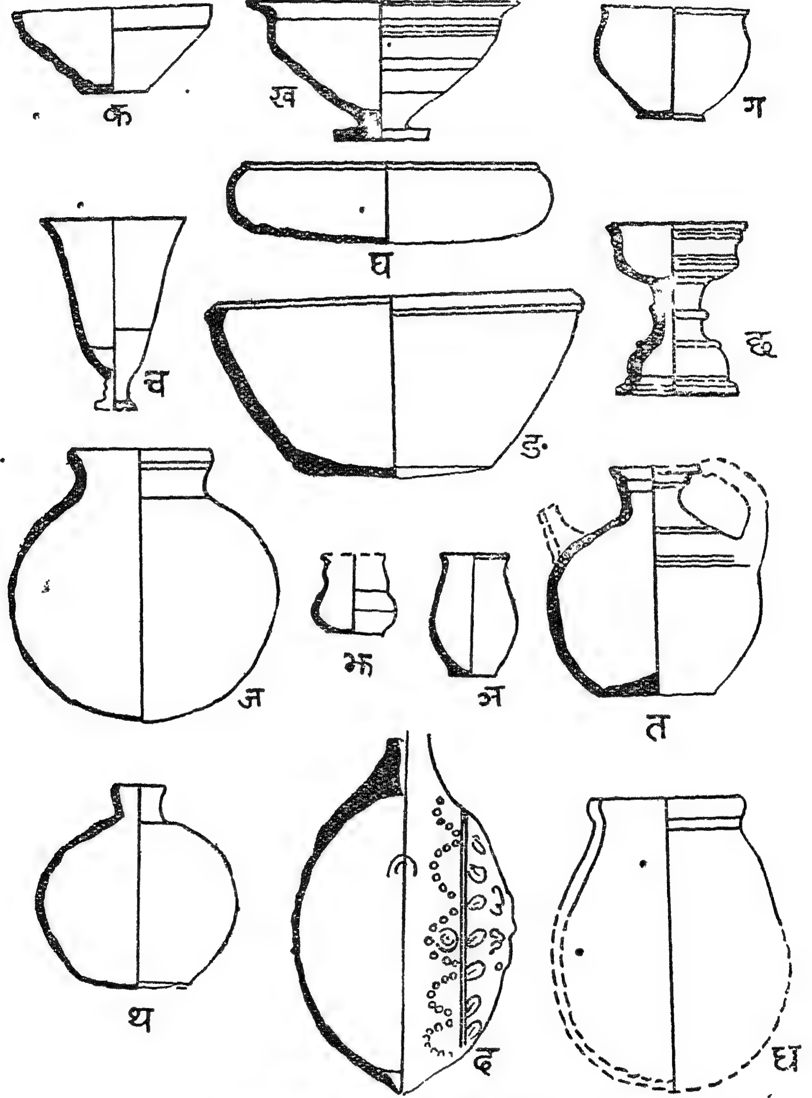
[3] डी० एच० गार्डन—वही फलक ९-१९ ए०, फलक ७-१०।

[4] ए० घोष—तक्सिला (सिरकप) १९४४-४५ एनशण्ट इंडिया नम्बर ४ पृ० ४५।

[5] कुछ इसी प्रकार रोमन लोग अपने लाल बरतन बनाते थे—ई – रोजेन्थाल—पाटरी एण्ड सिरामिक्स—पृ० २१।

[6] ए० घोष—उपर्युक्त पृ० ४८।

सुशोभित किया गया है। एक पात्र पर तो कौड़ी चिपकाई हुई मिली है।[1] इन पात्रों के अभारतीय आकार स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। (फलक १३)



तक्षशिला सिरकप के बरतन (फलक १३)

यहाँ का कसोरा (फलक १३ क) तो प्रायः दूसरे कुषाण स्तरों के कसोरे से बहुत मिलता हुआ है। इसी प्रकार मसाले रखने के छोटे पात्र (फलक १३ झ, ञ,) भी हस्तिनापुर से प्राप्त इसी प्रकार के बरतनों के ही आकार के

[1] ए० घोष—उपर्युक्त पृ० ५०।

हैं। लम्बा लोटा (फलक १३ घ) अहिछत्र तथा हस्तिनापुर से प्राप्त लम्बे लोटों के आकार का है। परन्तु ऊँची पेंदी का प्याला (ख) अथवा लम्बा प्याला(च) चौकी(छ) इत्यादि पूर्वी क्षेत्रों के बरतनों से भिन्न हैं। ऊँची पेंदी के प्याले (१३ ख) प्रायः सिरकप के सभी स्तरों से प्राप्त हुए हैं। इस कारण इसे इस स्थान का विशेष पात्र कहा जा सकता है। इसका कोना निकला हुआ कन्धा, चिपटी पेंदी, चिपटी कोर, गड़ारीदार ग्रीवा इस बरतन की विशेषताएँ हैं। इस पर लाल लेप लगाया गया है। किसी-किसी पर चित्रकारी भी है। घण्टी के आकार का प्याला फलक १३ (ख) पर है। इस पर नारंगी रंग का लेप है। इस प्रकार के प्याले भी प्रायः सिरकप की प्रत्येक सतह से प्राप्त हुए हैं।

थाली या भिक्षापात्र जो फलक १३ (घ) पर दिखाया गया है वह प्राचीन भिक्षापात्र से भिन्न है। इसकी कोर पर धारी कटी है जो इस पात्र को एक पतली ग्रीवा प्रदान कर देती है। इस पर भी चटक लाल लेप है। इस प्रकार की थालियाँ भी प्रायः सिरकप के सभी स्तरों से पायी गयी हैं। धूपदान भी सिरकप में सभी स्तरों से प्राप्त हुए हैं। इन पर भी लाल लेप है। इसकी पेंदी पोली है और इसके भीतर की ओर किसी वस्तु के जलाये जाने के चिन्ह हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि यह धूपदान की भांति व्यवहार में लाया गया है। फलक १३ (त) पर एक गडुआ है जिसमें टोंटी और हाथ दोनों ही बने हैं। यह कूजे की भांति का बरतन कदाचित् किसी धातु के बरतन की प्रतिकृति ज्ञात होता है। यह पात्र भी इस युग के प्रायः सभी स्तरों पर पाया गया है। फलक १३ 'ज' पर एक गगरी है जैसी कुषाण काल के सभी स्थानों से मिली है। यह भी लाल रंग से रंगी है। फलक १३ 'थ' एक छोटी सी सुराही है जिसका छोटा मुँह तथा फैला हुआ शरीर कुषाणकाल की कला का द्योतक है। यह सिरकप के ऊपर के स्तर से प्राप्त हुई है जो प्रायः ईसा पश्चात् १७५ का है) यह हलके लाल रंग की है इस पर कोई लेप लगा हुआ नहीं ज्ञात होता है। फलक १३ 'द' पर पानी की एक बोतल है जो कदाचित् अश्वारोही अपने बगल में लटकाते थे। यह दो भागों में बनाया गया है तथा इसमें एक मुँह और दोनों ओर लटकाने के हेतु दो कुण्डे बने हैं। इस पर कौड़ी लगाकर इसे सुन्दर बनाने का प्रयत्न किया गया है। इससे ऐसा अनुमान होता है कि यह किसी सेनानायक के पानी पीने की बोतल रही होगी।

इस प्रकार हमें सिरकप के प्रमाण से यह स्पष्ट हो जाता है कि यवन (ग्रीक) लोगों के भारत आगमन के पश्चात् भारतीय मिट्टी के बरतनों की कला पर एक विशेष प्रभाव पड़ा जो धीरे-धीरे उत्तर से दक्षिण की ओर बढ़ा और

कुषाणकाल तक ये आकार-प्रकार प्रायः सारे उत्तरी भारत में व्याप्त हो गये।[1]

रूपड़ की खोदाई के फलस्वरूप जो यवन कुषाण स्तरों से मिट्टी के बरतन प्राप्त होते हैं, उनको भी देखने से उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि होती है। (फलक १४ ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ) टोंटी और हाथ लगे हुए गडुए जैसे तक्षशिला (फलक १३ त) और हस्तिनापुर[2] से प्राप्त हुए वैसे ही यहाँ भी मिले हैं (ङ), कसोरे (च), लम्बे लोटे (ठ), गुलाब पाश (ज) ऊँची पेंदी का प्याला, (छ) मसाले के छोटे बरतन (झ, ञ) रोशनाई का बोरका (इ), पक्षियों के खाने के बरतन (ड, ण) इत्यादि सभी इसी प्रकार के बरतन हस्तिनापुर से भी प्राप्त हुए हैं। (फलक ११) इस प्रकार एक प्रवाह उत्तरी भारत से दक्षिण की ओर जाता हुआ दिखाई देता है। इन बरतनों को सुन्दर बनाने के हेतु जो ठप्पे लगाये गये उनके चिह्न प्रायः बौद्ध धर्म से सम्बन्धित हैं जैसे त्रि-रत्न। इससे ऐसा ज्ञात होता है कि उस समय पुनः बौद्धधर्म की एक लहर उत्तरी भारत में आयी जिसने कुम्हारों को भी अपने बरतनों पर ये चिह्न बनाने को विवश किया। ठप्पे लगे हुए बरतन सादे बरतनों के पश्चात् व्यवहार में आने लगे होंगे, ऐसा अनुमान है। परन्तु यह भी निश्चित् रूप से नहीं कहा जा सकता क्योंकि उत्तरी काली चमक वाले कुछ बरतनों पर भी ठप्पों की छाप है जैसा पहिले लिखा जा चुका है।

रूपड़ से प्राप्त बरतन भी हस्तिनापुर, दिल्ली, अहिच्छत्र की भांति लाल रंग के हैं। इन पर एक प्रकार का लेप चढ़ाया गया है। इस काल में भली-भांति मांडी हुई मिट्टी से नहीं बनाये जाने के कारण ये उतने सुगढ़ नहीं हैं जितने मौर्यकाल के या शुंग काल के हैं। कदाचित देश में अशांत वातावरण होने के कारण इनके बनाने में या पकाने में पर्याप्त समय नहीं दिया गया होगा जिससे इनकी कोर में बीच की मिट्टी कुछ सिलेटी रंग की रह गयी है और लेप के नीचे ये बहुत चिकने नहीं हैं। यहाँ से प्राप्त बरतन भी ठप्पों से सुशोभित किये गये हैं। (फलक १२) इनमें प्रायः त्रिरत्न, नन्दीपाद, वट वृक्ष के पत्ते स्वस्तिक इत्यादि के आकार प्राप्त हुए हैं।[3]

इस काल के हस्तिनापुर के बरतन प्रायः लाल रंग के हैं। ये सब चाक पर बने हैं। अधिक बरतनों की मिट्टी अच्छी प्रकार माड़ी हुई नहीं है। ऐसा ज्ञात होता है कि बरतनों को पकाने के पश्चात् इन्हें रंग से धो दिया

---

[1] वाई० डी० शर्मा—एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टारिकल साइट्स, एनशण्ट इंडिया नं० ९ पृ० १२६, फिगर ७, ८।

[2] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिनापुर, एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११ फिगर २३—५।

[3] वाई० डी० शर्मा—एनशण्ट इण्डिया नं० ९ फिगर ७।३—११ इत्यादि।

गया है परन्तु ध्यान पूर्वक देखने से पता लगता है कि इन पर लेप दिया गया होगा। इन बरतनों में भीतर की ओर मुड़े हुए कुषाणकालीन कसोरे और परई, टोंटीदार सुराही, घुण्डीदार ढक्कन, रोशनाई रखने के बोरके, पतली ग्रीवावाले गुलाबपाश, हण्डे के रूप के छोटे बरतन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन बरतनों पर खोदाई का काम तथा ठप्पे से उभारदार नक्काशी बनायी गयी है जिनमें स्वस्तिकों, त्रिरत्न, मत्स्य, पत्ती, फूल, वृत्त इत्यादि के आकार प्राप्त होते हैं।[1] ऊपर के स्तरों से कुछ टुकड़े ऐसे भी प्राप्त हुए हैं जिन पर काले रंग से चित्रण किया गया है।

कसोरे और परई प्रायः हल्के लाल रंग के हैं। इनकी कोर प्रायः भीतर की ओर कुछ दबी हुई है, पेंदी चिपटी है तथा मुँह फैले हुए हैं।[2] बगल से इनकी रेखा पेंदी से मुँह तक प्रायः ठीक तिरछी बनती है। इस प्रकार के कसोरे तथा परई प्रायः प्रत्येक स्थान से इस स्तर पर प्राप्त हुए हैं।[3] इन कसोरों की मिट्टी भली-भांति माड़ी हुई नहीं है इससे ऐसा ज्ञात होता है कि ये सस्ते बनते थे और एक बार व्यवहार करके फेंक दिये जाते थे। जिस संख्या में ये प्राप्त होते हैं उससे भी इसी बात की पुष्टि होती है (फलक ११—घ।)

दूसरे प्रकार के बरतन गोल पेंदी के प्यालों की भांति के हस्तिनापुर से प्राप्त हुए हैं। कदाचित् ये गेंडुरी पर रखे जाते होंगे अन्यथा ये पृथ्वी पर खड़े तो हो नहीं सकते। कटे हुए आधे नारियल की भांति ये देखने में बड़े सुन्दर प्रतीत होते हैं (फलक ११—ग।) इन पर लाल रंग की धुलाई दिखाई देती है। इस प्रकार कुछ बरतनों में अरघे की भांति मुँह भी बने रहते हैं जैसे अहिच्छत्र के एक बरतन में है।[4]

कुछ रोशनाई के बोरके की भाँति के बरतन प्रायः कुषाण स्तरों से सभी खोदाइयों में प्राप्त हुए हैं। क्या ये वास्तव में बोरके की भाँति व्यवहृत होते थे? जिस प्रचुर मात्रा में ये राजघाट की सन् १९५७ की खोदाई में प्राप्त हुए हैं, उसको देखने से तो यह अनुमान करना पड़ेगा कि उस स्थान पर कोई पाठशाला रही होगी, अन्यथा इतने बोरकों की आवश्यकता क्यों

---

[1] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिनापुर इत्यादि एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११—पृष्ठ १७।

[2] बी० बी० लाल—उपर्युक्त पृष्ठ ६५।

[3] १९५७ की राजघाट की खोदाई में इस प्रकार के कसोरे तथा परई बहुत अधिक मात्रा में कुषाणकाल के स्तरों से प्राप्त हुए हैं।

[4] ए० घोष—दी पाटरी आफ अहिच्छत्र—एनशण्ट इण्डिया नं० १ फिगर २—३४।

पड़ी ?। ये दो प्रकार के बनते थे—एक खुले मुँह के जिनके बगल में रस्सी बाँध कर लटकाने के हेतु छिद्र हैं तथा (फलक ११ च) दूसरे जिनके ऊपर के ढकने हैं। इन बोरकों के ढकनों को रखने के हेतु एक अलग स्थान बना है (फलक ११ फ) जैसा अहिच्छत्र से प्राप्त बोरकों में दिखाई देता है।[1] लम्बी ग्रीवा वाले गुलाबपाश की भाँति के बरतन प्रायः कुषाणकाल की सतह पर बहुत से स्थानों से प्राप्त हुए हैं।[2] इनकी प्रायः ऊपर की ग्रीवा ही सब स्थानों से प्राप्त हुई हैं, परन्तु राजघाट की खोदाई में एक अण्डे के आकार की भाँति का नीचे का भाग भी मिला है जिसके एक ओर टोंटी बनी हुई है। मुँह का भाग अभी हुई खोदाई में प्राप्त हुआ है। सब भागों को जोड़ने से ऐसा ज्ञात होता है कि यह मद्य रखने की सुराही रही होगी। इस प्रकार इसकी ग्रीवा को गुलाबपाश की ग्रीवा अथवा सुगन्धित द्रव्य छिड़कने की ग्रीवा कहना अब बहुत उचित ज्ञात नहीं होता। इस ग्रीवा की चोटी पर एक छोटा सा छिद्र बना रहता है और एक छिद्र चोटी के नीचे के चिपटे भाग में रहता है। ये छिद्र कदाचित् इस कारण बनाये जाते थे कि पेय पदार्थ गिराने में सुविधा हो। अहिच्छत्र से जो इस प्रकार के बरतनों की ग्रीवा प्राप्त हुई हैं उनमें एक बहुत अच्छी बनी हुई है (फलक ११—छ)। यह गहरे लाल रंग की है और इस पर का लेप चमकदार है। राजघाट से प्राप्त ग्रीवा तथा उसका निचला भाग हलके नारंगी रंग का है तथा उस पर चमक भी अच्छी है। यह बहुत पतला बना हुआ है। इस प्रकार की ग्रीवा कौशाम्बी, झूँसी इत्यादि स्थानों से भी कुषाण स्तरों से प्राप्त हुई हैं।[3]

इस युग की अथरी आज की अथरियों से बहुत कुछ मिलती-जुलती है, परन्तु इसकी बगल सीधी है, आज की भाँति गोलाई लिए नहीं। पेंदी तो आज की ही भाँति गोल है (फलक ११ ज)। कोर भी बाहर की ओर निकली हुई है। ऐसा ज्ञात होता है कि मिट्टी के भिक्षापात्रों की इस युग में चलन कम हो गयी थी क्योंकि इस युग में वे बहुत कम मिलते हैं। कदाचित् ये धातु के बनने लग गये थे, एक-आध जो कहीं दिखाई दे जाते हैं उनका आकार भी कुछ प्राचीन भिक्षापात्रों से भिन्न है। अहिच्छत्र से जो एक पात्र इस श्रेणी का मिला है, उसका बाहरी भाग गड़ारीदार है (फलक ११, ड)। बना भी यह मामूली मिट्टी का है। कदाचित् इस पर कोई रंग था जो अब उड़ गया है। यह कुषाणकाल के प्रारम्भिक वर्षों का है।

---

[1] ए० घोष—दी पाटरी आफ अहिच्छत्र—एनशण्ट इण्डिया नम्बर १—फिगर ३-४४।

[2] राजघाट की खोदाई १९५७।

[3] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन्स एट हस्तिनापुर—एनशण्ट इण्डिया १०-११ पृष्ठ ६६।

यहाँ के मसाले रखने के छोटे पात्रों के भी विविध आकार हैं। ये प्रायः ३ इंच ऊँचे हैं। इनको रंग में धो दिया गया है, परन्तु इनके आकार प्रायः विदेशी ज्ञात होते हैं। इनकी जो रेखाएँ बनती हैं उनमें भारतीय लोच का अभाव है। (फलक ११—ट, ठ, ढ, ण, त।)

बड़े बरतनों में हंडिया, गगरी, कुण्डे हस्तिनापुर से प्राप्त हुए हैं। इन पर प्रायः ठप्पे से विविध चिन्ह छपे हुए हैं तथा विविध आकार खुदे हैं। (फलक ११—द, ध)। हाथदार बरतन बहुत कम प्राप्त हुए हैं परन्तु टोंटीदार बरतन मिले हैं। यहाँ एक करवे की भाँति का बरतन मिला है जिसकी टोंटी सीधी है। यों टोंटी बहुत से बरतनों की अलग से प्रायः सभी खोदाइयों में मिली है। हस्तिनापुर में एक मकर-मुख मिला है।[1] राजघाट की खोदाई में तो बहुत से मकर-मुख, एक गज-मुख, एक मनुष्य-मुख इत्यादि प्राप्त हुए हैं। खोदाई तथा छापे हुए बरतनों के कुछ टुकड़े फलक १२ पर छ, ज, झ, ञ, त, थ पर दिखाये गये हैं। ये टुकड़े हस्तिनापुर से प्राप्त हुए हैं। इनमें त्रिशूल, कमल, स्वस्तिक, पत्ते, हंस-पंक्ति के आकार विशेष रूप से पाये जाते हैं। राजघाट की खोदाई से तो एक पात्र पर त्रिरत्न के अतिरिक्त सारनाथ की बौद्ध रेलिंग का भी आकार मिला है।

अहिच्छत्र की खोदाई में जो मिट्टी के बरतन इस युग के प्राप्त हुए, वे बहुत कुछ हस्तिनापुर से प्राप्त बरतनों से मिलते हुए हैं जैसे कसोरा, परई[2] मसाले रखने के छोटे बरतन,[3] गगरी,[4] अथरी[5] इत्यादि। कसोरे तो इसी प्रकार के महोली से (मथुरा के पास) भी प्राप्त हुए हैं।[6] अहिच्छत्र से प्राप्त बरतनों से भिन्न तो अहिच्छत्र की कुछ कढ़ाइयाँ हैं जिनमें उठाने के लिए हाथ लगे हुए हैं (फलक १४ क)। बोरकावाले बरतन में भी हाथ लगे हैं (फलक ११ फ), गोल कटोरा है जिसमें टोंटी लगी हुई है। लम्बी लुटियाँ (फलक १४ ग) जैसी राजघाट की भी खोदाई में मिली है, यहाँ भी इसी स्तर से प्राप्त हुई हैं।

---

[1] वी० वी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिनापुर-एनशण्ट इण्डिया १०·११ प्लेट ३२-१७।

[2] ए० घोष—दी पाटरी आफ अहिच्छत्र— एनशण्ट इण्डिया, फिगर २, ३० तथा वी० वी० लाल उपर्युक्त, फिगर २०-१।

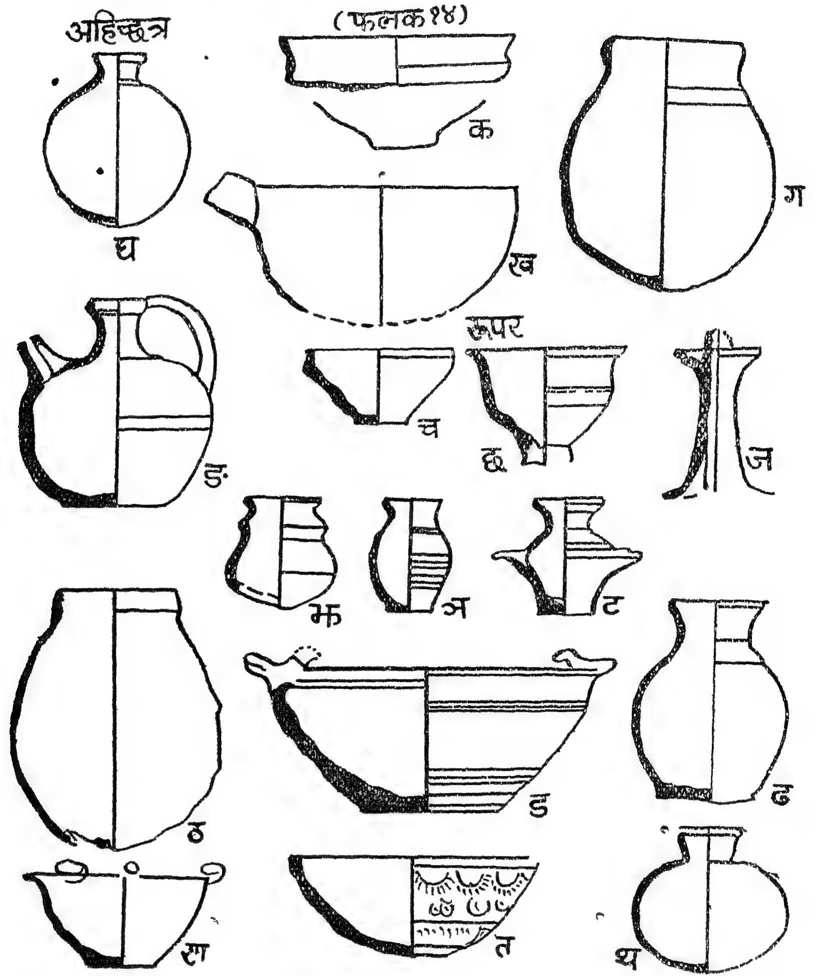
[3] उपर्युक्त, अहिच्छत्र फिगर २।३५, हस्तिनापुर—फिगर २०।२४ ए।

[4] उपर्युक्त अहिच्छत्र, फिगर ३।४३, हस्तिनापुर, फिगर २०।१६ या अहिच्छत्र ३।४८, हस्तिनापुर २३।६

[5] उपर्युक्त अहिच्छत्र फिगर ३।४५, हस्तिनापुर, फिगर ३०।२१।

[6] जनरल यू० पी० हिस्टारिकल सोसाइटी—ख १५-१९४१ प्लेट १।

यहाँ से प्राप्त बरतनों के टुकड़ों पर जो ठप्पों के उभारदार कारीगरी के नमूने मिले हैं उन पर नन्दिपाद, स्वस्तिक, त्रिशूल के दोनों ओर सर्प, मत्स्य, चक्र, त्रिरत्न, धर्मचक्र के साथ चैत्य, अर्धचन्द्र के साथ कमल, बट के पत्ते,



हंस-पंक्ति इत्यादि हैं।[1] राजघाट से प्राप्त इस युग के एक बरतन के टुकड़े पर हस्तिपंक्ति भी है।

दिल्ली के पुराने किले की खोदाई में से जो कुषाणकालीन बरतन प्राप्त हुए हैं[2] वे भी प्रायः वैसे ही हैं जैसे हस्तिनापुर से प्राप्त हुए हैं। इनमें टोंटी लगा

[1] ए० घोष—दी पाटरी एट अहिच्छत्र—एनशण्ट इण्डिया नं० १, पृ० ४६।

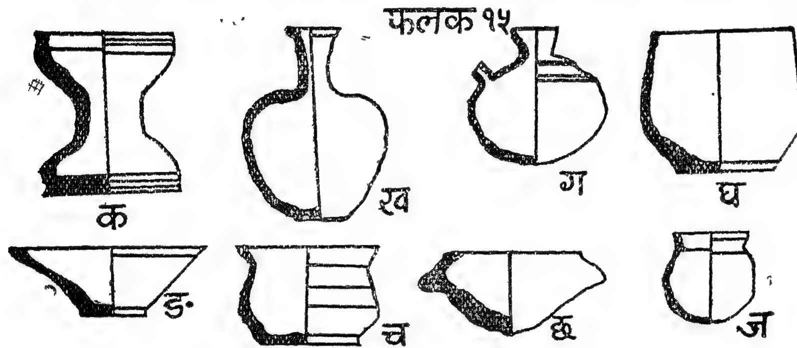
[2] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५४-५५ पृ० १३, १४।

हुआ गडुआ, कसोरा, ठप्पे से आभूषित गगरियाँ इत्यादि हैं।[1] ये भी हलके लाल रंग के हैं। मथुरा में कटरा के टीले से कुषाणकालीन स्तर पर[2] जो मिट्टी के बरतन प्राप्त हुए हैं और मथुरा म्युजियम में रखे हैं उनका आकार-प्रकार बहुत कुछ अहिच्छत्र के बरतनों से मिलता हुआ है। कौशाम्बी से भी इस युग के जो बरतन प्राप्त हुए हैं, वे भी इसी प्रकार के हैं जैसे अहिच्छत्र के हैं। राजघाट और कौशाम्बी के इस युग के बरतन तो प्रायः एक से ही हैं।[3]

पाटलिपुत्र में इस काल के बरतनों के साथ हुविष्क का सिक्का मिलने से ये बरतन प्रामाणिक माने जा सकते हैं। इन बरतनों में लम्बे मद्य पीने के प्याले, बोतलों के आकार के लोटे, मसाला रखने के पात्र इत्यादि हैं।[4]

बानगढ़ (जिला दिनाजपुर) से जो कुषाणकालीन मिट्टी के बरतन प्राप्त हुए हैं, फलक १५ क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज पर दिखाये गये हैं। यहाँ से भी धूपदान, लम्बी ग्रीवा की बोतल, टोंटीदार गडुए, कसोरे इत्यादि प्राप्त

फलक १५



बानगढ़ से प्राप्त बरतन

हुए हैं। इन पर भी एक प्रकार का लाल लेप है तथा ठप्पे से विविध आकार अंकित किये गये हैं। कुछ बरतनों पर खोदाई करके भी कुछ चिह्न अंकित किये गये हैं। चन्द्रकेतुगढ़ (बंगाल) से भी कुषाणकालीन बरतन जैसे कसोरा, लम्बी ग्रीवा के बोतल इत्यादि प्राप्त हुए हैं। उज्जैन की खोदाई में भी यवन और कुषाणकालीन बरतन मिले हैं। इन पर भी एक

[1] ए० घोष—उपर्युक्त—प्लेट २४ बी०।

[2] ए० घोष—उपर्युक्त, पृ० १६।

[3] वाई० डी० शर्मा—एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टारिकल साइट्स-एनशन्ट इण्डिया नं० ९, पृ० १५५।

[4] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५५-५६ प्लेट ३३ ए०। (इनके आकार के हेतु पूर्वी भारतीय मिट्टी के बरतनों के साथ के फलक को देखिये)।

पतले लाल रंग का लेप है। ये भली प्रकार माड़ी मिट्टी के नहीं बने हुए हैं। कसोरे जिनकी कोर भीतर की ओर मुड़ी हुई है, बोरके, गुण्डी लगे हुए ढक्कन, गुलाबपाश की ग्रीवा, प्याले इत्यादि यहाँ से इस स्तर से मिले हैं।[1] कुछ बरतनों पर ठप्पे से विविध आकार स्वस्तिक, कमल, हंसपंक्ति इत्यादि के कलशों पर मिलते हैं। ये सब बरतन चाक पर बने हुए हैं।

इस प्रकार इस युग की मिट्टी के बरतनों की कहानी हमें इस निष्कर्ष पर पहुँचने को विवश करती है कि उत्तरी भारत में इस युग में बाहरी आक्रमणों के फलस्वरूप और यवन, शक तथा कुषाणों के भारत में बस जाने के कारण भारत की कलाकौशल पर विजातीय सभ्यता की अमिट छाप पड़ी जो इस काल के बरतनों पर स्पष्टरूप से दिखाई देती है। भारत के कुम्हारों ने पाश्चात्य आकारों को अपनाया, परन्तु वे इनको इस युग तक भारतीय साँचे में ढाल नहीं सके। यह कार्य तो गुप्तकाल में ही सम्पन्न हो सका। इस युग में तो बाहर के प्रभाव भारत में आते ही रहे। दक्षिण भारत के बरतनों पर रोम का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। भारत के उस भू-भाग के बरतनों के विकास की कहानी ही अलग है। यवन कुषाण युग के बरतन हमें स्पष्ट रूप से यह बताते हैं कि यहाँ की कारीगरी जो उत्तरी भारतीय काली चमक के बरतनों के बनाने में पायी जाती है, वह नितांत लुप्त हो गयी। ढकी भट्ठियों के स्थान पर खुले आंवें लगने लगे। शीघ्र बरतन प्रस्तुत करने की आवश्यकता ने मिट्टी को जैसे-तैसे मांडकर बरतन बनाने के लिए कुम्हारों को विवश किया तथा बरतनों के दोष छिपाने के हेतु उन्हें एक मोटा लाल लेप लगाना पड़ा। बड़े बरतनों पर इस लेप का अभाव है। लेप के नीचे मिट्टी का बरतन बहुत साफ नहीं है। कदाचित् बरतन चिकने और बढ़िया न बनने के कारण ही उन पर ठप्पा और खोदाई करके विविध आकारों से उन्हें सुंदर बनाने का प्रयत्न किया गया है।

गुप्तकालीन मृत्पात्र

प्रायः आज के भारतीय पुरातत्ववेत्ता प्रस्तर युग के अन्वेषण में ऐसे खो गये हैं कि उन्हें प्राचीन भारत के स्वर्ण युग के विषय में विचार करने का अवकाश ही नहीं मिलता। हम यह मान कर चलते हैं कि इस युग के विषय में तो हमें पर्याप्त जानकारी है। इसके पहले के काल के विषय में 'हमें' पता लगाना चाहिये। परन्तु इस काल के प्रचुर मात्रा में लेख, सिक्के, मूर्तियाँ, मन्दिर इत्यादि मिलने पर भी हम अभी बहुत से विषयों में अंधकार में हैं। हाल में ही हुई भारत सरकार के पुरातत्व विभाग की १९५७ की गोष्ठी में भी इस विषय पर चर्चा हुई थी परन्तु अभी तक इस युग के मिट्टी के

[1] ए० घोष—इण्डियन आर्कैआलोजी—१९५६-५७ पृ० २८।

बरतनों पर अथवा इस युग की और दूसरी कलाओं के ऊपर कुछ बहुत से लेख तो अभी तक सामने नहीं आये। गुप्तकालीन मिट्टी के बरतनों के संबंध में तो केवल एक लेख डॉ० वासुदेव शरण जी का ललितकला में प्रकाशित हुआ है, वह भी गुप्तकालीन अहिच्छत्र से प्राप्त बरतनों की सुसज्जा पर।[1]

जब यह कहा जाता है कि इस युग में कला-कौशल ने एक विशेष रूप धारण किया तथा कुषाणकाल के विजातीय प्रभावों को भारतीय सांचे में ढालकर उन्हें पूर्ण भारतीय बना दिया तो क्या ये प्रभाव हमारे मिट्टी के बरतनों पर नहीं पड़े और क्या उनके आकार-प्रकार तथा सजावट को भारतीय कारीगरों ने भारतीयता नहीं प्रदान की ?

गुप्त राज्य की सीमा चन्द्रगुप्त प्रथम के राज्यतक तो कदाचित् प्रयाग के आगे नहीं बढ़ी थी परन्तु समुद्रगुप्त का राज्य तो उत्तर भारत में चम्बल तक, पूर्व में आसाम तक, पश्चिम में मालवा तक फैला हुआ था।[2] इतने बड़े साम्राज्य में इस काल के बरतन प्रायः उत्तर भारत के सभी स्थानों से मिलने चाहिये तथा एक स्थान से दूसरे स्थान में सम्पर्क अधिक होने के कारण इनमें समानता भी होनी चाहिये। परन्तु सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि गुप्त साम्राज्य तो उत्तर भारत में प्रायः ३०० वर्ष तक चलता रहा। उसके अलग-अलग काल के बरतन खोदाई के समय अलग-अलग नहीं रखे गये जिससे उनके इस युग के विकास की कहानी पूर्ण रूप से उपस्थित हो सकती।

दिल्ली के पुराने किले की खोदाई के फलस्वरूप जो गुप्तकालीन स्तर प्राप्त हुए उन स्तरों के बरतनों का विवरण अभी तक उपलब्ध नहीं है क्योंकि यहाँ की खोदाई अभी तक पूरी नहीं हुई है।[3]

हस्तिनापुर से जो स्तर प्राप्त हुए हैं उनमें गुप्तकाल के प्रारम्भिक बरतनों के होने की सम्भावना हो सकती है किन्तु विकसित गुप्त-युग के स्तर तो यहाँ से मिले ही नहीं हैं।[4] इन स्तरों के बरतनों में जो गुप्त बरतनों की भांति के हैं वे फलक १६ पर दिखाये गये हैं। इनमें नाटी ग्रीवा के गगरे (क, घ), गगरे जिनकी बार बाहर निकली हुई है (ण, थ, द, म) टोंटीदार गडुए (ख, ड), लोटे (ग, ट), कसोरे (च) हंड़िया (ठ, ढ) गोल पेंदी के प्याले (ङ) तो गुप्तकालीन अवश्य ज्ञात होते हैं। यों तो यहाँ से प्राप्त चिड़ियों को दाना

---

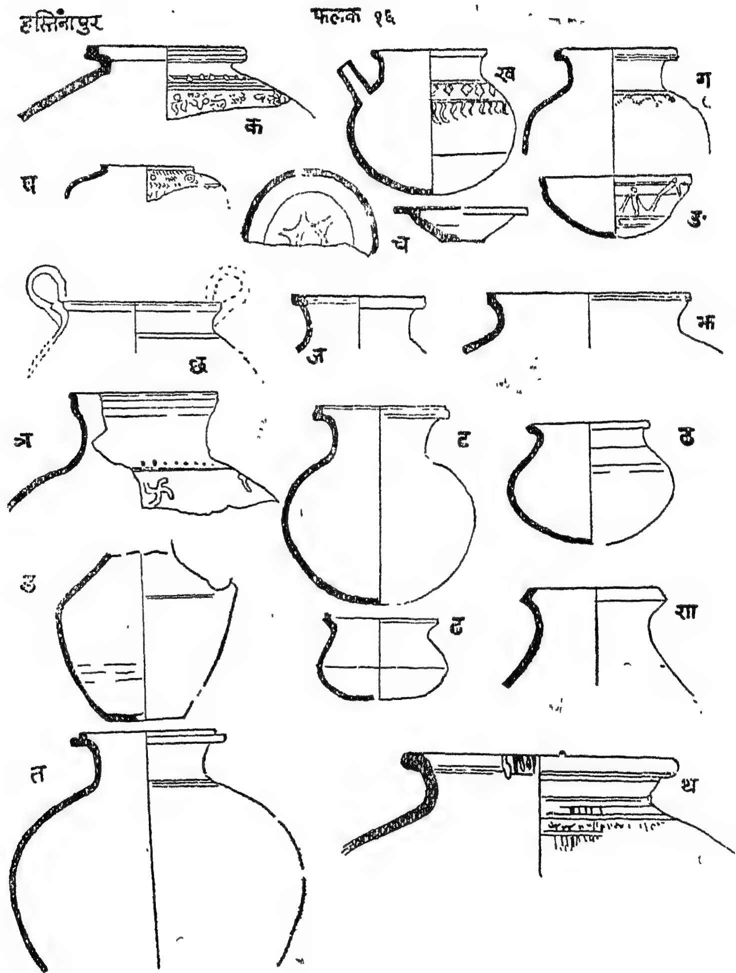
[1] डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल—पाटरी डिजाइन्स फ्राम अहिच्छत्र, ललितकला नं० ३-४ अप्रैल १९५६-५७, पृ० ७४-८१।

[2] आर० सी० मजूमदार—एनशण्ट इण्डिया पृ० २४२।

[3] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५४-५५ पृ० १४।

[4] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन्स एट हस्तिनापुर इत्यादि, एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११ पृ० २४, फिगर ३।

खिलाने के पात्र भी इसी युग के प्रतीत होते हैं क्योंकि इस काल में पक्षियों को पालने की प्रथा बहुत चल पड़ी थी। इसी प्रकार के बरतन इसी युग के रूपड़ से भी प्राप्त हुए हैं।[१] यहाँ से प्राप्त इस युग के पात्र प्रायः लाल हैं तथा इनकी बार प्रायः ग्रीवा से बाहर निकली हुई है (ग, ट, थ इत्यादि) तथा कोर पर कुछ रेखायें भी बनी हुई हैं (ये विशेषतायें बयाना



[१] बी० बी० लाल—उपर्युक्त पृ० ६९, फिगर २३-३ तथा वाई० डी० शर्मा—एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टारिकल साइट्स, एनशण्ट इण्डिया नं० ९, पृ० १२८, फिगर ६-२९।

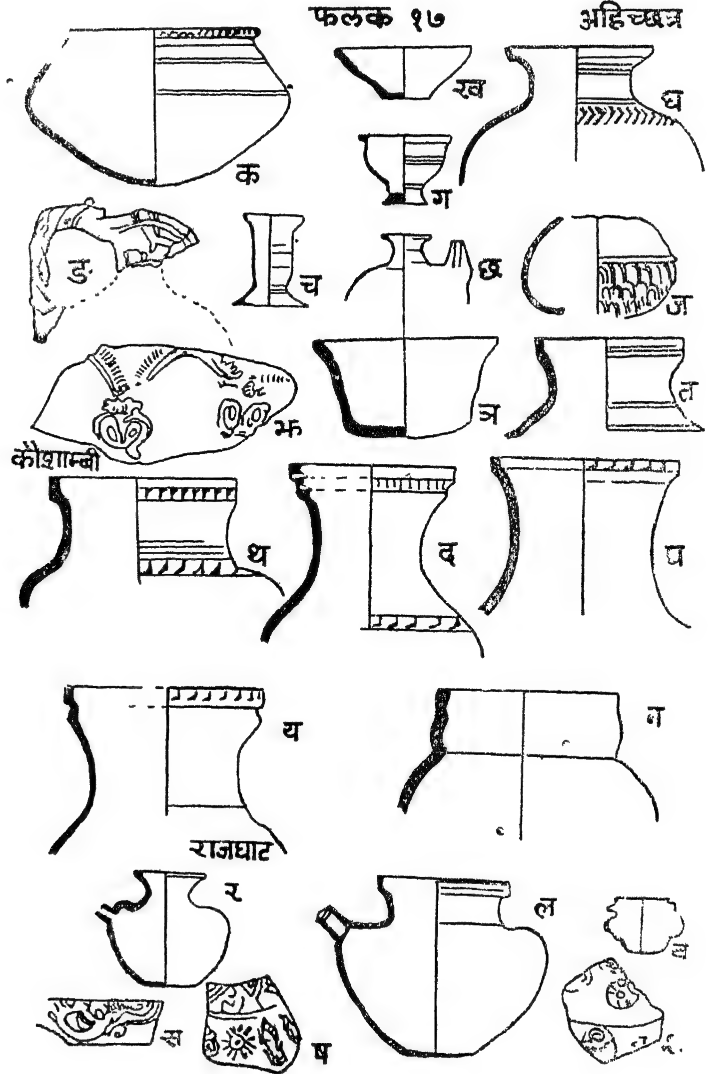
से प्राप्त कांस पात्र में भी पाई जाती है।[1]) इन बरतनों में गगरे (क) पर ग्रीवा के नीचे फूल-पत्ती छपी हुई हैं। गडुये पर ग्रीवा के नीचे दो खाने हैं, एक में ईंट बनाई गयी है और दूसरे में हंस-पंक्ति। (हंस-पंक्ति का चित्रण भी इस युग की विशेषता है।) कसोरे (च) के भीतर की ओर दो वृत्त बनाकर उसके बाहर अर्ध चन्द्र के आकार बनाये गये हैं। (यह चन्द्रमा का द्योतक हो सकता है।) एक गगरे की ग्रीवा के नीचे बिन्दी है और उसके नीचे सथिया (ञ); कुछ पर काले रंग से चित्रकारी भी है जैसे गगरे पर (क, घ, थ)।

सौभाग्य से अहिच्छत्र से प्राप्त बरतनों में गुप्त युग के बरतनों का अलग विवरण प्राप्त है।[2] इनके अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि गुप्त युग के प्राथमिक काल में बरतनों के आकार प्रायः वैसे ही चलते रहे जैसे कुषाण काल के हैं। ये बरतन मोटी बार के हैं और इन पर ठप्पे से विविध आकार बनाये गये हैं। प्रायः ये ईंटों के रंग के लाल लेप से आच्छादित हैं। पीछे चलकर साँचे में ढले बरतन प्राप्त होने लगते हैं जिन पर खोदाई के स्थान पर ठप्पे के काम अधिक पाये जाते हैं। इनका रंग भी गहरे लाल से सिन्धुरिया हो जाता है। जिन बरतनों पर बाहर लेप नहीं है उन पर कदाचित् विविध रंगों से चित्रकारी की जाती थी जो मिट्टी में रहने के कारण अदृश्य हो गयी है। अहिच्छत्र से इस युग के बरतनों में सबसे अधिक मात्रा में लाल लेप से आच्छादित चिकने घट प्राप्त हुए हैं। बरतनों के बाहर का शरीर दो या तीन बन्दों में विभक्त है। विभाजन के हेतु उभाड़दार पतली रेखायें बनाई गयी हैं। प्रायः एक बन्द सादा, लाल लेप से आच्छादित चिकना है और एक में ठप्पे से काम बना है और तीसरे में अबरक को पीस कर चपका दिया गया है। ऐसा अनुमान होता है कि ये क्रियायें बरतन को पकाने के पूर्व की जाती थीं। इसी प्रकार की हंड़िया प्राप्त हुई है (फलक १७ ज) जिसका बाहर का शरीर तीन भागों में विभाजित है। सबसे ऊपर के बन्द में अबरक के टुकड़े चिपकाये गये हैं, उसके नीचे के भाग पर लाल चमकीला लेप है तथा सबसे नीचे के बन्द में मछली के ऊपर दिउली के आकार बनाये गये हैं। ऐसी ही एक अथरी मिली है। इसका भी बाहरी शरीर तीन बन्दों में विभक्त है परन्तु इसके नीचे के बन्द में कुछ काम नहीं है। इसकी कोर पर रस्सी की बटन का चिह्न बनाया गया है (फलक २ क)। कदाचित् इस प्रकार के बरतनों को रस्सी के छीके

[1] ए० एस० आल्तेकर—काटलाग आफ गुप्त गोल्ड क्वायन्स इन दी बयाना होर्ड-फ्रण्टेसपीस।

[2] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—दी पाटरी आफ दी अहिच्छत्र, एनशण्ट इण्डिया नं० १, पृ० ४९।

पर लटकाते थे। इधर-उधर न खिसके इस हेतु इन बरतनों पर सम्भवतः रस्सी की बटन की भाँति के चिह्न अंकित कर दिये जाते होंगे (कोर पर काम कुषाण युग के बरतनों पर नहीं मिलता।) जो कसोरे का आकार (ख) यहाँ से प्राप्त हुआ है वह प्रायः कुषाण काल की ही भांति हैं परन्तु



इस युग के कसोरे कुषाणकाल के कसोरों से मोटे हैं। ऐसा अनुमान है कि इस युग में खाने के बरतन प्रायः धातु के बनने लग गये थे, इस कारण कसोरों पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। अहिच्छत्र से गुप्त युग का

धूपदान कुषाण युग से नाटा है और इसका पावा भी ठोस है। पहिले के युग के पावे खोखले और लम्बे हैं। गगरों के आकार पहिले के युग के गगरों के आकारों से भिन्न हैं। मुँह इनका चिपटा है, बार खड़ी है और उस पर रेखायें अथवा हंस-पंक्तियाँ खुदी हुई हैं। (घ) ग्रीवा इनकी नाटी है और शरीर सेव की भांति ऊपर से फैला हुआ तथा नीचे भीतर की ओर दबा हुआ है। कई गगरों पर पक्षी के पंख का आकार ठप्पें से छपा हुआ है (गगरा घ)। एक बरतन ऐसा भी प्राप्त हुआ है जिसका मुँह आगे से दबा दिया गया है जिसमें धार ठीक से गिरे (उस समय का करवा क्या ऐसा बनता था ?) यह बरतन तरल पदार्थ परोसने के काम में आता रहा होगा। इसके पिचकाये हुए मुख के कारण इसे बाहर से आया बताया गया है[1]। परन्तु इस प्रकार की पिचकाई हुई मुख की बच्चों को दूध पिलाने की सुतुहियाँ राजघाट की १६५७ की खोदाई में कुषाण युग की सतहों से बहुत सी प्राप्त हुई हैं। इस कारण केवल इस विशेषता से इसे बाहर से आया हुआ न समझना चाहिये। इस करवे के आकार के बरतन के हाथ पर रस्सी की बटन दिखायी गयी है जिसके कारण यह बरतन बहुत सुंदर लगता है। इस प्रकार की बटन कौशाम्बी से प्राप्त एक गडुए पर भी है जो कुषाण स्तरों से प्राप्त हुआ है।[2] यह बरतन काले चमकदार लेप से आच्छादित है जिससे यह भ्रान्ति होती है कि यह विदेशी है, क्योंकि इस युग के बरतन प्रायः लाल हैं। कौशाम्बी से प्राप्त उपर्युक्त गडुआ भी लाल है। यहाँ से प्राप्त गगरे तथा गडुए बड़े सुन्दर हैं। यहाँ का गडुआ (छ) तो बयाना से प्राप्त गडुए से बहुत मिलता है।[3] वैसी ही खड़ी टोंटी है और उसी आकार का शरीर है।

एक बरतन अहिच्छत्र से जो प्राप्त हुआ है उसका आकार तो बिलकुल कटहल के फल की भाँति है। इसके शरीर की ग्रीवा पर लाल रंग का चमकदार लेप है तथा नीचे के भाग में कटहल के कांटे उभारदार बनाये गये हैं[4]। कदाचित् इस पर हरा रंग भी था जो अब छूट गया है। यह एक विशेष बरतन रहा होगा क्योंकि इस भाँति के और बरतन नहीं मिले हैं।

बरतनों को सुशोभित करने के हेतु तोरण के साथ त्रिरत्न (झ), अष्ट दल कमल, शंख, हंस-पंक्ति, त्रिशूल, गंगा या नदी (वैतरणी) का आकार

---

[1] ए० घोष तथा पाणिग्रही—उपर्युक्त। पृ० ५०।

[2] के० एस० ३, डब्लू ए० १, ३-(१) पिट (डी) सील्डबाई, (२) श्री गोबर्धन राय शर्मा की कृपा से प्राप्त।

[3] ए० एस० आल्तेकर—काटलाग आफ गुप्त गोल्ड क्वायन्स—फ्राण्टेसपीस।

[4] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—उपर्युक्त पृ० ४९।

(स) जैसा सारनाथ के धमेक स्तूप पर अंकित है तथा जैसा इलोरा, गंगा मूर्ति के नीचे अंकित है।[1] मछली तथा चक्र (ष) (मछली कदाचित् वाराणसी का चिह्न था और चक्र तो बुद्ध के धर्मप्रवर्तन का चिह्न है ही), कुछ पर मकान का आकार[2], कुछ पर सथिया, कुछ पर मकान की खपड़े की छत का प्रणालीदार आकार[3] इत्यादि बने हैं। एक पर तो शूकर भी बना है[4]। ये सब आकार प्रायः ठप्पे से छापे गये हैं।

कुछ बरतन ऐसे भी मिले हैं जिन पर काले रंग से चित्रकारी की गयी है। यह चित्रकारी प्रायः बरतन पकाने के पश्चात् बरतन के लाल रंग पर की गयी है। ऐसे बरतन प्रायः ऊपर के स्तरों से मिले हैं जिससे ऐसा अनुमान होता है कि इस प्रकार के बरतन पीछे के युग में बनने लगे थे। प्रायः बरतनों पर एक चमकदार लेप है जो नारंगी के रंग से बहुत कुछ मिलता हुआ है जिससे इन्हें कुषाणकालीन बरतनों से अलग करने में कुछ सहायता मिलती है।

हाल की मथुरा की खोदाई में पाँचवें काल के जो स्तर प्राप्त हुए हैं उनसे गुप्त युग के प्रारम्भिक तथा पीछे के सिक्के, मुद्रायें तथा मृण्मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं, यह तो पता चलता है परन्तु यह नहीं ज्ञात होता है कि कुछ मिट्टी के बरतन भी मिले अथवा नहीं।[5] पूछ-ताछ से भी कुछ ज्ञात न हो सका कि वहाँ से किस प्रकार के बरतन प्राप्त हुए हैं।[6] केवल इतना मालूम हुआ कि इन स्तरों से भी मिट्टी के बरतन मिले हैं।

ठीक यही हाल कन्नौज की खोदाई का है।[7] वहाँ से भी तीसरे काल की जो मृण्मूर्तियाँ मिली हैं उनमें गुप्त युग की भी मूर्तियों का विवरण है।[8] परन्तु यहाँ से प्राप्त बरतनों का कोई विवरण उपलब्ध नहीं है।

---

[1] वासुदेव शरण अग्रवाल—पाटरी डिजाइन्स फ्राम अहिच्छत्र—ललितकला-अप्रैल, मार्च १९५६-५७, पृ० ७५ तथा इण्डियन आर्केआलोजी ५५-५६ प्लेट ३।

[2] वासुदेवशरण अग्रवाल—उपर्युक्त पृ० ७७-१७।

[3] वासुदेव शरण—उपर्युक्त पृ० ७७-२४।

[4] वासुदेव शरण—उपर्युक्त पृ० ७७ १४।

[5] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५४-५५, पृ० १५-१६।

[6] मथुरा राजकीय संग्रहालय के अध्यक्ष श्री वाजपेयी जी ने विभागीय सज्जनों को इस विषय में लिखने को कहा। उनको लिखने पर भी कोई संतोषप्रद उत्तर न मिला। केवल इतना ज्ञात हुआ कि मिट्टी के बरतन मिले हैं परन्तु अभी उनके आकार के फलक नहीं बन पाये हैं। यह खोदाई श्री एम० वेंकटा राम अइया तथा श्री वल्लभ शरण जी के तत्त्वावधान में हुई थी।

[7] ए० घोष—इण्डिन आर्केआलोजी १९५५-५६ पृ० १९-२०।

[8] ए० घोष—उपर्युक्त प्लेट २८ पी० ऊपर दाहिनी ओर स्त्री का मस्तक।

कौशाम्बी में जो बरतन घोषिताराम विहार के उन स्तरों के हैं जहाँ से गुप्तकालीन लेख भी मिला है[1], वे सब से प्रामाणिक माने जा सकते हैं। अब तो श्री गोवर्धनराय शर्मा ने इस विहार के विविध काल के पूरे चित्र भी उपस्थित कर दिये हैं।[2] यहाँ से प्राप्त बरतन[3] प्रायः अहिच्छत्र के बरतनों से आकार-प्रकार में मिलते हुए हैं। यहाँ के घटों के बार पर भी कुछ न कुछ काम बना हुआ है (फलक १७, थ, द, ध, य)। कुछ पर केवल रेखाएँ हैं (त), कुछ पर हंस-पक्ति बनी हुई है (थ, ध, य), एक बरतन (ध) के बार पर उल्टी हंस-पंक्ति है और ग्रीवा पर सीधी है।[4] यह बरतन गुप्तयुग के प्रारम्भिक काल का है, इस कारण इसका लेप ईंटे के रंग का है। एक गगरे पर (य) अबरक पीस कर चिपकायी हुई है।[5] एक बरतन विल्कुल धातु के बरतनों की भांति है (त)। इस बरतन पर केवल गेरू का रंग है तथा इसकी ग्रीवा कुछ लम्बी है परन्तु इसके आकार में भी भारतीयता लाने का प्रयत्न किया गया है। इस बरतन के देखने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इस काल में धातुओं के बरतन अधिक बनने लगे थे और उनकी मिट्टी में नकल होने लगी थी।

कौशाम्बी से एक पूर्ण घट का एक भाग प्रायः छठी शताब्दी के स्तरों से प्राप्त हुआ है। यह घट सांचे में ढालकर बनाया गया है। ऊपर ग्रीवा की ओर इसमें तोरण का आकार बनाया गया है और उस तोरण के सहारे विविध प्रकार के लटकन लटकाये गये हैं, जिनमें एक एक को छोड़ कर लटकन के नीचे के भाग में यक्षि कमल के फूल से प्रस्फुटित होती हुई दिखाई गयी हैं[6]। यह पूर्ण घट बहुत ही सुन्दर रहा होगा। (फलक २० झ)

सहेत महेत की खोदाई से प्राप्त बरतनों का पूर्ण विवरण तो प्राप्त नहीं है परन्तु जो थोड़ा बहुत मारशल की रिपोर्ट में मिलता है[7] उससे ऐसा ज्ञात होता है कि यहाँ गुप्त स्तरों से एक सुराही प्राप्त हुई है जिसमें

---

[1] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५५-५६, पृष्ठ २१, दी लीडर आफ जनवरी ७. १९५१ पृष्ठ १।

[2] ए० घोष—उपर्युक्त पृष्ठ २१।

[3] इन बरतनों का विवरण श्री जी० आर० शर्मा की कृपा से प्राप्त हुआ है तथा उनकी ही कृपा से बरतनों के आकार भी खींचने को मिले हैं।

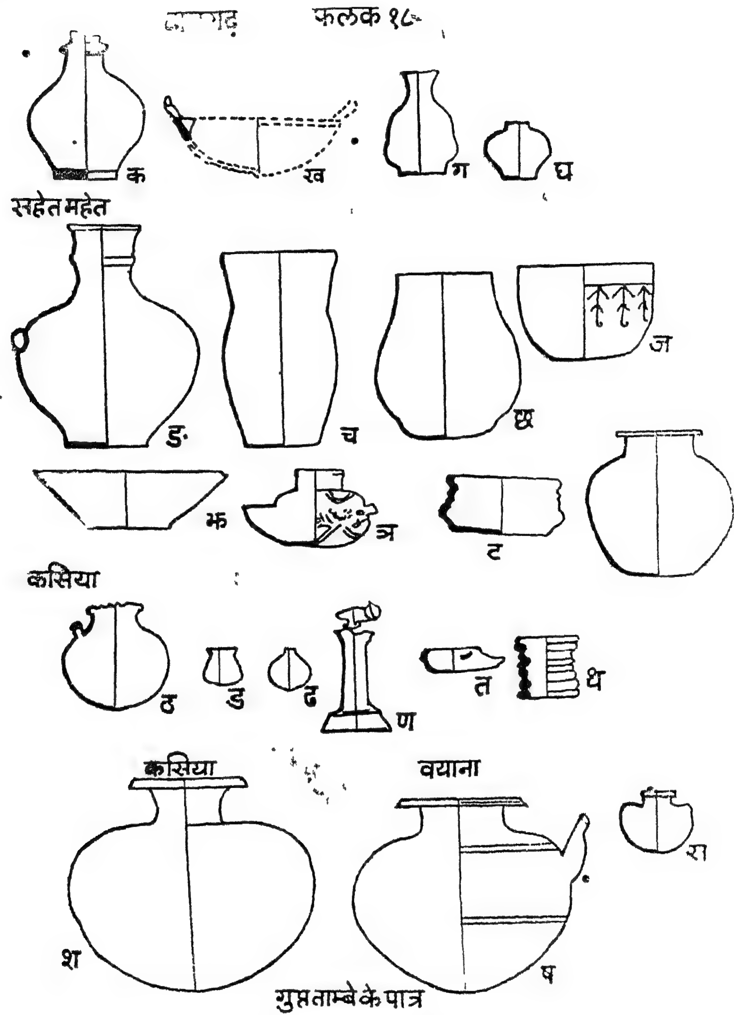
[4] के० एस० ४ ई० १, २९ पिट ए० सील्डबाई १–७'–९"।

[5] के० एस० ४, सी० २ ए० पिट ए० सील्डबाई ३।

[6] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५४-५५ पृष्ठ० १८ प्लेट ३३।

[7] जे० एच० मारशल—एक्सकबेशन्स एट सहेथ महेथ—अन्युअल रिपोर्ट आफ आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया १९१०-११ पृष्ठ २१-२२ प्लेट १०-७, ८, ९, १०, ११, १२, प्लेट १२-८, ९।

पानी गिराने के हेतु मुँह भी बना है (फलक १८ ङ), एक गिलास की भांति का लम्बा पुरवा मिला है (च) जो चार इञ्च ऊँचा है, एक छोटा प्याला प्राप्त हुआ है (ज) जिस पर बाहर की ओर तोरण का आकार बना हुआ है, एक साना गलाने की घरिया है जो ३½ इञ्च ऊँची है (छ)।



दो प्रकार के दीपक प्राप्त हुए हैं; एक तो दिउली की भांति का है, जिसमें एक ओर बत्ती रखने के हेतु मुँह बना है (झ), दूसरा सुराही के ढंग पर बना हुआ है। एक ओर दीपक की बत्ती रखने का स्थान है तथा दूसरी ओर उठाने के हेतु मूठ लगी हुई है, तेल ऊपर से भरा जा सकता है, इसके शरीर पर सिंह और हाथी के मस्तक के आकार बने हुए हैं। ये दोनों ही

बौद्धधर्म से सम्बन्धित पशु हैं। इससे ऐसा ज्ञात होता है कि यह दीपक बुद्ध भगवान की पूजा के हेतु काम में आता होगा। एक दूसरा प्याला मिला है जिसका शरीर गड़ारीदार है (ट)। महेत से एक गगरा प्राप्त हुआ है (द) जिसका मुँह ऊपर से चिपटा है। ग्रीवा से बार बाहर की ओर निकली हुई है। बार पर रेखाएँ हैं। ये सब बरतन लाल रंग के हैं। ऐसा जान पड़ता है कि बनाने के पश्चात् कुम्हारों ने इन्हें विविध रंगों से रंगा था। इन बरतनों को देखने से प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि किस प्रकार कुम्हार कुषाण बरतनों के आकारों को गोलाई दे कर उन्हें भारतीय सांचे में ढाल रहे थे।

कसिया की खोदाई में जो गुप्त स्तरों से मिट्टी के पात्र मिले हैं[1] उनमें एक गड़ुआ है जिसका शरीर गोल है और जिसमें ऊपर की ओर टोंटी लगी हुई है (फलक ४ ठ।) कुषाण युग के बरतनों के ढंग के मसाला रखने के छोटे बरतन मिले हैं जो प्रायः उसी युग के आकार के हैं (ड, ढ)। एक दीपक यहाँ से प्राप्त हुआ है जिसमें उठाने के हेतु मूठ भी लगी है (त) तथा एक धूपदान मिला है (ण) जिसके मस्तक पर मकर मुख का आकार बना हुआ है। इस धूपदान को देख कर ऐसा अनुमान होता है कि मकर मुख केवल गड़ुओं की टोंटी के ही रूप में नहीं व्यवहार में आते थे अपितु इन का व्यवहार धूपदान में भी होता था। एक प्याला भी मिला है जिसका शरीर गड़ारीदार है (थ)। राजघाट की १६५७ की खोदाई का विवरण अभी प्रकाशित नहीं हुआ है, परन्तु जितनी सूचना उपलब्ध है उससे यह कहा जा सकता है कि गुप्त युग के स्तरों में सब से मुख्य तो नालियाँ हैं। ये प्रायः १०″ लम्बी हैं और एक दूसरे में बैठ जाती हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि ये गन्दे पानी को बाहर ले जाने के काम में आती थीं। ये हलके लाल रंग की हैं[2]। इन्हीं के साथ कुछ लोटे, गड़ुए (फलक २, र, ल) कटोरे तथा कसोरे भी मिले हैं। लोटे और कटोरों पर नारंगी रंग का लेप है। ये बाहर से चिकने हैं परन्तु चमकते नहीं; करवों के बार पर रेखाएँ बनी हैं। इस काल की हँड़ियों के कन्धे हस्तिनापुर की अथरी (फलक १७ फ) की भांति निकले हुए हैं और इनकी बार भी बाहर की ओर निकली हुई है। कसोरे भी वैसे ही हैं जैसे अहिच्छत्र से प्राप्त हुए हैं (१७ ख)। गगरों की बार पर तथा कन्धे पर हंस-पंक्तियाँ, कौशाम्बी के गगरों की भांति बनी हुई हैं (१७ च)। राजघाट से प्राप्त दो गड़ुए (फलक १७ र, ल) पर तथा एक छोटा मसाला रखने का पात्र (व) पर

---

[1] हीरानन्द शास्त्री—एक्सकवेशन्स एट कसिया—अन्युअल रिपोर्ट आफ आर्के-आलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया १९१०-११ पृष्ठ ६७ प्लेट ३४ एफ।

[2] आर० जी० २ ए १ (१)।

प्रदर्शित है। राजघाट से इस युग के बरतनों की बड़ी सुन्दर टोटियाँ प्राप्त हुई हैं। इनमें कुछ बत्तक के मुँह के आकार की हैं।[1] इनमें एक पर रंग भी चढ़ा हुआ है, औरों पर से तो उड़ गया है जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि उस काल की मृण्मूर्तियों की भांति बढ़िया बरतनों को ऊपर से गोंद में रंग मिलाकर कुम्हार रंगते थे। कई बत्तकों के मस्तक तथा ग्रीवा सफेद रंग से रंगी हुई हैं। चोंच नारंगी रंग से तथा आँखें लाल रंग से। इन बत्तकों की चोंच के बीच से पानी गिरने की व्यवस्था है। एक टोंटी तोते के मुख की बनी हुई है। इस पर हरा रंग था जो अब कहीं कहीं दिखाई देता है[2]। तोते के गले में एक पट्टा भी है जिस पर कुछ काम भी बना है। इस टोंटी में कई छेद हैं, जिसमें पानी कई धार में गिरे। इन टोटियों को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि गुप्त-युग में लोग प्रायः तोते और बत्तक पालते थे। मकर मुख की टोटियाँ भी इस युग की मिली है। ऐसा ज्ञात होता है कि इन पर भी रंग था।

इन बरतनों का शरीर रंग के नीचे चिकना नहीं है जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि उस युग में बरतन के ऊपर के लेप और उसके रंगने पर कुम्हारों का अधिक ध्यान था; बरतनों के बनाने में सफाई लाने पर नहीं। ग्राहक कदाचित् बरतन की सफाई से अधिक उस पर की चित्रकारी से आकर्षित होते थे। इस काल के गगरे और गडुए पेंदी की ओर से पतले और कन्धे के पास से फैले हुए हैं; यह आकार कदाचित् कमल के फूल से लिया हुआ है जिसमें कमलगट्टे का द्योतक यहाँ गगरे का मुख है। बरतनों का तिरछा कटाव कुशल कुम्हार के हाथ की सफाई के कारण आया है। इनमें अपना एक लोच है।

सारनाथ की खोदाई के फलस्वरूप जो बरतन भाटराल को प्राप्त हुए उनमें गुप्तकाल के स्तरों से मिले हुए कुण्डे मुख्य हैं[3]। ऐसा अनुमान है कि इनमें लोग अनाज रखते थे। इनमें एक दो फीट दस इञ्च ऊँचा है तथा इसका मुँह १६३ इंच है तथा दूसरा २ फीट पाँच इञ्च ऊँचा है। इन दोनों कुण्डों की मिट्टी हलके लाल रंग की है जैसी आज भी कुण्डों की रहती है तथा इन पर गहरे लाल रंग का लेप है परन्तु यह रंग मध्ययुग के बरतनों के रंग की भांति कलछौंट लिये हुए नहीं है। (फलक १६ क) ये सादे

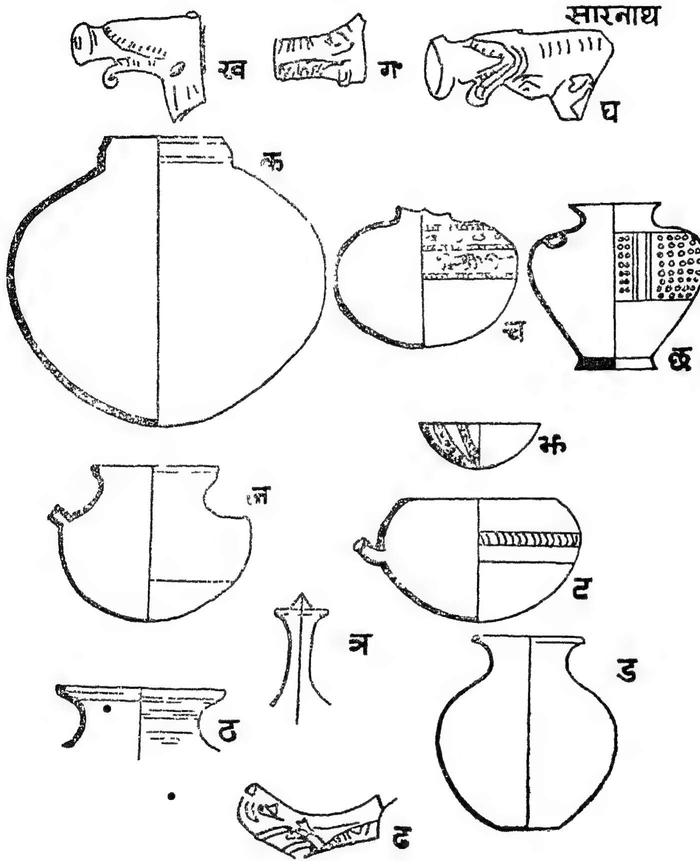
[1] भारत कलाभवन नं० ५६३०, ५६३३, ५६३६।

[2] भारत कलाभवन नं० ५६३४।

[3] दयाराम सहानी—काटलाग आफ दी म्युजियम आफ आर्केआलोजी एट सारनाथ पृष्ठ २८७, एफ (बी) ०, एफ (बी) ३; यह खोदाई वैज्ञानिक ढंग से नहीं हुई थी इस कारण स्तरों का ठीक ठीक पता नहीं लगता।

हैं बार पर तथा ग्रीवा पर केवल रेखाएँ अंकित हैं और कोई काम इन पर नहीं बना है। नाटी ग्रीवा वाले इन कुण्डों की पेंदी गोल है। बीच से ये गोलाकार फैले हुए हैं। शरीर इनका दूसरे कुण्डों पर रख कर हाथ से पीट कर बनाया गया है परन्तु मुँह और ग्रीवा चाक पर बने हैं। जो गगरे यहाँ से प्राप्त हुए हैं उनकी भी ग्रीवा नाटी है। एक गगरे के बार पर जंज़ीर का आकार बनाया

फलक १८



गया है तथा ग्रीवा के नीचे रेखायें अंकित हैं।[1] इन गगरियों पर प्रायः लाल लेप है तथा इनकी मिट्टी भली भाँति माड़ी हुई है। इनकी ग्रीवा पर संस्कृत के अर्ध 'अ' का आकार (ऽ) बना हुआ है। किसी-किसी पर अर्ध चन्द्र का आकार भी प्राप्त होता है।[2] लोटे भी इस स्तर से कई प्रकार के प्राप्त

[1] दयाराम सहानी—उपर्युक्त, एफ (बी) ४
[2] दयाराम सहानी—उपर्युक्त, एफ (बी) ८

हुए हैं। इन पर प्रायः लाल रंग का लेप है। इनमें कुछ बड़े हैं जिनकी ऊँचाई ५¾ इंच है और कुछ छोटे हैं जिनकी ऊँचाई ४½ इंच है। प्रायः इनकी कोर ऊपर से चिपटी है और बार ग्रीवा से बाहर निकली हुई है। (फलक १६ ड) कुछ लोटों की ग्रीवा के नीचे धारी भी खुदी हुई है[१]। कुछ सादे हैं। कुछ गडुए भी प्राप्त हुए हैं जो प्रायः अहिच्छत्र के गडुओं के आकार से मिलते हुए हैं।[२] इन पर नारंगी रंग का लेप है तथा पेंदी सादी है (ज)। एक गडुआ बड़ा सुन्दर है। इसके बाहरी शरीर को तीन बन्दों में कुम्हार ने बाँटा है। ऊपर के बन्द में कौड़ी का आकार बनाया गया है। उसके नीचे के बन्द में दौड़तें हुए साजदार घोड़े हैं[३]। बीच के भाग में अबरक पीसकर चपकाया हुआ है। इस बरतन के बन्दों को अलग-अलग करने के हेतु जो उठी हुई रेखाएँ बनाई गयी हैं उन पर खड़ी रेखाएँ हैं। यह बरतन ८½ इंच ऊँचा है (फलक ३ च)। गुलाबपाश का मस्तक जो यहाँ से प्राप्त हुआ है (ञ) उस पर नारंगी रंग का लेप है परन्तु चमक नहीं है। इसी काल का एक सादा कसोरा भी मिला है, जिसमें भीतर की ओर काम बना हुआ है। यह भी नारंगी रंग का है (झ)। एक गडुए की भांति टोंटीदार बरतन प्राप्त हुआ है जो काले सिलेटी रंग का है। इसके कन्धे पर काम बना हुआ है (ट)। इसकी टोंटी बड़ी सुन्दर है। एक गडुआ और प्राप्त हुआ है जिस पर अबरक चिपकाया गया है (छ)। इसके कन्धे पर उठी हुई बुंडियाँ बनी हैं।[४] ऐसा ज्ञात होता है कि अबरक लगे हुए पात्र प्रायः पीने का पानी रखने के काम में आते थे। इस प्रकार के पात्रों में प्रायः पानी गिराने के हेतु टोंटी बनी हुई हैं।

इस प्रकार सारनाथ के बरतनों को दो भागों में बाँटा जा सकता है। एक तो वे जो काले हैं और दूसरे वे जो लाल हैं और जिन पर लाल या नारंगी रंग का लेप है या जिन पर अबरक चिपकाया गया है। अबरक प्रायः आवाँ में चढ़ाने के पूर्व कापिस के साथ मिलाकर बरतन पर लगाया जाता है।

वाराणसी से प्राप्त एक ताम्रपत्र के लेख के नीचे एक मंगल कलश

---

[१] दयाराम सहानी—उपर्युक्त, एफ (बी) ३३

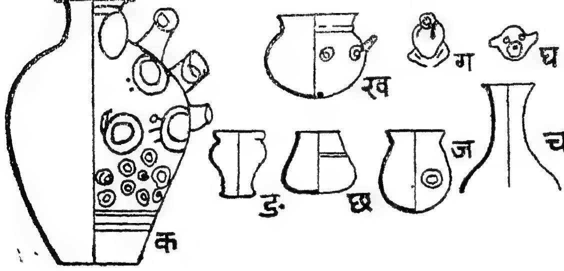
[२] दयाराम सहानी—उपर्युक्त, एफ (बी) ३६

[३] मारशल—एक्सकवेशन्स एट सारनाथ, अन्युल रिपोर्ट आफ अर्कैआलाजिकल सर्वे १९०७–०८ पृष्ठ ४८ फिगर ४, ए० कौड़ी चिपकाया हुआ बरतन एक सिरकप से भी मिला है—ए० घोष—तक्षशिला (सिरकप) १९४४–४५, पृ० ००-७२, नं० ४०।

[४] जे० एच० मारशल—उपर्युक्त—पृष्ठ ४० फिगर ४ बी०।

बना हुआ है। इस ताम्रपत्र पर प्रायः पाँचवीं शताब्दी का लेख है[1]। इस पात्र को देखने से भी यह ज्ञात होता है कि घड़ों की बांर ग्रीवा से बाहर निकली रहती थी तथा इन पर रेखाएँ अंकित रहती थीं। (फलक ३ स)

मनियारगढ़ (राजघाट) फलक २०





कुम्हरहार की खोदाई से प्राप्त बरतनों का इस काल का विवरण अभी प्राप्त नहीं है और न पटने के दूसरे स्थानों का जैसे बेगम् हवेली, गुलजार-बाग, महावीर घाट इत्यादि।[2]

---

[1] वी० च० चन्द्रा इत्यादि—टेन इयर्स आफ इण्डियन इपिग्राफी (१९३७–४६) एनशण्ट इण्डिया नं० ५, पृ० ४७, प्लेट २२ के नीचे।

[2] ए० घोष—इण्डियन अर्कैआलॉजी १९५५–५६, पृ० २२–२३।

राजगीर के मनियार मठ की खोदाई में एक चबूतरा एक ईंट का बना हुआ मिला है जिसे गुप्तयुग का निर्धारित किया गया है[1] क्योंकि इससे नीचे कुषाण काल की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं जिनमें एक पर 'भोगनी सुभागधी' कुषाण काल की ब्राह्मी में अंकित है तथा दूसरे पर मणिनाग को प्रसन्न करने का विवरण लिखा हुआ है।[2] यहाँ से प्राप्त मिट्टी के बरतनों में अधिकांश ऐसे हैं जिनमें एक से अधिक मुँह हैं। कुछ बरतनों के मुँह ऐसे बने हुए हैं कि जिसमें से बिना कठिनाई के सर्प मुँह डालकर पेय पदार्थ पी सकता है। ऐसा ज्ञात होता है कि इस प्रकार के बरतन सर्पों को दूध पिलाने के हेतु बनाये गये हैं क्योंकि ऐसा अनुमान है कि यह सर्प-पूजा की एक विशेष पीठ थी।[3] यहाँ से प्याले (फलक २० ङ) गडुए (ख), लोटे (छ, ज) सुराही (च) दीपक इत्यादि प्राप्त हुए हैं। दो बड़े बरतन ऐसे भी मिले हैं जिनमें सर्पों को कदाचित् दूध पिलाया जाता था (फलक २० क)। एक बरतन में तो दूसरे छोटे-छोटे पात्र बना कर टेढ़े करके रख दिये हैं तथा दूसरे बरतन में बहुत से मुँह बनाये गये हैं (क)। ऐसा अनुमान होता है कि बरतन को चाक पर बना कर तब उसमें इस प्रकार के मुँह बनाये गये हैं क्योंकि इन बरतनों के मुँह के छिद्र में कोई क्रम नहीं है। यहाँ से विविध प्रकार की बरतनों की टोंटियाँ भी प्राप्त हुई हैं। इनमें एक तो सर्प के मुख की है (ग) तथा दूसरी शूकर मुख के आकार की है (घ)। सर्प-मुख की टोंटियाँ और किसी स्थान से अभी तक तो नहीं मिली हैं।[4] ये सभी बरतन लाल रंग के हैं। छोटे बरतनों पर लाल लेप भी चढ़ा है।

बंगाल में बानगढ़ दिनाजपुर जिले में स्थित है। यहाँ जिस स्थान पर खोदाई हुई है उसका प्राचीन नाम कोटीवर्ष तथा देवीकोट था। यहाँ मौर्य युग से लेकर पाल युग तक के स्तर प्राप्त हुए हैं। यहाँ के गुप्त-युग के स्तरों से जो बरतन प्राप्त हुए हैं[5] वे प्रायः आकार में कुषाण बरतनों से बहुत

---

[1] जी० सी० चन्द्रा—एक्सकवेशन्स एट राजगीर, अन्युअल रिपोर्ट आफ अर्के-आलॉजिकल सर्वे आफ इण्डिया १९३५–३६, पृष्ठ ५४।

[2] डाक्टर एम०, नाजिम—एक्सकवेशन्स एट राजगीर—अन्युअल रिपोर्ट आफ अर्केआलॉजिकल सर्वे आफ इण्डिया १९३६–३७, पृ० ४६।

[3] जी० सी० चन्द्रा—उपर्युक्त पृष्ठ ५६।

[4] यहाँ से प्राप्त बरतनों का विशेष विवरण अभी तक नहीं प्राप्त है। इन बरतनों पर आगे काम करने की आवश्यकता है क्योंकि ये बिल्कुल नये ढंग के हैं।

[5] वाई० डी० शर्मा—एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टारिकल साइट्स, एनशण्ट इण्डिया नं० ९ पृ० १५५ फिगर १२, ४ (१, २, ३, ४)।

मिलते हैं परन्तु इन्हें देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि कुम्हारों ने इनके आकार में गोलाई देकर भारतीयता लाने का प्रयत्न करना प्रारम्भ कर दिया हो। यहाँ से प्राप्त बरतनों में गगरे (फलक १८ क) सुराही (ग) छोटी मसाला रखने की लोटिया (घ) तथा कढ़ाई (ख) इत्यादि मिले हैं। ये बरतन लाल रंग के हैं। इनमें गगरा, सुराही तथा लुटिया की पेंदी चिपटी है तथा इन बरतनों पर लाल लेप भी लगाया गया है। इनका विशेष विवरण अभी उपलब्ध नहीं है। इतना पता चलता है कि गुप्त तथा कुषाण काल के बरतनों पर विविध आकार छपे हुए हैं।[1]

पूर्वी बंगाल के बोगरा नगर से सात मील उत्तर की ओर महास्थान-गढ़ है। इस स्थान का प्राचीन नाम पुण्डरनगर था[2]। यहाँ की खोदाई के फलस्वरूप मन्दिरों के जो ध्वंसावशेष मिले हैं वे सब गुप्तयुग अथवा पालयुग के हैं[3]। गुप्तयुग के बरतनों में सबसे सुन्दर एक छोटा सा बरतन है[4] जो देखने में बिल्कुल नारियल के आकार का प्रतीत होता है (फलक २१ क)। दूसरा बरतन एक सुराही है (ख) जिसका आकार प्रायः और स्थानों से प्राप्त कुषाणकालीन सुराहियों से बहुत कुछ मिलता है[5] परन्तु इसके आकार में कुछ भारतीयता लाने का प्रयत्न अवश्य दृष्टिगोचर होता है। तीसरा बरतन एक हँड़िया के स्वरूप का है (ग)। यह पेड़े की भाँति चिपटा है। इसी में से कानों के एक सुवर्ण का आभूषण प्राप्त हुआ था।[6] छोटे बरतनों में कई प्रकार के लोटे (घ, च) तथा लोटिया (ङ, ज, झ, ञ, ट, ठ) हैं। एक हँड़िया चिपटी भी प्राप्त हुई है (घ)। प्रायः सभी बरतनों पर लाल लेप हैं। कुछ बरतनों पर चौड़ी काली धारी से सजावट भी की गई है (घ, च, ञ)। एक दूसरा स्थान रांगामाटी है जो मुर्शिदाबाद जिले के बरहमपुर से छः मील दूर है। यहाँ से गुप्तकाल के सिक्के प्राप्त हुए हैं। ये सुवर्ण के हैं[7]। ऐसा ज्ञात होता है कि यह वही स्थान है जिसको ह्वेनच्वांग ने रक्त-मृत्तिका कहा है तथा जहाँ रक्त-मृत्तिका बिहार था। रांगामाटी तो रंग मृत्तिका का केवल अपभ्रंश रूप है। यहाँ से प्राप्त मृण्मूर्तियाँ प्रायः

---

[1] वाई० डी० शर्मा—उपर्युक्त पृ० १५५।

[2] एपिग्राफिका इण्डिका ख० ११ (१९३१-३२) पृ० ८३ तथा आगे।

[3] वाई० डी० शर्मा—उपर्युक्त पृ० १५७।

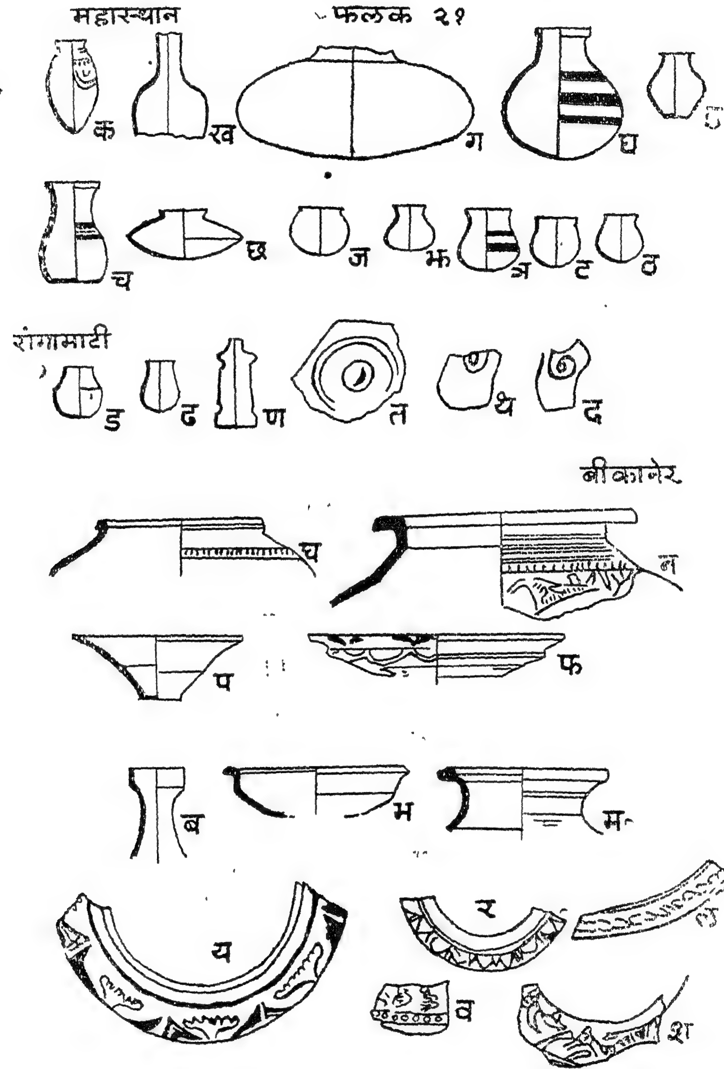
[4] के० एन० दीक्षित—एक्सकवेशन्स इन बंगाल-अन्युअल रिपोर्ट आर्केआलॉजिकल सर्वे आफ इण्डिया १९२८ २९ प्लेट ४१ डी०।

[5] वाई० डी० शर्मा—उपर्युक्त फिगर ६-११।

[6] के० एन० दीक्षित—उपर्युक्त फिगर ४१ सी०।

[7] के० एन० दीक्षित—उपर्युक्त पृ० ९९।

गुप्तकालीन हैं[१]। मिट्टी के बरतनों के नमूने फलक २१ पर प्रदर्शित हैं (ड, ढ, ण, त, थ, द)। कुछ लुटियों और ढक्कनों को छोड़ कर अन्य बरतनों के आकार प्रकाशित नहीं हैं। 'ड', 'ढ', पर जो लुटिया दिखाई गयी हैं वे प्रायः



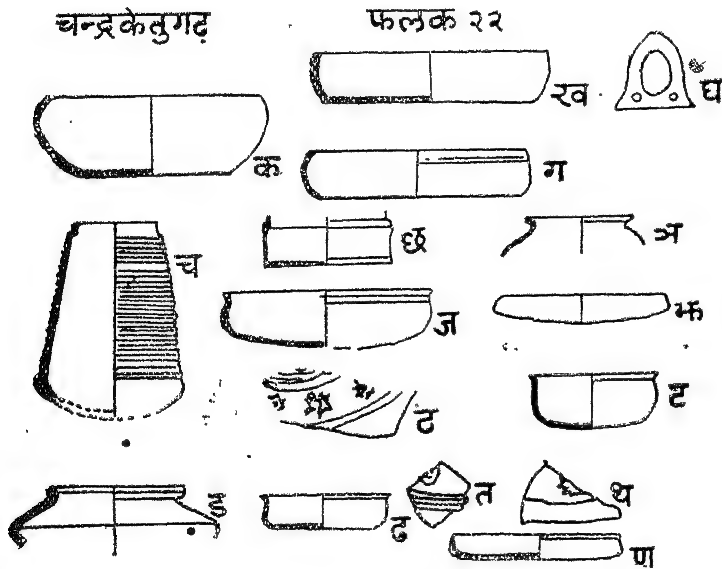
महास्थान की लुटिया (ट, ठ) से मिलती हुई हैं। इनके आकार में बहुत समानता है। 'ण' पर जो बरतन है वह धूपदान प्रतीत होता है। ढक्कनों में जो घुण्डी और वृत्त दिखाई देता है वह कदाचित् उसी प्राचीन

[१] के० एन० दीक्षित—उपर्युक्त प्लेट ४५० (बी०)।

आकार का द्योतक है जिसका संकेत पहिले किया जा चुका है (स्तूप)। इन बरतनों पर भी लाल लेप है।

महास्थान के पास ही एक दूसरा स्थान मेध है। यह गोकुल गाँव के समीप है। खोदाई में यहाँ से एक अष्टदल कमल के आकार का निर्मित एक मंदिर मिला है[1]। यह गुप्तकालीन ज्ञात होता है। यहाँ से प्राप्त मृण्मूर्तियाँ भी गुप्तकालीन हैं[2] परन्तु यहाँ के बरतनों का विवरण अप्रकाशित है।

चन्द्रकेतु गढ़ की हाल की खोदाई में कई काल के स्तर प्राप्त हुए हैं, उनमें गुप्तकाल के स्तरों से मृण्मूर्तियाँ तथा ताँबें के ढले सिक्के और मृत्पात्र मिले हैं।[3] यहाँ के गुप्त स्तरों को तीन भागों में विभाजित किया गया है। एक प्राथमिक गुप्तकाल, दूसरा मध्यगुप्तकाल तथा तीसरा उत्तरार्ध गुप्तकाल। प्रथम काल के बरतनों में थालियाँ (फलक २२ ख, फ) अथरी (क) इत्यादि हैं। मध्यगुप्तकाल के बरतनों में भीतर की ओर मुड़ी हुई



कोर की थालियाँ (झ), खड़ी बार की मंजूषा (घ), गोल पेंदी के प्याले (ट), मसाले रखने के गड़ारीदार शरीर के लम्बे पात्र (च), नाटी ग्रीवा वाले लोटे (ञ) इत्यादि प्राप्त हुए हैं। कुछ बरतनों पर ठप्पे भी हैं जिन पर

---

[1] एन० जी० मजूमदार—एक्सकवेशन्स एट गोकुल, अन्युअल रिपोर्ट आफ आर्कैआलाजिकल सर्वे १९३५-३६ प्लेट २४-२।

[2] एन० जी० मजूमदार—उपर्युक्त पृ० ६९।

[3] ए० घोष—इण्डियन आर्कैऑलोजी १९५७-५८ पृ० ५२-५३।

कमल (ठ), तथा पक्षि एक चतुष्कोण के भीतर बने हुए हैं।[1] बरतन इस काल के प्रायः सिलेटी रंग के हैं। जिस टुकड़े पर पक्षि बना है वह लाल-काला बरतन का टुकड़ा है। उत्तरार्ध काल के बरतनों में नाटी ग्रीवा की कन्धे बाहर निकली हुई हँड़िया (ड), अथरी (ढ) तथा थालियाँ (ण) प्राप्त हुई हैं। ये भी सिलेटी रंग की हैं तथा इस काल के बरतनों के टुकड़ों पर भी ठप्पे का काम प्राप्त होता है (त, थ)।

यह स्थान पश्चिमी बंगाल के २४ परगने के अन्तर्गत है तथा यहाँ एक मंदिर के अवशेष प्राप्त हुए हैं जो सर्वतोभद्र आकार का बना हुआ ज्ञात होता है।

राजस्थान के बीकानेर के क्षेत्र से गुप्तकाल के समय के जो बरतन मिले हैं उनकी अपनी एक शृङ्खला है जिसे रंगमहल सभ्यता कहते हैं।[2] इनके बरतनों के आकार गुप्तकालीन बरतनों के आकार से बहुत मिलते हैं। इनकी ग्रीवा नाटी है, मुँह की कोर ऊपर से चिपटी है तथा ग्रीवा से बाहर निकली हुई है।[3] इनके शरीर गोल हैं। ये बरतन लाल रंग के हैं। इन पर काले रंग से चित्र बनाये गये हैं। चित्रों के विषय प्रायः कमल, सारस इत्यादि हैं। इन बरतनों में कुण्डों (फलक २१ ध, न) की ग्रीवा नाटी, ग्रीवा से नीचे का भाग चौड़ा तथा ऊपर मुँह पर की कोर चिपटी है। इन पर ग्रीवा के नीचे काम बना हुआ है। कुछ कुण्डों के बार पर भी चित्रकारी है।[4] कुछ पर केवल काला रंग है[5]। कसोरे प्रायः गुप्तयुग के कसोरों की भाँति ही हैं (प) तथा अथरी (भ) और थाली (फ) कुषाणकालीन अथरी और थालियों की भाँति आकार में दिखाई देती हैं। अथरी में कुछ गोलाई लाने का प्रयत्न दृष्टिगोचर होता है जो गुप्तयुग के प्रथम काल में आरम्भ हुआ था। गगरे (म) का आकार प्रायः गुप्तयुग की तरह है। सुराही की ग्रीवा जो यहाँ से प्राप्त हुई है (ब) वह भी इसी युग की प्रतीत होती है। फलक ६ 'थ', 'र', 'ल', 'व', 'श' पर चित्रित बरतनों के टुकड़े हैं। इनमें बरतन के टुकड़े (य) पर विकसित कमल दिखाया हुआ है। 'र', पर कमल की कली का आकार है। 'ल' पर जंजीर बनी हुई है। 'व' पर कुछ नर्तकियाँ नृत्य करती हुई दिखायी गयी हैं। 'श' पर सारस है। जिस प्रकार कुषाणकाल

---

१ ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५७-५८ प्लेट ७२-६।

२ वाई० डी० शर्मा—एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टारिकल साइट्स-एनशण्ट इंडिया नं० ९ पृ० १५०।

३ वाई० डी० शर्मा०—उपर्युक्त, फिगर १०, १, २, १०, ११।

४ वाई० डी० शर्मा—उपर्युक्त, फिगर १०, १, १०, ३।

५ वाई० डी शर्मा—उपर्युक्त फिगर १०-६।

के सिक्कों की गुप्तकाल में पहिलें नकल हुई जिसमें व्यवहार करने वालों को विशेष भेद न मालूम पड़े। उसी प्रकार बरतनों के आकार भी पहिले कुछ दिनों तक नकल होते रहे। परन्तु फिर उनका रूप बदला तथा नाशपाती के आकार के स्थान पर सेव का आकार कुम्हारों ने अपनाया तथा कोनों को मार कर गोलाई लाने का प्रयत्न किया। जो बरतन कुषाणकाल में नीचे से भारी और ऊपर से पतले बनते थे, उनका आकार अब ऊपर से पतला हुआ। इस प्रकार इनके विदेशी भाव में भारतीयता का समावेश करने का प्रयत्न किया गया क्योंकि हमारी कला का दृष्टिकोण विदेशी कला के दृष्टिकोण से भिन्न है। हम प्रकृति के साथ चलना चाहते हैं। प्रकृति में कोई कोण नहीं है परन्तु पश्चिम के लोग प्रकृति के ऊपर आधिपत्य जनाना चाहते हैं, इस कारण प्रकृति को सीधी रेखाओं से प्रदर्शित करते हैं जिसमें कोने बनाना अनिवार्य है। इस तथ्य को भारतीय कलाकार पूर्णरूप से समझते थे। यूनानियों के प्रभाव से हमारे आकारों में जो विकृति आयी और जो कुषाण काल तक भी चलती रही, उसको गुप्तकाल में उन्होंने पुनः शुद्ध किया।



प्राचीन दक्षिण भारतीय मिट्टी के बरतन

एक ही काल में भारत जैसे बड़े देश में एक ही प्रकार की सभ्यता के अवशेष खोजना कुछ उचित नहीं है। जलवायु भी एक भाग का दूसरे से बहुत कुछ भिन्न है और प्रकृति हमको सभी स्थानों पर एक-सा जीवन व्यतीत नहीं करने देती। यातायात के साधन जो आज के युग में हमें उपलब्ध हैं, उनके विषय में प्राचीनकाल का मनुष्य सोच भी नहीं सकता था। फिर भी आज के भारत में भी सभी प्रदेशों में एक प्रकार की सभ्यता नहीं प्राप्त होती। अलग-अलग स्थानों की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। आज भी जैसे मिट्टी के बरतन कलकत्ते में बनते हैं वैसे मद्रास में नहीं बनते। इस कारण प्राचीन भारत के एक काल के मिट्टी के बरतनों के आकार-प्रकार में समानता खोजना कुछ उचित नहीं है। दक्षिण भारत के विकास की शृंखला भारत के और भागों की शृंखलाओं से भिन्न है। इस कारण प्रत्येक भू-भाग के मिट्टी के बरतनों को अध्ययन की दृष्टि से अलग ही अलग रखना चाहिये।

भौगोलिक दृष्टि से विन्ध्य पर्वत के नीचे का भाग जिसे प्रायः दक्षिण भारत कहते हैं, उत्तर भारत से प्राचीन है। यहाँ की चट्टानें जिन्हें 'ढारवेवियन राक्स' कहते हैं, भू-गर्भ शास्त्र के अनुसार कई लाख वर्ष पुरानी हैं, परंतु अभी तक खोदाई के फलस्वरूप जो स्तर यहाँ से प्राप्त हुए हैं वे बहुत प्राचीन नहीं लगते। यों बहुत से ऐसे स्थान मिल चुके हैं जिन्हें हम प्रस्तर युग का कह सकते हैं और जहाँ से प्रस्तर युग की सामग्री जैसे पत्थर के हथियार इत्यादि प्राप्त हो चुके हैं, परंतु दक्षिण भारत के इस युग की प्राचीनता में अब भी विद्वानों को सन्देह है। मिट्टी के बरतनों के आधार पर तो यहाँ की सभ्यता ईसा पूर्व १००० वर्ष से आगे नहीं जाती।[1]

यों दक्षिण भारत के प्रस्तरयुग की ओर तो ब्रूसफुट के काल (१८७०-१८८८) से ही ऐतिहासिकों का ध्यान आकर्षित हो चुका था परन्तु इस भू-भाग की वैज्ञानिक खोज का कार्य तो व्हीलर ने ही सर्वप्रथम ब्रह्मगिरि

---

[1] बी० के० ठप्पर—मसकी १९५४, ए चाल केलिथिक साइट आफ दी सदर्न डेकन एनशण्ट इण्डिया नम्बर १३—फिगर ४ पृष्ठ २३।

से प्रारंभ किया[1] और एक बड़ी संख्या में मिट्टी के बरतन खोदाई के प्रत्येक स्तर से संग्रह किया। यों तो ब्रूसफुट को पटपाड तथा कुरनूल से एक कन्धा निकला हुआ भूरे रंग का बरतन जिस पर लहरिया खुदी है, अकीक और लहसुनिया के खोटे के प्रस्तर युग के मध्यकालीन आयुधों के साथ प्राप्त हुआ था[2] तथा के० आर० यू० टाउ को खांडिवाली (बम्बई से २१ मीलपर) से इसी युग के आयुधों के साथ मिट्टी के बरतन प्राप्त हुए थे, परंतु यों ही केवल ६ इञ्च मिट्टी खोदकर एकत्रित किये जाने के कारण उनको विशेष महत्व नहीं दिया गया।[3] ब्रह्मगिरि की खोदाई के पश्चात् ही दक्षिण भारत की संस्कृति वैज्ञानिक ढंग से शृंखलाबद्ध हो सकी।

मैसूर में खोदाई के फलस्वरूप जो प्रमाण सामने आये उनसे ऐसा ज्ञात होता है कि भारतीय प्रस्तर युग में मिट्टी के बरतन हाथ से बनते थे।[4] इस भू-भाग का सिन्धु घाटी से कोई सम्बन्ध किसी काल में हुआ यह अभी तक निश्चित नहीं है, न यही निश्चित है कि इस प्रस्तर युग का कौन-सा काल था। व्हीलर ने जिस प्रकार इस खोदाई का विवरण उपस्थित किया है उससे तो ये मिट्टी के बरतन ईसा पूर्व १२०० वर्ष के होने चाहिए, परंतु अभी तक इस विषय में विद्वानों का मतैक्य नहीं हुआ है। कुछ पाश्चात्य विद्वान् तो इस प्रस्तर युग को ईसा पूर्व पहली शताब्दी का मानते हैं।

जो हाथ के बने बरतन ब्रह्मगिरि से प्राप्त हुए हैं उनकी मिट्टी सिलेटी रंग की है। नीचे के स्तरों के बरतनों में सफाई नहीं है और प्रायः उन पर साधारण सिलेटी रंग का लेप चढ़ा है। ऊपर के स्तरों के बरतनों पर चमक है। ये बरतन प्रायः गोल पेंदी के हैं और इनकी बार बाहर की ओर निकली हुई है। इन्हीं बरतनों के साथ कुछ और बरतनों के टुकड़े भी प्राप्त हुए हैं जिन पर या तो चित्रकारी की हुई है या खोदाई। इन चित्रित टुकड़ों की वैज्ञानिक जाँच के फलस्वरूप यह निश्चित हुआ है कि जिन टुकड़ों पर लाल चमकीला लेप है वे नमक के प्रयोग से चमकाये गये हैं और पकाने के पूर्व तेल देकर रगड़े गये हैं। जिनपर पीले भूरे रंग का लेप है वे न तो चमकाये गये हैं और न रगड़े गये हैं। इनके ऊपर की चित्रकारी पकाने के पश्चात् लाल गेरू के रंग से की गई है जिसमें बैगनी झलक है। चित्रकारी के

---

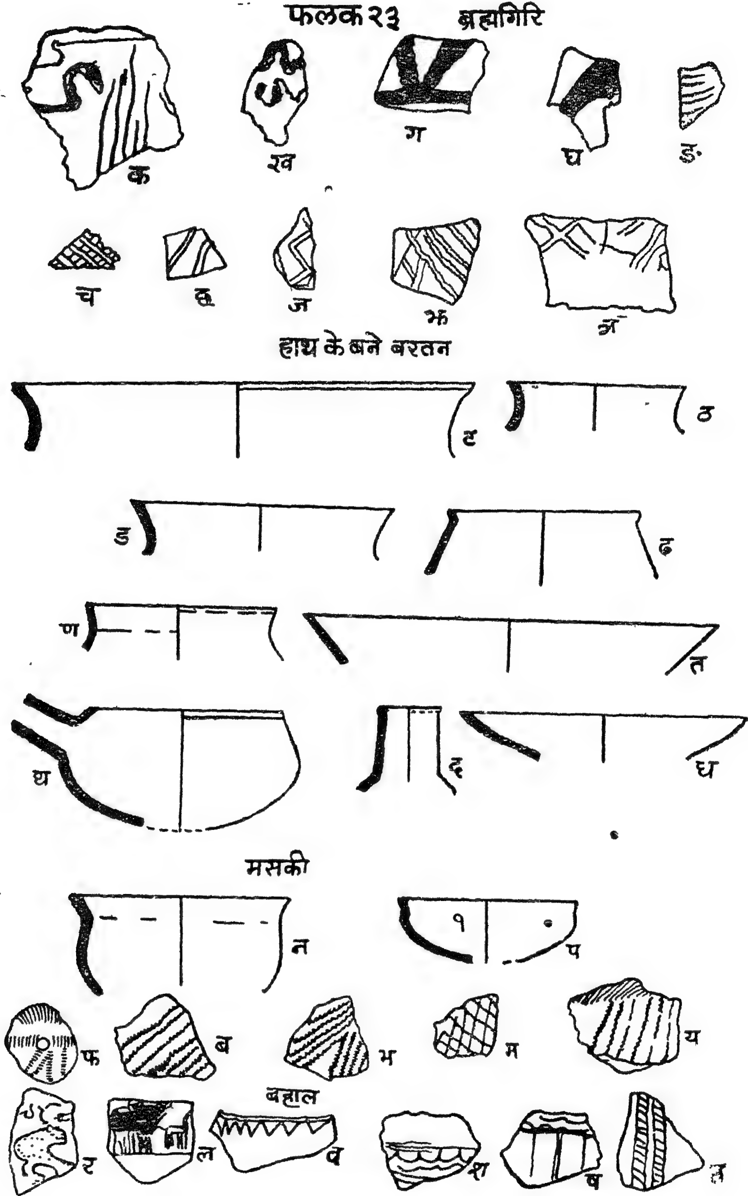
[1] आर० ई० एम० व्हीलर—ब्रह्मगिरि एण्ड चन्द्रावल्ली १९४७ मेगालिथिक एण्ड अदर्स कल्चर्स इन मैसूर स्टेट, एनशण्ट इण्डिया नम्बर ४ पृ० १८२।

[2] वी० डी० कृष्णस्वामी—प्राग्रेस इन प्री हिस्ट्री एनशण्ट इण्डिया नं० ९, पृ० ६७।

[3] डी० एन० गार्डन—दी स्टोन इण्डस्ट्रीज आफ दी होलोसेन इन इण्डिया एण्ड पाकिस्तान, एनशण्ट इण्डिया नंबर ६, पृ० ६५।

[4] व्हीलर—ब्रह्मगिरि एण्ड चन्द्रावल्ली १९४७, एनशण्ट इण्डिया नं० ४, पृ० २२२।

विषय प्रायः पेड़ों के आकार ज्ञात होते हैं। जिन टुकड़ों पर खोदाई की हुई है, उन पर एक दूसरे से काटती हुई रेखाएँ बनी हुई हैं। इन दोनों



प्रकारों के नमूने फलक १६ पर दिखाए गये हैं। यहाँ से प्राप्त बरतनों में कुण्डे, गगरी, कसोरे, मुँहदार प्याले, थाली इत्यादि हैं (फलक २३)।

रायचूड़ जिले के मसकी से प्राप्त मिट्टी के बरतन प्रायः ब्रह्मगिरि से मिलते हुए हैं।[1] ये बरतन मोटे बने हुए और खुरदरे हैं। बरतन की मिट्टी में छोटे-छोटे पत्थर के टुकड़े भी हैं तथा अबरक भी चमक रही है। हाथ के बने बरतन यहाँ थोड़े ही प्राप्त हुए हैं। (फलक १६, न, प)

अधिक नमूने तो चाक पर बने हुए बरतनों के ही हैं। इससे ऐसा ज्ञात होता है यह स्तर उस युग का है जब चाक का आविष्कार हुआ था। दोनों प्रकार के बरतनों के एक साथ प्राप्त होने से इस अनुमान की पुष्टि होती है। ये बरतन या तो सिलेटी रंग के हैं जैसे ब्रह्मगिरि से प्राप्त हुए हैं या गुलाबी भूरे रंग के लेप से आच्छादित हैं। कुछ ऐसे बरतन भी प्राप्त हुए हैं जिनपर चटाई के चिह्न हैं जिससे यह ज्ञात होता है कि कच्चे बरतनों को चटाई से कभी-कभी दबा दिया जाता था जिसमें वे रोकटी की भाँति दिखाई दें। कुछ चित्रित बरतन इसी स्तर से प्राप्त हुए हैं जो पतले बने हैं तथा मिट्टी में अबरक मिलाकर बनाये गये हैं। इन पर एक प्रकार का लाल लेप है तथा इन पर काजल अथवा गेरू से चित्रकारी की गयी है। चित्रकारी का विषय कुछ समझ में नहीं आता। प्रायः आड़ी, सीधी या एक दूसरे को काटती हुई रेखाएँ ही अंकित की गयी हैं (फलक २३, फ, व, भ, म, य)। कोचीन राज्य के पोरकलम स्थान से जो मिट्टी के बरतन प्राप्त हुए हैं वे सब चाक पर बने हुए हैं[2] और ब्रह्मगिरि के प्रस्तर युग के द्वितीय काल के ज्ञात होते हैं। नेवासा की खोदाई के फलस्वरूप डाक्टर सांकलिया को जो तृतीय स्तर के बरतन प्राप्त हुए हैं वे लाल लेप से आच्छादित हैं[3] और उन पर काले रंग से चित्रकारी की गयी है। इनमें प्रायः चिपटी पेंदी के कटोरे, कुण्डे, कुण्डों के रखने की चौकी, टोटीदार गडुए इत्यादि हैं। चित्रों के विषय मृग तथा दूसरे पशु, पीपल के पत्ते इत्यादि हैं। किसी बरतन पर पकाने के पश्चात् छूरी से मनुष्य की आकृति भी बनायी गयी है (फलक २५ ज)। इस प्रकार के चित्रित बरतन ब्रह्मगिरि के सबसे प्राचीन स्तरों से भी प्राप्त हुए हैं।[4]

जिला पूर्वी खानदेश के बहाल की हाल की खोदाई से प्रथम काल के 'अ' स्तर से जो मिट्टी के बरतन प्राप्त हुए हैं वे ब्रह्मगिरि के पात्र की भाँति

---

[1] वी० के० ठप्पर—मसकी १९५४ ए चाल कोलेथिक साइट आफ दी सदर्न इण्डिया एनशण्ट नं० १३ पृ० ३७।

[2] वी० के० ठप्पर--एक्सकवेशन आफ ए मेगैलेथिक अर्न बेरियल, एनशण्ट इण्डिया नं० ८, पृ० ८।

[3] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५५-१९५६, पृ० ८।

[4] व्हीलर—एनशण्ट इण्डिया नं० ४ पृ० २२२।

ही आकार-प्रकार के हैं[1]—ये बरतन मोटे सिलेटी रंग के हैं। इनमें गोल हंड़िया जिसकी कोर बाहर निकली हुई है, प्याले चिपटी पेंदी के, कुण्डे जिनपर रेखाएँ खोदी हुई हैं, प्राप्त हुए हैं। कुछ टुकड़े सिलेटी रंग के बरतनों के भी प्राप्त हुए हैं जिन पर गेरू से चित्रकारी की गई है। कुण्डे तो अवश्य ही हाथ के बने हुए हैं। बहाल के 'ब' स्तर से तथा टेकवाड़ा से जो बरतन प्राप्त हुए हैं वे प्रायः लाल रंग के हैं और यहाँ के बरतन से शीघ्रगामी चाक पर बने हुए प्रतीत होते हैं। ये काले रंग से चित्रित हैं। चौड़ी रेखाओं द्वारा एक दूसरे से अलग किये हैं। इनमें ईंट, त्रिकोण, सीढ़ी, एक दूसरे को काटते हुए वृत्त, नदी की लहर, पत्तियों के आकार प्राप्त होते हैं। किसी टुकड़े पर घोड़ा और किसी पर बारहसिंघा[2] बना हुआ है (फलक १६ र, ल, व, श, प, स।) कुछ बरतनों पर रेखाएँ या गोल बिंदु भी हाथ से बनाये गये हैं। इन पर चित्र नहीं है। इस युग के दूसरे काल के स्तर 'ब' के बरतन ह्वीलर ने ब्रह्मगिरि और चन्द्रावल्ली में उन कब्रों से प्राप्त किया था जिनके चारों ओर बड़े-बड़े पत्थर लगे रहते हैं। इन्हें भी पिछले युग का मानते हैं। ये बरतन प्रायः हाथ के बने हुए सिलेटी रंग के हैं और एक को छोड़कर कोई चमकाये नहीं गये हैं। ये गोल शरीर के हैं।[3] इसी युग के बरतन कोरेगाँव (पूना) से भी प्राप्त हुए हैं जो १६५७ के आर्केआलाजिकल प्रदर्शनी में प्रदर्शित किये गये थे।

दूसरे युग में जो बरतन प्रायः दक्षिण में सभी स्थानों से प्राप्त होने लगते हैं वे लाल और काले या काले और लाल रंग के हैं। ये बरतन धीमी चलती हुई चाकपर बनाये गये हैं।[4] मसकी में इस युग के जो बरतन मिले हैं वे भी लाल और काले हैं[5] और पकाने के समय ये उल्टे रखकर पकाये गये हैं जिससे ऊपर से लाल और भीतर से ये काले हो गये हैं। कोई बाहर बन्द आवें के धूएं से पूरे भी काले हो गये हैं।[6] ये बरतन सादे बने हुए हैं। केवल कुछ बरतनों के बारपर रस्सी के बटन की भाँति चिह्न बने हुए हैं। इनकी मिट्टी माड़ी हुई है और बालू और छोटे-छोटे पत्थर के टुकड़े मिलाकर बनायी गयी है। इस युग के बरतन जो ब्रह्मगिरि और चन्द्रावल्ली से प्राप्त हुए हैं उनमें कटोरे, गहरी थालियाँ, बड़े कुण्डे, लोटे, अथरी आदि

---

[1] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५६-५७, पृ० १७।

[2] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५६-५७ प्लेट २० ए० ६।

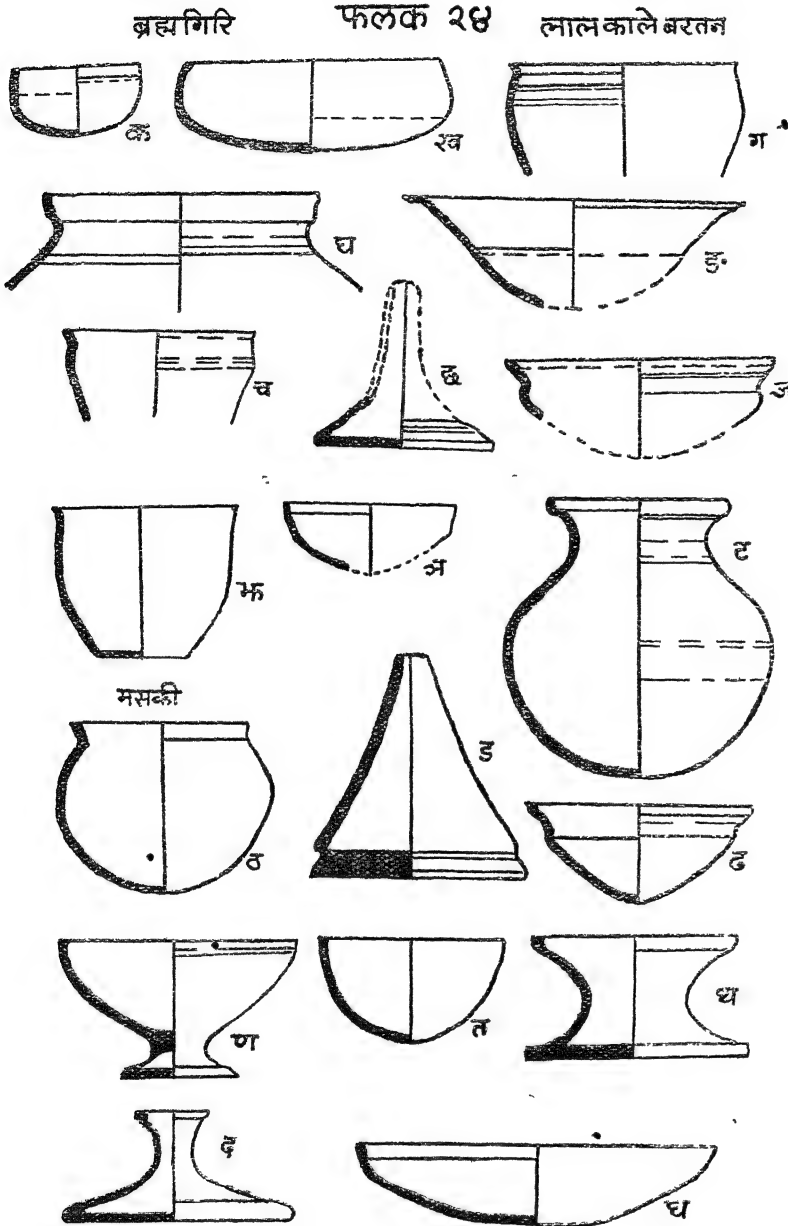
[3] ह्वीलर—ब्रह्मगिरि एंड चन्द्रावल्ली, एनशंट इंडिया नं० ४—पृष्ठ २२४।

[4] ह्वीलर—उपर्युक्त पृष्ठ २३२।

[5] बी० के० ठप्पर—मसकी १९५४, एनशंट इण्डिया नं० १३, पृष्ठ ५०।

[6] ह्वीलर—उपर्युक्त पृष्ठ २३२।

मुख्य हैं (फलक २४ ब्रह्मगिरि क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, चन्द्रावल्ली झ, ञ, ट।) एक विचित्र प्रकार का बरतन जो यहाँ से प्राप्त हुआ है वह कीप



के सदृश है (फलक २४ छ।) यह किसी बरतन का ढकन है। यहाँ एक बात दृष्टिगोचर होती है कि अब बरतनों की पेंदी गोल से चिपटी होने

लगती है और बरतन पतले होते जाते हैं। चन्द्रावल्ली के बरतनों पर कदाचित् नमक से चमक लाने का प्रयत्न किया गया है।

मसकी से इस युग के जो बरतन प्राप्त हुए हैं उनमें भी कटोरे, हंड़िया, कुण्डे, लोटे आदि मिले हैं। इस स्थल से भी कीप के ऐसा ढक्कन प्राप्त हुआ है (फलक २४ ड।) एक कटोरा जिसकी ऊँची पेंदी है तथा एक कुंडा रखने की चौकी भी प्राप्त हुई है (फलक २४ ण तथा थ।) चौकी इसी प्रकार की अंडिचनाल्लूर तथा पेरुम्बेर से भी प्राप्त हुई है।[1]

ये सभी बरतन लाल और काले रंग के हैं; इन पर कदाचित् नमक के द्वारा चमक लायी गयी है। काला रंग भीतर की ओर और ग्रीवा पर है, लाल रंग बाहर की ओर है। केवल लाल रंग बड़े बरतनों और मझोले बरतनों पर हैं।

पोरकलम से इस युग के जो बरतन प्राप्त हुए हैं वे भी धीरे चलती हुई चाकपर बनाये गये हैं। अधिकतर बरतन काले रंग के हैं जो आंवें में उल्टे रखकर पकाये गये हैं[2]। बरतन तोड़ने पर भीतर मिट्टी सिलेटी रंग की है। ये बरतन पकाने के पहले तेल लगाकर चिकने किये गये हैं और ऊपर से नमक देकर चमक लायी गयी है जो इनके ऊपर-ऊपर की किटकी हुई सतह के देखने से स्पष्ट ज्ञात होता है। मिट्टी जो यहाँ भी व्यवहार की गयी है उसमें भी छोटे-छोटे पत्थर के टुकड़े हैं। मांड़ी होने पर भी ये टुकड़े रह गये हैं। ये लकड़ी की आँच में पकाये गये हैं जिससे ये बहुत शीघ्र हाथ लगते-लगते टूट जाते हैं। छः बरतन ऐसे भी प्राप्त हुए हैं जो बिलकुल काले हैं। ये कदाचित् बंद आंवें में पत्ती के धुएं वाली आग में पकाये जाने के कारण ऐसे हो गये हैं। बनाने के ढंग में और मिट्टी में ये ब्रह्मगिरि से प्राप्त बरतनों से बहुत कुछ मिलते जुलते हैं। यहाँ के बरतनों के आकार मसकी के बरतनों के सदृश ही प्रतीत होते हैं जैसे कुण्डों के रखने की चौकी,[3] लोटा, कटोरा, कुण्डे (जिसमें अस्थि रखी गयी थी) इत्यादि।[4] कुछ बरतन भिन्न आकार के हैं जैसे ढक्कन (फलक २४ द, थाली—ध।)

---

[1] एलेकज़ेण्डर री—काटेलोग आफ हिस्टारिक अण्टिक्विटीज फ्राम अडिचनाल्लू एण्ड पेरुम्बेर (मद्रास १९१५) प्लेट ८।१०।

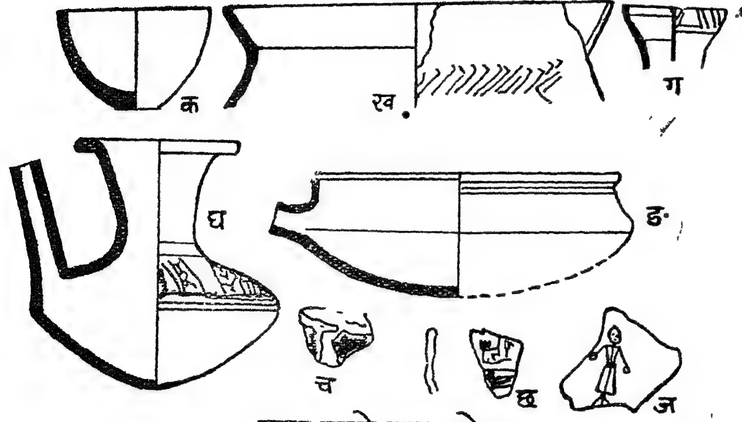
[2] वी० के० ठप्पर—पोरकल्लम १९४८ एक्सकवेशन्स आफ ए मेगालेथिक अर्न बेरियल, एनशण्ट इण्डिया नंबर ८, पृ० ८।

[3] वी० के० ठप्पर—मसकी १९५४ एनशण्ट इण्डिया नम्बर १३, फिगर २ बी (।) तथा वी० के० ठप्पर पोरकल्लम १९४८ फिगर २१४।

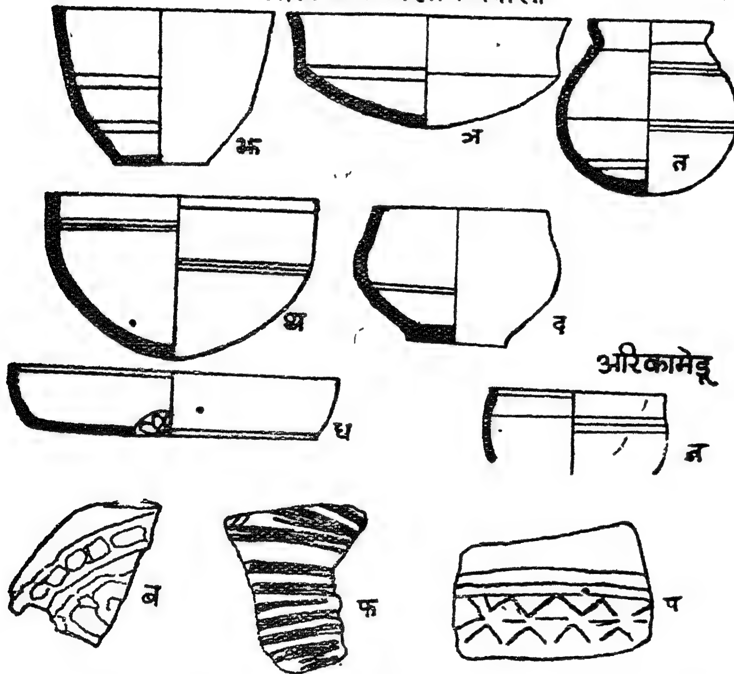
[4] वी० के० ठप्पर—मसकी फिगर १६, पोरकल्लम—फिगर ४—दोनों में अन्तर बहुत थोड़ा है, केवल मसकी के कुण्डे के कोर पर सजावट की गयी है तथा पोरकल्लम का कोर पर कुण्डा सादा है पर सजावट है।

बहाल के इस युग के बरतन लाल-काले रंग के हैं; परन्तु कोई-कोई बरतन लाल के स्थान पर मखनियाँ रंग के भी हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि इस युग तक आमकी छाल इत्यादि का लेप बरतनों पर लगाना प्रारम्भ हो

फलक २५ नेवासा



लाल काले बरतन नेवासा



गया था; क्योंकि इस लेप को धुएं में पकाने पर लाल रंग के स्थान पर मखनियाँ रंग हो जाता है। यह बरतन तेल लगा तथा रगड़कर पकाया नहीं ज्ञात होता। ऐसा अनुमान होता है कि इस पर लेप है। इस युग में बहाल

से प्राप्त बरतनों में ग्रीवारहित कटोरे और छिछली थाली मुख्य हैं। इसके साथ के लाल बरतनों में गोल लोटे और कन्धे निकली हुई हाड़ियाँ हैं।[1]

नेवासा जिला अहमदनगर में है। यहाँ इस युग के जो बरतन प्राप्त हुए हैं[2] वे भी लाल-काले हैं। इनमें गगरे, कटोरे, अथरी, लोटे इत्यादि हैं—(फलक २५ झ, भ, ट, ठ)। इन बरतनों के साथ उत्तरी काली चमकवाले बरतनों के टुकड़े भी प्राप्त हुए हैं। सातवाहन राजाओं के सिक्कों के भी इसी स्तर से प्राप्त होने से इनके काल के विषय में नेवासा में तो कोई सन्देह का स्थान नहीं रह जाता। नेवासा के बरतनों को देखकर ऐसा अनुमान होता है कि विजातीय प्रभाव के कारण इनके आकार बदल रहे हैं, परन्तु अभी तक बिलकुल बदले नहीं है।

इस युग के बरतन के आकार में भारतीयता है। कुछ आकार तो सिंधुघाटी की सभ्यता के समय से ही भारत में प्रचलित हो चुके थे जैसे कुण्डों के रखने की चौकी का आकार (फलक २४ थ) या चिपटी पेंदी के कटोरों के आकार (फलक २४ ण)। गोल पेंदी के कटोरे, अथरी तो इस आकार के आज भी धातु के बने व्यवहार में आते हैं। इतने दिन पश्चात् भी इनका स्वरूप नहीं बदला। प्रायः इन बरतनों का काल जैसा ऊपर लिखा जा चुका है ईसा पूर्व ६०० से लेकर ३०० तक अनुमान किया गया है।[3] इससे इसका काल उत्तरी काली चमकवाले बरतनों से मिलता-जुलता होना चाहिये। नेवासा से तो उत्तरी काली चमक वाले बरतनों के टुकड़े भी प्राप्त हुए हैं। इन बरतनों के साथ लोहे की बनी वस्तुओं के मिलने से[4] इस के काल के निर्धारण में और अधिक सहायता मिलती है। इस युग के बरतन इसके पहले वाले युग से भिन्न हैं। ये पतले हैं, माड़ी हुई मिट्टी के बने हैं और दूसरी भाँति से पकाये गये हैं।

इस युग के बरतनों में शव रखने के बक्स भी मिले हैं। एक जो कुण्णट्टूर जिला चिंगलपुट से मिला है, हाल की आर्केआलाजिकल प्रदर्शनी देहली (सितम्बर १९५७) में प्रदर्शित किया गया था। इसके नीचे के भाग में हाथी के पांव की भाँति पावे बने हुए हैं। ऊपर का भाग भी हाथी के शरीर की भाँति है। यह हाथ का बना हुआ है। इसी प्रकार का एक बक्स पल्लावरम से भी प्राप्त हुआ था[5]। पोरकोलम में भी जो अस्थि रखने के कुण्डे हैं

---

[1] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५६ ५७, पृ० १८।

[2] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५५-५६ पृ० १० फिगर २।

[3] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५६-५७—पृष्ठ १८।

[4] वी० के० टप्पर—मसकी १९५४ एनशण्ट इंडिया—नं० १३ पृष्ठ १४।

[5] वी० डी० कृष्णस्वामी—मेगेलेथिक टाइप्स आफ साउथ इण्डिया नंबर ५ प्लेट ११।

उनके नीचे चार पावे लगे हैं। कदाचित् इनका सम्बन्ध उपर्युक्त बक्स से हो। सनूर जिला चिंगलपुट से भी शव रखने के बक्स प्राप्त हुए हैं।[1] ये बहुत सुन्दर नहीं हैं, परन्तु इनके बनाने के हेतु मिट्टी में भूसा इत्यादि मिलाया गया है और स्थान-स्थान पर छिद्र इस कारण छोड़े गये हैं जिसमें भलीभांति पक जायँ। इन्हीं शवपात्रों के साथ जो बरतन प्राप्त हुए हैं वे लाल और काले तथा लाल काले हैं। इनमें काले बरतनों पर चमक अधिक है। ये सब चाकपर बने हुए हैं तथा इनमें सफाई है। लाल-काले बरतनों पर नमक से चमक लायी गयी है जिससे ऊपर की सतह किरक गयी है। ये प्राय: उसी प्रकार के हैं जैसे दक्षिण में और स्थानों से प्राप्त हुए हैं।[2] हँड़िया, लम्बे लोटे, पात्रों के रखने की चौकी, कटोरे, अथरी सभी पोरकलम से मिलते हुए हैं।

हमें तमिल साहित्य में शव के हेतु ढकने लगे हुए पात्रों का विवरण प्राप्त होता है। एक स्थानपर मणिमेखलई में एक श्मशान का विवरण प्राप्त होता है जो चोल लोगों की राजधानी पुहार में था। वहाँ प्राय: सभी धर्मावलम्बी अपने शव का अन्तिम संस्कार करने जाते थे। यह विवरण प्राय: ईसा की प्रथम शताब्दी का है :—

'शुदुवोर-इदुवोर-टोडु कुलिप्पडु प्पोरतालवयि नडैप्पोर-तालियीड़ कविप्योर'
—मणिमेखलई—६।११।६६-६७

यहाँ ताली उस बरतन को कहते थे जिसमें शव या शरीर की राख को रखते थे और कवि उसके ऊपर के ढकन को।

एक और कवि अयूरमुड़वनार एक चोल राजा की मृत्यु पर कुम्हार को संकेत करके कहता है—

'कलंजेय कोवे, कलंजेय कोवे
....

कोडीनुडांगु याने मा वलवन देवर उलकम एयदिनन आदलिन
अत्रीर कविक्कुम कण्ण कण्टालि वनै दल वेट्टनैयायिन एनैयदूऊम
इरुनिलय तिकिरिया प पेरुमलाइ मण्णाक वनैदल ओल्लुमो निनाक्के
पुरम् २२८-१।१५

'ओ कुम्हार क्या बना रहे हो, ओ कुम्हार क्या बना रहे हो
गढ़ गढ़कर पात्र मसान हेतु ?

---

[1] फ्रेडरिक ई० जुनर तथा बी० आलचीन—दी मैक्रोलिथिक साइट्स आफ तिन्नेवेली डिस्ट्रिक्ट, मद्रास, स्टेट—एनशण्ट इण्डिया नंबर १२, प्लेट ९।

[2] फ्रेडरिक ई० जुनर इत्यादि—उपर्युक्त पृ० २५।

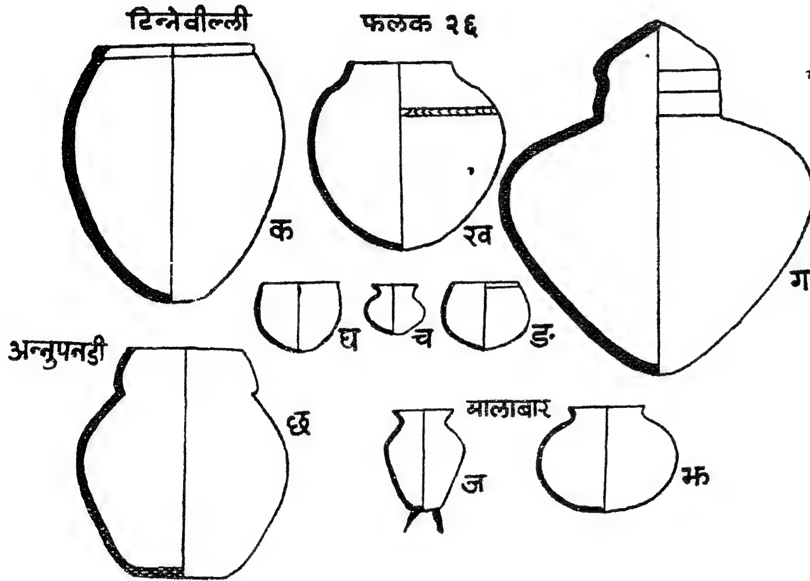
सघन धुआँ तेरे आँवें से उठा अपरिमित—
घन-सा, जैसे विश्व-तिमिर इस थल एकत्रित।
समझ न पाता हूँ कुम्हार तेरी भावी गति
होती जाती दशा तुम्हारी शोचनीय अति।
तू पृथ्वी को चाक बना ले दे दे चक्कर,
उस पर मिट्टी के लोंदे सा रख रख गिरिवर,
तुझे चाहिये पात्र बनाना उस महान-हित
रहा शेम्बियर राजवंश जिससे आलोकित
उसी शेम्बियर राजवंश का उज्ज्वल भूषण
तज पृथ्वी को स्वर्ग लोक पहुँचा है इस क्षण
जिसकी गाते बिरुदावलि हैं मिल विद्वत्गण
जिसकी सेना से छाया धरती का कण-कण
देदीप्यमान रवि सदृश रहा; जिसके दिग्गज गज
जग के कोने कोने में पहुँचे हैं सज सज
फहराते जिसका महा केतु!
गढ़ गढ़कर पात्र मसान हेतु—
ओ कुम्हार क्या बना रहे हो? ओ कुम्हार क्या बना रहे हो?

इसी युग का मद्रास प्रदेश के टिन्नेवेल्ली जिले के पास टेंकासी ताल्लुके की पलियम पोटाई पहाड़ी से एक बड़ा कुण्डा श्री कृष्णम चार्लू को प्राप्त हुआ था। यह पूरी पहाड़ी इस प्रकार के कुण्डों से भरी हुई है[१]। यह कुण्डा लाल रंग का है (फलक २६ क)। मुँह छोटा है और पेंदी नोकीली गोल है। मोटाई प्रायः एक इञ्च है। ऊँचाई ३ इञ्च और बीच की गोलाई ६ फीट। इसका ऊपर का ढकना टूटा हुआ था। इसमें मिट्टी भरी हुई थी और बीच में कुछ हड्डियाँ थीं। इस कुण्डे की ग्रीवा के नीचे अंगुली से दाब दाब कर एक माला की भाँति का आभूषण बनाया गया है। इसी प्रकार का आभूषण मिस्टर री को भी आदिच्छनल्लूर के कुण्डे पर भी प्राप्त हुआ था।[२] एक और इसी भाँति का घड़ा मिला था जिस पर खोदाई कर के पत्ती का आकार बनाया गया है (फलक २६ ख)। एक और कुण्डा इसी

[१] रावो बहादुर सी० आर० कृष्णम चार्लू सम प्रीहिस्टारिक साइट्स इन दी रामनाड एण्ड टिन्नेवेल्ली डिस्ट्रिक्ट्स—अन्युअल रिपोर्ट आफ आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया १९३६–३७–पृष्ठ ६८।

[२] मि० री०—काटेलाग आफ प्रीहिस्टारिक अण्टिक्विटीज़ आदिच्छनल्लूर एण्ड पेरुम्बेर प्लेट–७ फिगर ३।

स्थान से मिला था[1] जिस पर ढक्कन है और जिसकी पेंदी नोकीली है (ग)। इस कुण्डे पर काले रंग का लेप था। इसी के साथ दो कटोरे मिले थे (घ) (ङ) जिन पर भीतर बाहर दोनों ओर काला रंग है। दोनों की पेंदियाँ



गोल हैं। एक कटोरे की ऊँचाई ४½ इंच है और गोलाई ६ इंच। दूसरे कटोरे की ऊँचाई ५ इंच है और गोलाई ६ इंच। दूसरे कटोरे के रंग के छूटने से उसके नीचे का लाल रंग प्रत्यक्ष हो गया है जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि पहिले लाल रंग लगाकर उस पर काला लेप चढ़ाते थे। यह काला रंग लाख मिलाकर गरम करके चढ़ाते थे, ऐसा अनुमान है। इस कटोरे की कोर के नीचे एक रेखा अंकित है (ङ)। इन्हीं बरतनों के साथ एक छोटा लोटा भी प्राप्त हुआ है (च) जिस पर उपर्युक्त कटोरे की भांति लाल रंग के ऊपर काला रंग लगाया गया है।[2] ऐसा ज्ञात होता है कि पलियन लोगों के पुरखों के ये अवशेष हैं। इसी प्रकार के कुण्डे तथा दूसरे बरतन कुट्टालम से भी प्राप्त हुए हैं[3] जो प्रायः टेंकासी से ३ मील दूर है। इसी प्रकार के बरतन उक्कीरन कोटाई (जिला टिन्नेवेल्ली) से भी प्राप्त हुए हैं तथा रामनाड के सतूर स्थान से भी मिले हैं। मलावार के कन्ननकर अमसम,[4] सलेम जिले से तथा अन्नुपनडी

[1] कृष्णम चार्लू—उपर्युक्त- पृष्ठ ६८, प्लेट २७ डी० २७ सी०।

[2] कृष्णम चार्लू—उपर्युक्त पृष्ठ ६९।

[3] कृष्णम चार्लू—उपर्युक्त पृष्ठ ७१, प्लेट २८ बी०।

[4] एम० एच० खाँ—एक्सकवेशन्स इन सदर्न सर्किल—अन्युअल रिपोर्ट आफ आर्के-आलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया—१९३६-३७ पृष्ठ ६२ प्लेट २५ जी० डी०।

मदुरा में भी इसी प्रकार के बरतन मिलते हैं। अन्नुपनडी से प्राप्त एक कुण्डे (छ) का ढक्कन ऊपर से चिपटा है तथा पेंदी भी चिपटी है। कन्नकर अमसम से प्राप्त बरतनों में एक के नीचे पेंदी में गोड़े लगे हुए हैं (ज) तथा एक लोटा प्रायः गोल है (फलक २६ झ)। कन्धा निकली हुई एक हँड़िया भी यहाँ से प्राप्त हुई है।

बंगलोर के जडिगेन हल्ली से जो लाल और काले बरतन प्राप्त हुए हैं वे १६५७ के आर्केआलाजिकल प्रदर्शनी में दिखायी दिये। उनमें काली चमक के काले प्याले चौकी समेत, लाल चौकी बरतनों के रखने के हेतु, लम्बी ग्रीवावाले लोटे इत्यादि इसी युग के हैं। ये दक्षिण भारत के स्थानों से प्राप्त बरतनों से बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं।

अरिकामेडू से जो अराटाईन (रोमन) बरतनों के पूर्व के स्तर प्राप्त हुए हैं उनमें प्रायः सिलेटी रंग के बरतन मिले हैं जिनपर एक प्रकार का सिलेटी रंग का लेप है। इन पर नमक की चमक दी गयी है।[1] लाल बरतन तथा लाल-काले बरतन भी इन्हीं बरतनों के साथ यहाँ से प्राप्त हुए हैं। इस सिलेटी रंग के लेप की जाँच के फलस्वरूप यह कहा जा सकता है कि केओलीन पानी में मिलाकर दिया गया है तथा नीली चमक लोहे के कारण है। इनमें विशेष तो थाली कटोरे हैं (फलक १८ ध, न)।

इस प्रकार ईसा पूर्व दक्षिण भारत के बरतनों की कहानी का यहाँ अन्त हो जाता है। इसके पश्चात् जो बरतन हमें मिलने लगते हैं उनपर विदेशी छाप स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। कुम्हार रोम के बने बरतनों की नकल करने लगते हैं और एक विचित्र प्रकार का सम्मिश्रण दिखायी देता है जिसे कुछ विद्वानों ने 'इंडो रोमन' की संज्ञा दी है।

[1] व्हीलर—अरिकामेडू-एनशण्ट इंडिया नंबर २ पृष्ठ ५१।

दक्षिण भारत के ईसा की पहिली शताब्दी से चौथी शताब्दी तक के मिट्टी के बरतन

१९४४ में व्हीलर[1] पांडीचेरी गये थे। वहाँ अरिकामेडू से प्राप्त बरतन एक पुस्तकालय में प्रदर्शित थे। वहीं उन्हें पहिले पहल कुछ टुकड़े रोम के बने लाल रंग के बरतनों के दिखाई दिये।[2] इन्हें देखकर व्हीलर को बड़ा सन्तोष हुआ क्योंकि इनके द्वारा दक्षिण भारतीय सभ्यता का काल कुछ निश्चित हो सकता था। इन्होंने फ्रांसीसी सरकार से आज्ञा प्राप्त करके तुरन्त अरिकामेडू की खोदाई प्रारम्भ की जिसके फलस्वरूप इन्हें यह ज्ञात हुआ कि जिस नीचे स्तर से रोम के बने बरतन (वासा अरेंटीना) प्राप्त होने लगते हैं उसके नीचे आठ फीट बालू है। इसके नीचे एक स्तर में कुछ थोड़े से बरतन के टुकड़े मिले हैं जो रोमन बरतनों से बहुत प्राचीन होने चाहियें।[3] यहाँ से प्राप्त रोम के बने बरतनों को देखकर तथा उन पर किये हुए काम से व्हीलर ने यह निश्चय किया कि ये स्तर अरिकामेडू के ईसा पूर्व २३वें वर्ष से लेकर ईसा पश्चात् ५० वर्ष से प्राचीन नहीं हैं। इन बरतनों पर उनके बनाने वालों के नाम भी रोम के अक्षरों में अंकित हैं।[4] इनसे प्रायः इनका काल निश्चित हो जाता है क्योंकि रोम की खोदाई में इन्हीं लोगों के बनाये हुए बरतन मिल चुके हैं और इनके विषय में कुछ न कुछ जानकारी है। इन्हीं बरतनों के साथ इसी प्रकार के बने हुए नकली बरतन भी इन्हीं स्तरों से मिलते हैं। असली रोम के बरतन (फलक २७ क, ख) अपनी सुगढ़ता के कारण नकली से (ग, घ,) तुरन्त पहिचान लिये जा सकते हैं। दूसरे रोम के बरतन लाल नारंगी के रंग के

---

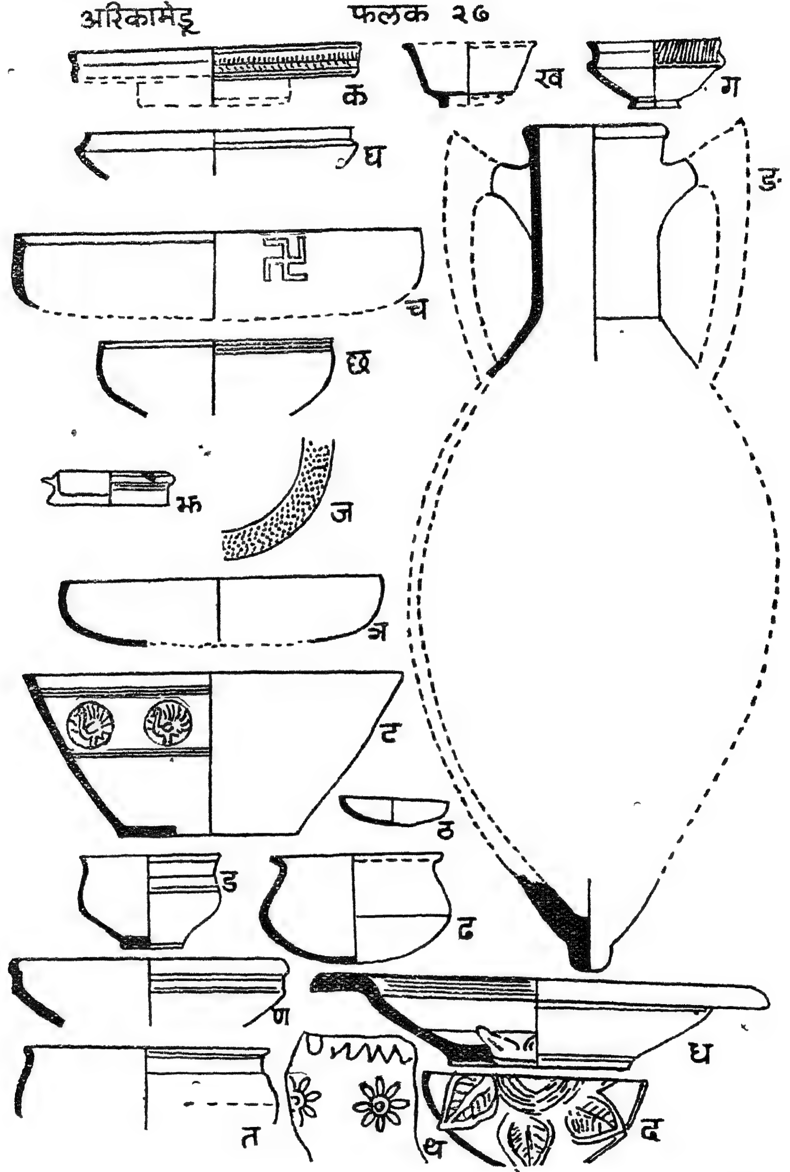
[1] आर० ई० एम० व्हीलर इस काल में डाइरेक्टर आफ अर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया के पद पर थे।

[2] आर० ई० एम० व्हीलर—अरिकामेडु, एन इण्डोरोमन ट्रेडिंग स्टेशन आन दी ईस्ट कोस्ट आफ इण्डिया—एनशण्ट इण्डिया नं० २ (१९४६) पृष्ठ २२।

[3] इनका विवरण दिया जा चुका है।

[4] आर० ई० एम व्हीलर—उपर्युक्त पृष्ठ ३७ फिगर ५–३, १८, २१, तथा पृष्ठ ३९–४०।

तथा नकली पीले सिलेटी रंग के हैं। इन दोनों प्रकार के बरतनों पर चमक है। इन बरतनों में भोजन की गोड़ा लगी हुई थाली (क) तथा प्याले (ख)] अधिक संख्या में पाये गये हैं। यहाँ से एक प्रकार की सुराही भी मिली है



(ङ) जिसके दोनों ओर उठाने के हेतु हाथ लगे हैं। इन्हें रोम में अमफोरा कहते थे। थालियों में पेंदी के चारों ओर भीतर टेढ़ी टेढ़ी रेखायें अंकित हैं।

ये रेखायें घूमते हुए चाक पर लोहे की एक छोटी पहिया से बनाई जाती हैं। इसी प्रकार की रेखायें (ज) थाली के बार पर तथा प्यालों के बार पर भी पायी गयी हैं।[१] इसी काल का एक दीपक भी प्राप्त हुआ (झ) है। इस पर भी रोम के बनाने वाले का नाम है। सुराही प्रायः सबसे नीचे के स्तरों को छोड़कर ऊपर के सभी स्तरों में मिलती हैं।[२] इससे ऐसा ज्ञात होता है कि व्यापारियों के मुख से रोम की मदिरा की बड़ाई सुनकर इसको पीने के हेतु लोगों की इच्छा जागरित हुई होगी तभी ये सुराहियाँ आयी होंगी। पहिला सम्बन्ध रोम से तो उस काल में हुआ होगा जब थालियाँ और प्याले आये। इन सुराहियों का शरीर गुलाबी है और इन पर प्रायः पीला लेप लगा हुआ है। कुछ पर बनाने वाले की छाप भी है।[३]

सिलेटी रंग के प्याले तथा थाली शीघ्रगामी चाक पर बने हुए हैं। इन पर भीतर और बाहर लेप है जो बन्द आँवें में पकाने के कारण काला या सिलेटी रंग का हो गया है। इन बरतनों पर चमक है परन्तु उत्तरी काली चमक वाले बरतनों की भाँति नहीं।[४] इन बरतनों पर भी पेंदी के चारों ओर भीतर तथा बार पर रेखायें हैं। दो अथवा तीन बन्दों में अंकित ये रेखायें थालियों की पेंदी के चारों ओर पायी जाती हैं। पेंदी भी इन बरतनों की चिपटी है। इन कारणों से व्हीलर का अनुमान है कि ये बरतन भी बाहर से भारत में आये[५] परन्तु इनके आकार में भारतीयता अधिक होने से तथा एक बरतन पर स्वस्तिक भी प्राप्त होने से व्हीलर की यह बात बहुत जँचती नहीं (च)। इन बरतनों के आकार में रोम के बरतनों के प्रतिकूल कोनों के स्थान पर गोलाई है। दूसरी ओर इन्हीं बरतनों के आकार के मोटे बरतन भी इन्हीं स्तरों से प्राप्त हुए जिन पर कोई लेप नहीं है तथा जिन पर की रेखायें भी हलकी हैं। इन्हें व्हीलर ने भारतीय बताया है।[६] इस प्रकार के बरतन चन्द्रावल्ली, ब्रह्मगिरि (चितल, द्रुग जिला) तथा अमरावती से भी प्राप्त हुए हैं।

अरिकामेडू में बने बरतन इस काल के कुण्डों, नाँदों इत्यादि को छोड़कर सभी चाक पर बने हैं। इनकी मिट्टी में बालू, छोटी-छोटी कंकड़ी तथा

---

[१] आर० ई० एम० व्हीलर—उपर्युक्त फिगर, ५-८, प्लेट २२ बी, फिगर ७, ३९, प्लेट २४-६।

[२] आर० ई० एम० व्हीलर—उपर्युक्त पृष्ठ ४६।

[३] आर० ई० एम० व्हीलर—उपर्युक्त पृष्ठ ४३–६२, आई० टी० टी० ए०।

[४] आर० ई० एम० व्हीलर—उपर्युक्त पृष्ठ ४६।

[५] अर० ई० एम० व्हीलर—उपर्युक्त पृष्ठ ४५।

[६] आर० ई० एम० व्हीलर—उपर्युक्त पृष्ठ ४८।

कभी-कभी अबरक और भूसी मिलायी गयी है। दोनों भाँति के बरतन अर्थात् सिलेटी और लाल यहाँ से मिलने के कारण ऐसा अनुमान है कि कुम्हार आँवें में हवा जाने का मार्ग छोड़कर तथा आँवें को बिल्कुल बन्द करके दोनों भाँति से बरतन पकाते थे। अच्छे सिलेटी रंग के बरतनों के लिये खूब माड़ी हुई मिट्टी का व्यवहार हुआ है। यहाँ के बरतनों पर प्रायः लेप लगाया गया है जिसे नमक के व्यवहार से अथवा रगड़कर चमकाने का प्रयत्न किया गया है। प्रायः बरतन सादे हैं। कुछ पर थोड़ा काम है। क्या इस प्रकार के बरतन बनाने वाले कुम्हार रोम के बने बरतनों को देखकर उनकी नकल नहीं कर सकते थे।

रोम के बने बरतनों के साथ प्रायः जो अरिकामेडू के बने बरतन मिले हैं वे सिलेटी रंग के हैं परन्तु थोड़ी संख्या में लाल बरतनों के टुकड़े भी प्राप्त हुए हैं (ई० २०–५०)। इस काल के बरतनों पर नीली आभा नहीं है जो पूर्व के बरतनों पर मिलती है। इस काल के बरतनों में थालियाँ (ञ), चिपटी पेंदी के बड़े प्याले (ट) जिन पर मोर इत्यादि छपे हैं, छोटे चिपटी पेंदी के प्याले, हँड़िया जिसके कन्धे निकले हुए हैं, गगरे[1], नांद जिस पर सिलेटी रंग का लेप है[2], कुण्डे[3] इत्यादि प्राप्त हुए हैं। इनमें एक छोटा सा दीपक भी है (ठ) जिसके एक ओर बत्ती रखने के हेतु स्थान बना है।

इसके बाद वाले काल के स्तरों से (ईसवी ६० से ईसवी १५०) जो बरतन मिले हैं वे अधिक संख्या में लाल हैं। प्रायः बरतन पहिले की अपेक्षा मोटे हैं। बरतन प्रायः सादे हैं। एक बरतन पर कमल-दल बना मिला है (थ) तथा दूसरे पर विकसित कमल (द)। इस काल के बरतनों में अथरी (ण), कन्धे निकली हुई हँड़िया (त), उल्टे बार के प्याले (ध), खड़ी बार की थाली, खड़ी बार का प्याला, ढक्कन, गगरे इत्यादि प्राप्त हुए हैं[4]। इन पर रोम के बरतनों के आकार की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। कुम्हारों ने इस काल में अपने बरतनों का रंग भी लाल किया और आकार में भी गोलाई के स्थान पर कोने छोड़े। शीशे के बने दीपक तथा नीले शीशे की प्यालियों के मिलने से इन स्तरों का काल ईसवी ५० से ७५ तक निश्चित किया गया है[5]। यहाँ से कुछ बरतनों के टुकड़ों पर (१८ टुकड़े) प्रारम्भिक तमिल के लेख पाये गये हैं, दो पर मनुष्य खुदे हुए हैं।[6] तमिल साहित्य

---

१ आर० ई० एम० व्हीलर—उपर्युक्त फिगर २४-४४, ४७, ४३ इत्यादि।

२ आर० ई० एम० व्हीलर—उपर्युक्त फिगर ३१-८४।

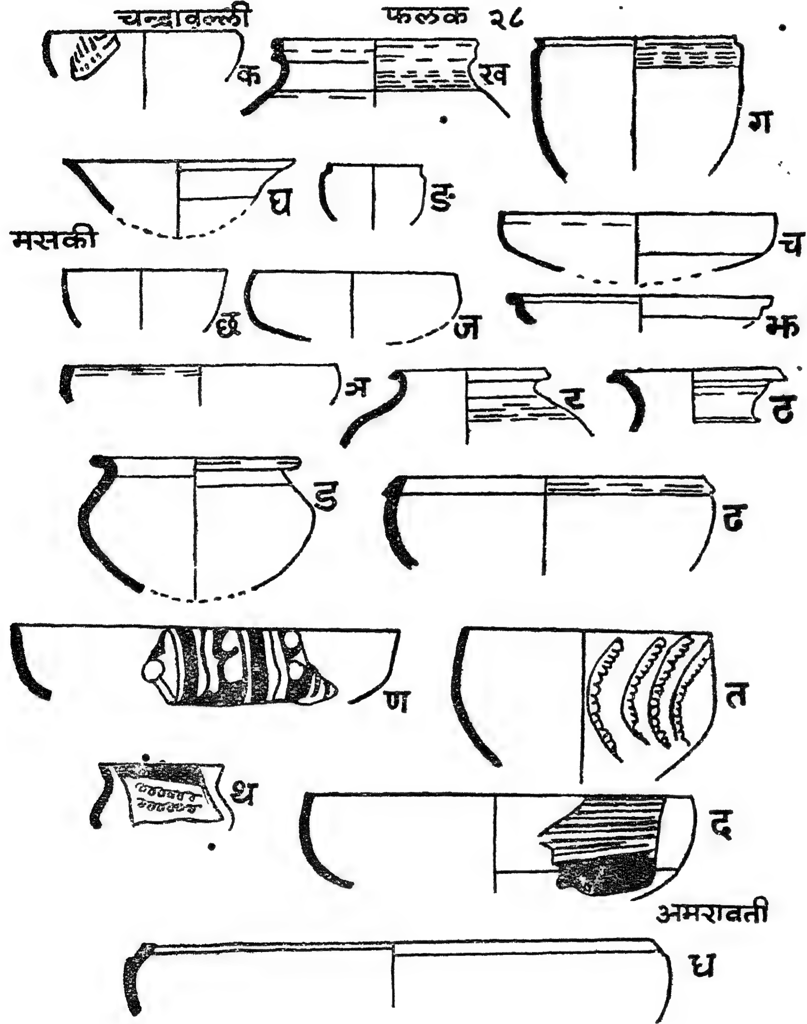
३ आर० ई० एम० व्हीलर—उपर्युक्त फिगर ३०-७६।

४ आर० ई० एम० व्हीलर—उपर्युक्त पृ० ५२।

५ आर० ई० एम० व्हीलर—उपर्युक्त पृ० १०२।

६ व्हीलर—उपर्युक्त पृ० १०९, प्लेट ४०, ४१।

में मणिमेखलाइ तथा शिल्पदिकारम् ग्रंथ बहुत प्राचीन माने जाते हैं। शिल्पदिकारम् में पुहार अथवा कावेरी पत्तिनम्, जो कावेरी के मुहाने पर स्थित है तथा पाण्डिचेरी से ६० मील दक्षिण है, के विषय में कवि ने लिखा है कि दर्शक यवनों के प्रासादों को देखते ही रह जाते हैं, इन पर



लक्ष्मी की कृपा कभी कम नहीं होती। बन्दरगाह पर देश-देश के नाविक दिखाई देते हैं परन्तु ये एक दूसरे के साथ प्रेमपूर्वक रहते हैं।[1]

[1] दी शिल्पदिकारम्—अनुवादक-वी० आर० रामचन्द्र दीक्षितार (अक्सफोर्ड १९३९) पृ० ११०।

ब्रह्मगिरि से भी व्हीलर को जो स्तर प्राप्त हुए उनमें भी टेढ़ी रेखाओं से अंकित (रूलेटड वेयर) बरतनों के नीचे के एक स्तर से काले लाल बरतन प्राप्त हुए हैं जैसा पिछे लिखा जा चुका है। रेखांकित बरतनों के ऊपर के स्तरों से एक प्रकार का बरतन प्राप्त हुआ है जिस पर एक प्रकार के पीले रंग से चित्रकारी की गयी है[१] जिसे आन्ध्र बरतनों की संज्ञा दी गयी है (क्योंकि इसी प्रकार के बरतन आन्ध्र प्रदेश में सातवाहनों के काल में प्राप्त हुए हैं)। ये बरतन प्रायः रेखांकित बरतनों के साथ मिलने से इन्हें ईसवी ५० से लेकर ई० ३०० तक का मानते हैं[२] चित्रकारी प्रायः सीधी रेखाओं से अथवा गोलाई लिये हुए रेखाओं से की गयी है (फलक २ क)। इनके आकार में पाश्चात्य बरतनों के आकार की छाप बहुत दिखाई देती है, जैसा कि हम अरिकामेडू के पीछे के काल के बरतनों में देखते हैं। ब्रह्मगिरि से प्राप्त इस काल के बरतनों में कुण्डे, गोल पेंदी के प्याले (क), गगरे, गहरी गोल पेंदी की थालियाँ इत्यादि प्राप्त हुई हैं।

चन्द्रावल्ली से भी प्रायः इसी प्रकार के बरतन इन ऊपर के स्तरों से प्राप्त हुए हैं। इन पर भी इसी प्रकार की चित्रकारी है। ये दोनों स्थान चितल द्रुग जिले में हैं। यहाँ से बरतनों के साथ आगस्टस तथा टाइबेरियस के सिक्के मिले हैं तथा ब्रह्मगिरि की अपेक्षा सातवाहनों के सिक्के भी अधिक संख्या में ऊपर के स्तरों से प्राप्त हुए हैं। प्रायः चन्द्रावल्ली के कुण्डे, गगरे (फलक २८ ख), अथरी जिसकी कोर बाहर निकली हुई है (घ) और थाली (च) ब्रह्मगिरि के बरतनों के आकार की हैं।

टेढ़ीरेखाओं से अंकित बरतन काले-लाल बरतनों के ऊपरी सतह से सेंगामेडू की हाल की खोदाई से भी प्राप्त हुआ है।[३] सेंगामेडू दक्षिण आरकाट जिले में मणिमुक्ता नदी पर स्थित है।

इसी प्रकार के बरतन मसकी के तीसरे काल के स्तरों से प्राप्त हुए हैं। यह स्थान रायचूड़ जिले में है। यहीं से अशोक का वह लेख मिला है जिसमें अशोक ने अशोक नाम से आदेश प्रसारित किये हैं[४]। यहाँ के भी इस काल के बरतनों पर लाल लेप है तथा पीले रंग से चित्रकारी की गयी है जैसे ब्रह्मगिरि तथा और स्थानों के बरतनों पर प्राप्त होती हैं। यहाँ के

---

[१] आर० ई० एम० व्हीलर—ब्रह्मगिरि एण्ड चन्द्रावल्ली १९४७ इत्यादि, एनशण्ट इण्डिया नं० ४, पृ० २३६।

[२] वाई० डी० शर्मा—एक्सप्लोरेशन्स आफ हिस्टारिकल साइट्स, एनशण्ट इण्डिया नं० ९, पृ० १६५।

[३] वाई० डी० शर्मा—उपर्युक्त पृ० १६७।

[४] एच० कृष्ण शास्त्री—दी न्यु अशोकन एडिक्ट आफ मसकी, हैदराबाद आर्के-आलोजिकल सीरीज़ नं० १ (कलकत्ता १९१५) पृ० १।

बरतनों में कुछ इस प्रकार की तश्तरियाँ भी मिली हैं जिन पर आड़ी रेखायें जैसी फलक (२७ ज) पर अंकित है[1]। इनके अतिरिक्त लाल रंग के सादे बरतन जिनमें किसी किसी पर लाल या गेरू के रंग का लेप है अथवा सिलेटी रंग के बरतन प्राप्त हुए हैं। कुछ बरतन लाल काले भी मिले हैं जैसे पहिले के काल में नीचे के स्तरों से प्राप्त हुए थे। इन पर लाल रंग ऊपर के भाग में अधिक है और इन पर पहिले के काल के बरतनों की चमक भी नहीं है। चित्रित बरतन ऐसे ज्ञात होते हैं मानो शीघ्रगामी चाक पर बने हैं और आँवें में एक दूसरे के ऊपर चुनकर पकाये गये हैं जिससे जो भाग खुले रह गये वे हवा लगने के कारण लाल हो गये हैं और जो भाग ढके हुए थे वे काले पड़ गये। इन पर चमक उत्पन्न करने के हेतु आँवें में नमक छोड़ा गया है जो गरमी पाकर बरतनों पर फैल गया है। चूने से चित्रकारी कर के उसके ऊपर गेरू के रंग की भाँति का लेप चढ़ाया गया है।[2]

चित्रित बरतन फलक २८ पर 'ण', 'त', 'थ,' 'द' पर दिखाये गये हैं। इस प्रकार के बरतनों में थाली (ण), गहरे कटोरे (त), लोटे (थ) बड़ी तश्तरी ही मिले हैं।

इनके साथ प्राप्त बरतनों में लाल काले खड़े प्याले (छ), गोल पेंदी की तश्तरी (ज), सिलेटी रंग की बार, बाहर निकली हुई तश्तरी (झ), लाल काले रंग की थाली (ञ) जिस पर चमक भी है और जो लेप लगाने के पहिले चूने से रंगी भी गयी थी, लाल घड़े (ट, ठ), लाल हँड़ियाँ (ड), सिलेटी रंग की नाँद (ढ) इत्यादि हैं।

नेवासा से इस काल के बरतनों में रोम की मदिरा की सुराही (अमफोरा) तथा लाल चमकदार बरतन विशेष उल्लेख्य हैं। इनके साथ कुछ काले लाल बरतन भी मिले हैं जिससे ऐसा बोध होता है कि इसके पहिले वाले युग की श्रृंखला टूटी नहीं थी।[3]

इसी प्रकार के बरतन बहाल से भी प्राप्त हुए हैं।[4]

आन्ध्र प्रदेश में बौद्ध धर्म के प्रचार स्वरूप अनेक स्तूप बने जिनमें सबसे मुख्य अमरावती का स्तूप है।[5] इस स्थान के बौद्धस्तरों के नीचे

---

[1] बी. के. ठप्पर—मसकी १९५४, ए चालकोलेथिक साइट आफ दी सदर्न डेकन एनशण्ट इण्डिया न० १३, पृ० १५।

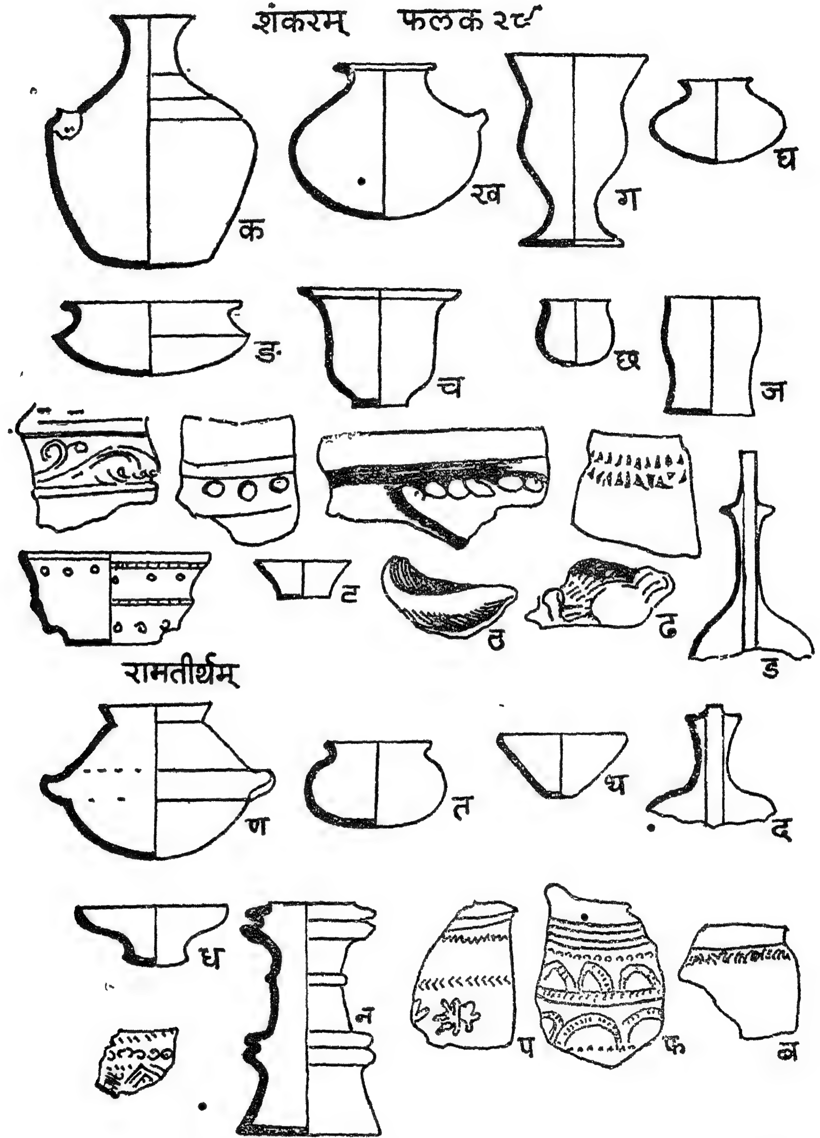
[2] बी. के. ठप्पर—उपर्युक्त पृ० ७३।

[3] ए. घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५५-५६ पृ० ११

[4] ए. घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५६-५७ पृ० १९

[5] जे० बरजे—दी बुद्धिष्ट स्तूपाज़ आफ अमरावती एण्ड जज्ज्यापेट (लन्दन १९९७) पृष्ठ १।

दक्षिण के श्मशान जहाँ शरीर के अवशेष गांड़े जाते थे, मिले हैं तथा ऊपर से टेढ़ी रेखांकित बरतन प्राप्त हुए हैं जिनके साथ एक टुकड़ा उत्तरी काली



चमक वाले बरतन का भी है।[1] यहाँ के टेढ़ी रेखाओं से अंकित बरतन जैसे

[1] वाई० डी० शर्मा—एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टारिकल साइट्स पृष्ठ १६७।

अरिकामेडू से प्राप्त हुए हैं वैसे ही है परन्तु ये सिलेटी रंग के काले हैं, (फलक २, ध) । यहाँ से प्राप्त अन्य बरतनों का विवरण प्राप्त नहीं है ।[1]

नागार्जुन कोण्डा अमरावती से ६५ मील पश्चिम की ओर है । इसका प्राचीन नाम विजयपुरी इक्ष्वाकु राजाओं के समय था (ईसवी २००) । यहाँ से एक सोने का सिक्का रोम के अधिपति हडरियन (ई० ११७–१३०) का भी प्राप्त हुआ है[2] यहाँ की हाल की खोदाई के फलस्वरूप जो बरतन प्राप्त हुए हैं उनमें कुण्डे, बड़े प्याले, भिक्षा-पात्र, सुराही इत्यादि हैं इन पर स्वस्तिक, सूर्य, एक दूसरे को काटती हुई रेखायें, कमल, नदी की लहरें, पत्तियाँ इत्यादि अंकित हैं[3]

आन्ध्र प्रदेश के विजगापट्टम के शंकरम पहाड़ी के बौद्ध बिहार की खोदाई में जो बरतन प्राप्त हुए हैं उन्हें गुप्तयुग का ही माना जा सकता है क्योंकि यहाँ से समुद्रगुप्त का ध्वजधारी सिक्का प्राप्त हुआ है[4] तथा ताम्बे के सिक्के विशमसिद्ध पूर्वी चालुक्यों के राजा के ज्ञात होते हैं ।[5] यहाँ से प्राप्त मिट्टी के बरतनों पर रोमन बरतनों की छाप विशेष रूप से दृष्टिगोचर होती है । यहाँ के बरतनों में पानी के गड़ुए (फलक २६ ख), लम्बी ग्रीवा की सुराही (क), प्याले पेंदी सहित (ग) और बिना पेंदी के (च), हंड़िया (घ), अथरी जिसके कन्धे निकले हुए हैं, लोटे (घ), खड़े शरीर के ग्लास (ज), धूपदान जिसमें धुँआ निकलने के हेतु आठ छिद्र दो भागों में बने हैं (ञ), कसोरे (ट), दीपक (ठ), गुलाबपाश (ड) इत्यादि प्राप्त हुए हैं ।[6] यहाँ से सोना गलाने की घरिया भी प्राप्त हुई है[7], बहुत सी झारी की टोंटियाँ भी मिली हैं जिनमें एक के मुँह पर सिंह का आकार बना हुआ है । इनका रंग प्रायः लाल है ।[8]

राम तीर्थम् के बौद्ध विहारों की खोदाई से भी कुछ बरतन प्राप्त हुए हैं । ये भक्त कोण्डा तथा दुर्गा कोण्डा की पहाड़ियों के विहार विजगापटम के

---

[1] आर० ई० एम० व्हीलर—अरिकामेडू—एनशण्ट इण्डिया नं० २ पृष्ठ ४८, ४९ ।

[2] वाई० डी० शर्मा—उपर्युक्त—पृष्ठ १६८ ।

[3] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५४-५५, पृष्ठ २३ ।

[4] ए. री—ए बुद्धिस्ट मोनास्ट्री आन दी शंकरम् हिल्स विजगापट्टम डिस्ट्रिक्ट—अन्युअल रिपोर्ट आफ आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया १९१०-११, पृ० १७४ ।

[5] ए. री—उपर्युक्त पृ० १७५ ।

[6] ए. री—उपर्युक्त प्लेट ५६—१,२, १५, ४,८, १४, ५, १०, १९, २३, २८, २५ प्लेट ५७—१, २, ३१, ४, ८, पृ० १७५-१७६ ।

[7] ए. री—उपर्युक्त-प्लेट ५६-९ ।

[8] ए. री—उपर्युक्त-प्लेट ५७-२५ पृ० १७८ ।

ज़िले में पड़ते हैं। ये प्रायः कुषाण कालीन ज्ञात होते हैं क्योंकि यहाँ से प्राप्त एक बुद्ध मूर्ति उसी काल की है तथा जैन मूर्तियाँ प्रायः उसी के कुछ ही काल के पश्चात् की ज्ञात होती हैं।[१] इस प्रकार इन विहारों से प्राप्त बरतन[२] प्रायः ईसापश्चात् दूसरी शताब्दी से पाँचवी शताब्दी के होने चाहिये। यहाँ जो रोशनाई रखने के पात्र प्राप्त हुए हैं वे अन्य कुषाण स्थानों से प्राप्त पात्रों से बहुत मिलते हैं (ण)। यहाँ से प्राप्त सुराही का आकार (द) भी उतना विकसित नहीं है जितना शंकरम का है (ड)। नाटी पेंदी के प्याले (ध) भी शंकरम की भाँति सुन्दर नहीं हैं। यहाँ एक विचित्र प्रकार का बर्तन प्राप्त हुआ है जो दीवट की भाँति का दिखाई देता है (ब)। यहां के बरतनों पर जो सजावट की गयी है वह या तो कच्चे बरतन पर खोदाई कर दी गयी है जैसे 'प' पर का कमल या 'फ' पर की गुफाओं का आकार या केवल उंगली से दबा कर की गयी है जैसा 'व' पर का आकार। इसी भाँति की कारीगरी प्रायः कुषाणकाल के बरतनों पर मिलती है। केवल गुफाओं का आकार प्राप्त नहीं होता।

प्राचीन दक्षिणी भारतीय मिट्टी के बरतनों को यदि उत्तर के बरतनों से मिलाया जाय, विशेष रूप से उन बरतनों से जो तक्षशिला, अहिच्छत्र, हस्तिनापुर, कौशाम्बी तथा राजघाट से प्राप्त हुए हैं तो दक्षिण के बरतनों के आकार प्रायः उत्तर के बरतनों के आकारों से भिन्न दिखाई देंगे। एक तो उत्तर के बरतनों से ये मोटे हैं, दूसरे यहाँ हमें बरतनों के उतने सुन्दर आकार भी प्राप्त नहीं होते, न उतनी भाँति के। टोंटी लगे हुए बरतन अथवा हाथदार बरतन या धार से तरल पदार्थ गिराने के हेतु मुँह के आगे के भाग पिचकाये हुए बरतन नहीं के बराबर हैं। यह सौन्दर्य उत्तर के बरतनों के आकारों में ही प्राप्त होता है। यहाँ की काली चमक वाले बरतनों पर भी वह बात नहीं पाई जाती जो उत्तर के बरतनों पर मिलती है। फिर भी बरतनों के कुछ आकार उत्तर तथा दक्षिण दोनों में मिलते हैं। आखिर तो भारत एक देश है। गोलाई लिये हुए पेंदी की थालियाँ अरिकामेडू से भी वैसी ही प्राप्त हुई हैं[३] जैसी अहिच्छत्र से[४]। इनकी मिट्टी

---

[१] ए. री—बुद्धिष्ट मोनास्ट्रीज आन दी गुरु भक्त कोण्डा एण्ड दुर्गा कोण्डा हिल्स एट रामतीर्थम् अन्युअल रिपोर्ट आर्केओलाजिकल सर्वे १९१०–११ प्लेट ४३–१, तथा २।

[२] ए. री—उपर्युक्त—प्लेट ४४–५, २८, ४४, ५६ प्लेट ४५–३,४, ५,६।

[३] व्हीलर—अरिकामेडू-एनशण्ट इण्डिया न० २ फिगर १४–२

[४] ए. घोष—दी पाटरीज आफ अहिच्छत्र-एनशण्ट इण्डिया न० १, पृ० ४५ तथा वी. वी. लाल एक्सकवेशन्स एट हस्तिनापुर इत्यादि एनशण्ट इण्डिया न० १०–११, फिगर १६-१८।

भी कुछ मिलती-जुलती है। कसोरे जो अरिकामेडू से प्राप्त हुए हैं[१], वे भी कुषाण कसोरों से प्रायः मिलते हुए हैं[२]। इसी प्रकार के कसोरे महीली, हस्तिनापुर, राजघाट इत्यादि स्थानों से बहुत बड़ी संख्या में मिले हैं[३]। दूसरे आकार के कसोरे जो अरिकामेडू से मिलते हैं[४] वैसे ही तक्षशिला से भी प्राप्त हुए हैं[५]। इसी प्रकार और बरतन जैसे हँड़िया[६] दीपक[७] इत्यादि भी उत्तरी बरतनों से मिलते हुए हैं।

जिस प्रकार उत्तर भारत की उस काल की वस्तुओं को जब यूनान से भारत का सम्पर्क हुआ एक निश्चित काल प्रदान किया है, उसी प्रकार दक्षिण भारत की वस्तुओं को रोम निवासियों के सम्पर्क ने। इन सम्पर्कों के सहारे हम अपनी सभ्यता के इतिहास की बिखरी कड़ियों को एकत्रित करके एक सूत्र में बाँध सकते हैं तथा विविध स्तरों को एक कालविशेष का निर्धारित कर सकते हैं। हमने देखा कि कुछ मिट्टी के बरतनों के टुकड़ों ने किस प्रकार दक्षिण भारत के विविध स्तरों का काल निश्चित कर दिया।

---

१ व्हीलर—उपर्युक्त—फिगर १८–१२ ए.

२ जरनल यू० पी० हिस्टारिकल सोसाइटी ख २५ (१९४०) प्लेट १, बी० बी० लाल-एक्सकवेशन्स एट हस्तिनापुर-उपर्युक्त फिगर १५-४।

३

४ व्हीलर-उपर्युक्त—फिगर १८–१२ ए।

५ वाई. डी. शर्मा—एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टारिकल साइट्स फिगर ८–५–५

६ व्हीलर-उपर्युक्त—फिगर १९–२४०, तथा बी० बी० लाल-उपर्युक्त ३३ ए.।

७ व्हीलर—उपर्युक्त-फिगर १८–२२ डी० तथा मारशल-तक्षशिला प्लेट १२५–१३६ आफ ख० ३।

पश्चिमी तथा मध्यभारत के मिट्टी के बरतन

जैसा पहिले लिखा जा चुका है भारत के अलग-अलग भूभागों की अपनी-अपनी विशेषता है। मध्य भारत तथा पश्चिमी भारत के बरतनों की शृंखला कुछ मिलती-जुलती है। इस कारण इनका एक साथ ही अध्ययन किया जा सकता है। भौगोलिक दृष्टि से राजस्थान, बम्बईप्रदेश तथा मध्यप्रदेश इस अध्ययन के अन्तर्गत आते हैं।

सबसे प्रथम हम उज्जैन की खोदाई के फलस्वरूप जो बरतन प्राप्त हुए हैं उन पर विचार करें। इनमें उज्जैन जिले के नागदा की खोदाई में प्राप्त बरतनों को तीन काल में विभाजित किया गया है[1]। चम्बल के पूर्वी किनारे पर स्थित इस दूहे के सबसे नीचे के स्तरों से लाल या मखनियाँ रंग के पात्र प्राप्त हुए हैं जिन पर काले रंग से प्रायः बाहर की ओर चित्रकारी को अलग-अलग स्थानों में मोटी रेखाओं से अलग किया गया है। इन खानों को विविध प्रकारों की रेखाओं से सुशोभित करने का प्रयत्न किया गया है। किसी में चित्तीदार बारहसिंहा बनाया गया है (फलक ३० ग) तो किसी में सूर्य (घ)। किसी में ईंट का आकार ही बनाकर छोड़ दिया गया है (झ) तो किसी में नदी की लहर बनायी गयी है (झ)। किसी में मोर बने हैं तो किसी पर केवल बारहसिंगे का सींग आदि। इस प्रकार के चित्रित बरतनों में थाली (च), लोटा (ख), कटोरा (ङ), गगरी (छ), अथरी (ज), छिछले कसोरे आदि मुख्य हैं। इन बरतनों के आकारों में तथा उत्तरी काली चमकवाले बरतनों में कुछ सादृश्य दिखाई देता है, परन्तु बहुत नहीं। इनमें एक टोंटीदार बरतन की टोंटी भी प्राप्त हुई है[2]। चित्रित बरतनों के साथ काले और मखनियाँ बरतन, जिन पर बिन्दी या आड़ी और सीधी काली लकीरें चित्रित हैं, प्राप्त हुए हैं (क)। एक प्रकार के सिलेटी रंग के अनगढ़ सादे बरतन भी मिले हैं। छिछली थाली (फलक ३० त) तथा लोटा (ञ) यहाँ प्रदर्शित हैं।

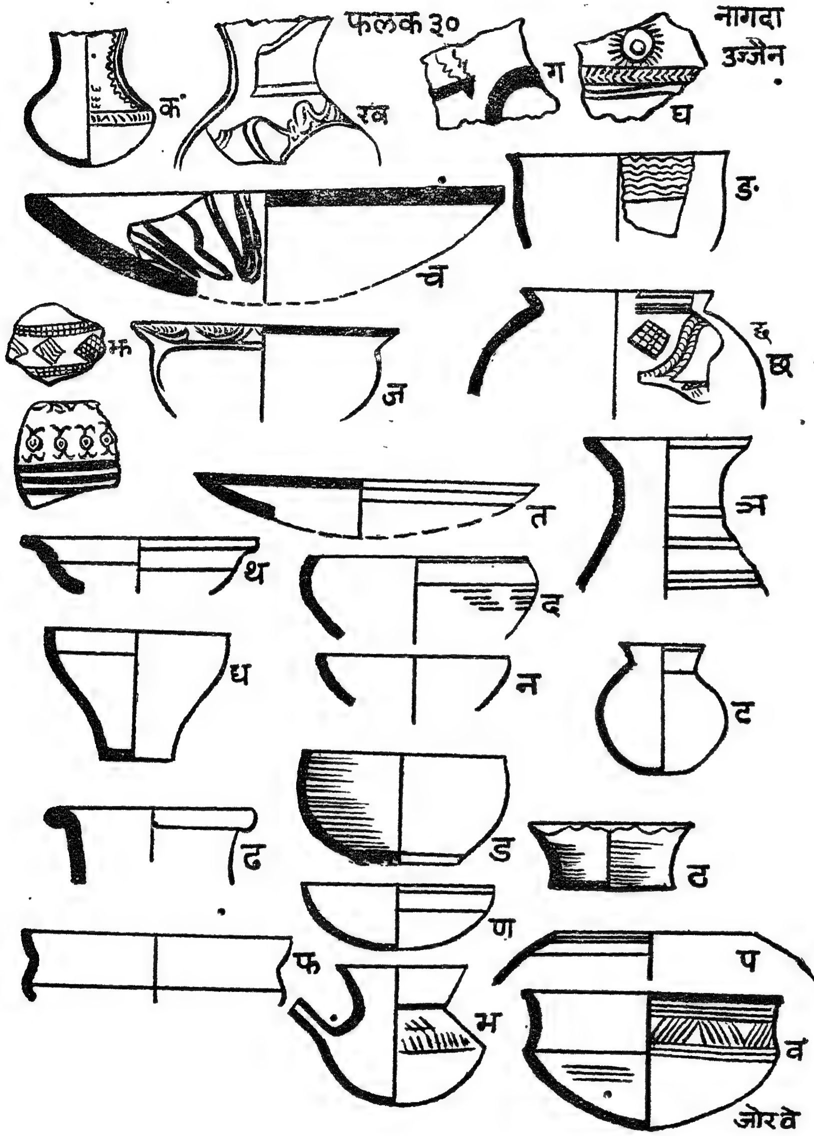
---

[1] ए० घोष—इंडियन आर्कैआलोजी १९५५–५६, पृ० १४।

[2] ए० घोष—उपर्युक्त फिगर ६।

ए० घोष—इण्डियन आर्कैआलोजी १९५६–५७, पृ० २४।

इसके ऊपर के स्तरों से दूसरे काल के जो बरतन प्राप्त हुए हैं उनमें मखनियाँ और काले रंग के बरतन अदृश्य हो जाते हैं और उनके स्थान पर



लाल-काले रंग के बरतन प्राप्त होते हैं। कुछ लाल बरतन के टुकड़े काली चित्रकारी के भी मिलते हैं, परन्तु बहुत कम। इन लाल-काले बरतनों में गहरे और छिछले कटोरों का ही बाहुल्य है (फलक ३० थ, द)।

इन काले-लाल बरतनों के ऊपर उत्तरी चमकवाले बरतन तथा उनके साथ के और घटिया भाँति के बरतन दूसरे स्थानों की भाँति मिले हैं। इसी काल के कुछ लाल बरतन ऐसे भी मिले हैं जिन पर ऊपर से बालू चिपकाई हुई है। घटिया बरतनों में अण्डे के आकार के कुण्डे, जैसे राजघाट में मिले हैं, यहाँ भी प्राप्त हुए हैं तथा कटोरे (ध), लोटे (ट), गगरे, थालियाँ भी प्राप्त हुई हैं। उत्तरी काली चमक वाले बरतनों में कटोरे तथा थालियाँ ही मिली हैं जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि ये बरतन प्रायः भोजन करने के ही काम में आते थे, भोजन पकाने के नहीं।

उज्जैन के गढ़कालका के ढूहे की खोदाई से जो स्तर प्राप्त हुए हैं उनमें सबसे नीचे के स्तर से लाल-काले बरतन, लाल बरतन जिनपर दुबारा काला लेप चढ़ाया गया है, बिना लेप के बरतन तथा लाल लेप चढ़े बरतन जिनकी मिट्टी में कंकड़ियों के मिले रहने के कारण वे फफोलेदार कहे गये हैं, दो-चार टुकड़े सिलेटी रंग के चित्रित बरतन प्राप्त हुए हैं। प्रायः सभी बरतन कुछ फफोलेदार बरतनों को छोड़कर, चाकपर बने हैं। लाल-काले बरतनों में प्रायः थाली और गहरे कटोरे (ड) ही प्राप्त हुए हैं। फफोलेदार बरतनों में कन्धे निकली हुई हंड़िया ही अधिक हैं (ढ)। लालपर काला लेप चढ़े हुए बरतनों में विशेष गोल शरीरवाले कटोरे हैं (ठ)। यहाँ से नागदा के पहले स्तरवाले चित्रित बरतन नहीं प्राप्त हुए हैं। उसके स्थान पर चित्रित सिलेटी रंग के बरतन प्राप्त हुए हैं।

दूसरे स्तर से उत्तरी काली चमकवाले बरतन बहुत संख्या में प्राप्त हुए हैं। ये बरतन प्रायः कौशाम्बी और राजघाट के बरतनों की भाँति हैं। इनमें सुनहली चमक और रूपहली चमकवाले बरतन भी हैं। यहाँ कुछ अधबने बरतन प्राप्त होने से ऐसा ज्ञात होता है कि ये यहाँ बनते थे। इनमें कुछ बरतनों पर नारंगी रंग का चित्रण भी है। एक टूटा बरतन ताम्बे के तार से भी जोड़ा हुआ यहाँ प्राप्त हुआ है।[1] इस प्रकार के बरतनों में अधिक संख्या में थाली, गोल पेंदी के कटोरे (ण) और बिना बार की हंड़ियाँ मिली हैं (प)। ऐसा अनुमान होता है कि इस प्रकार की हंड़ियाँ रसेदार सामान परोसने के काम में आती थीं।

इसके ऊपर के स्तरों से कुषाणकालीन बरतन प्राप्त हुए हैं जैसे और स्थानों से मिले हैं, परन्तु अभी इनका विशद विवरण प्राप्त नहीं है।

नर्मदा तटपर माहेश्वर का ढूहा मध्यभारत के नियार जिले में स्थित है। इसी स्थानपर माहिषमती नगरी थी, ऐसा लोगों का अनुमान है। यहाँ से पीछे के प्रस्तर युग के अस्त्रों के साथ जो मिट्टी के बरतन डाक्टर सांखलिया

[1] ए० घोष-इंडियन आर्केआलोजी १९५६–५७, पृ० १४।

को प्राप्त हुए हैं वे विचित्र हैं (जैसे उज्जैन से मिले हैं)। ये उत्तरी काली चमकवाले बरतनों के पूर्व काल के हैं[1] (ईसापूर्व ५०० वर्ष के भी पहले के)। इस प्रकार के बरतन मालवा में और स्थानों से भी प्राप्त हुए हैं तथा ताम्रयुग के समझे जाते हैं। इन बरतनों पर प्रायः लाल लेप तथा काले रंग की चित्रकारी है। चित्रकारी का विषय प्रायः तिर्छी तथा खड़ी रेखाएँ, त्रिकोण आकार, वृत्त, पत्तियाँ, नाचते मनुष्य तथा बारहसिंगा है[2] (जैसे उज्जैन के बरतनों पर बने हैं)। इसके ऊपर के स्तरों पर से लाल-काले बरतन, उत्तरी काली चमकवाले बरतन प्राप्त हुए हैं।

इसी ढूहे के ठीक सामने नावदा टोली का ढूहा है जिसमें से भी इसी प्रकार के लाल-काले बरतन प्राप्त हुए हैं। परन्तु नासिक में प्रस्तर युग के पश्चात् उत्तरी काली चमकवाले बरतन मिलते हैं[3]। जोरवे में लाल लेप से आच्छादित काली चित्रकारी से आभूषित बरतन प्राप्त हुए हैं। उसमें का एक नमूना २५ ब पर दिखाया गया है।

पूर्वी खानदेश का बहाल स्थान गिरन नदी के किनारे है। जो सबसे नीचे का स्तर यहाँ से प्राप्त हुआ है (१०) उसमें से सिलेटी रंग के मोटे गोल शरीर के (फलक २६ क) गगरे प्राप्त हुए हैं जिनके मुँह बाहर की ओर खिले हुए हैं। ये गगरे ब्रह्मगिरि से प्राप्त इसी प्रकार के बरतनों से बहुत मिलते हैं।[4] भीतर की ओर दबी हुई बार की चिपटी पेंदी की कटोरियाँ (ख) तथा हाथ के बने कुंडे भी इसी स्तर से प्राप्त हुए हैं। इन कुंडोंपर तिर्छी तथा एक दूसरे को काटती हुई रेखाएँ खुदी हुई हैं। कुछ पर गोल आकार अंगूठे को दबाकर बनाये गये हैं तथा इनके दोनों ओर रस्सी की बटन दिखाई गयी है (ग)। ये रेखायें तथा अंगूठे के चिह्न इत्यादि बरतन को पकाने के पूर्व बनाये हुए हैं। सिलेटी रंग के कुछ पतले बरतन ऐसे भी प्राप्त हुए हैं जिनपर लाल धारियाँ बनी हैं।

पहले काल के दूसरे स्तर से बड़े सुन्दर लाल रंग के बरतन प्राप्त हुए हैं जिनपर काले रंग की चित्रकारी है (फलक ३१ घ, ङ, च, छ, ज, झ)। चित्रकारी का विषय, प्रायः आड़ी-बेड़ी रेखाएँ, एक दूसरे को काटती हुई रेखाएँ (छ), नदी की तरंगों को दिखाती हुई रेखाएँ (ज), त्रिकोण (च), बैल तथा गदहे के आकार (घ), सीढ़ियाँ, चीते का आकार (ङ) इत्यादि

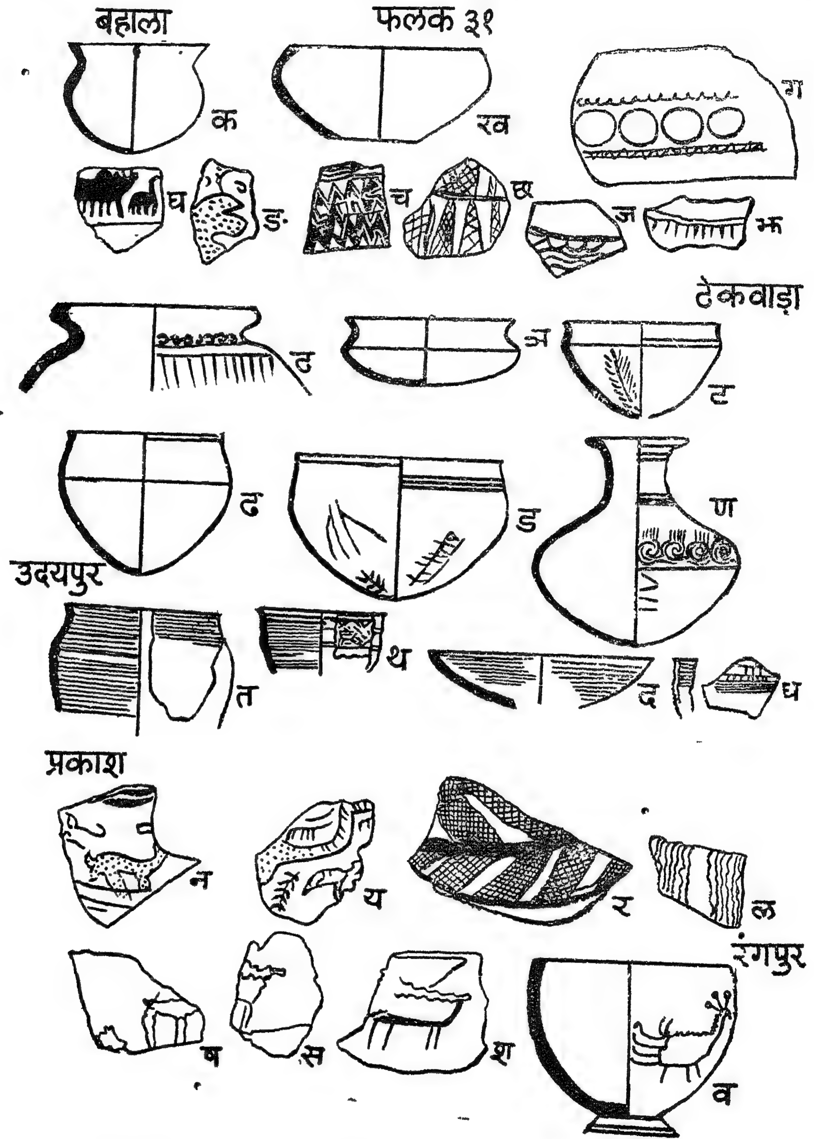
[1] वी० डी०—कृष्णस्वामी—प्राग्रेस इन प्रीहिस्ट्री एनशण्ट इण्डिया नं० १, पृ० ६८।

[2] बी० बी० लाल-प्रोटो हिस्टारिक इनवेस्टिगेशन एनशण्ट इंडिया न० ९, पृ० ९९।

[3] एच० डी० सांखलिया—एनशण्ट इंडिया प्रीहिस्टारिक महाराष्ट्र—जरनल बाम्बे बाच आफ रायल एशियाटिक सोसाइटी भाग २७ (१९५१), पृष्ठ ९९ तथा आगे।

[4] ए० घोस इंडियन आर्केआलोजी—१९५६-५७, पृ० १७।

हैं। कुछ चमकते लाल बरतनों के टुकड़े वैसे भी मिले हैं जैसे रंगपुर (सौराष्ट्र) से हड़प्पा के बरतनों के ऊपर की सतह से प्राप्त हुए हैं। इस काल की ऊपर की सतहों से प्राप्त गड्डुए वैसे ही हैं जैसे जोरवे से मिले हैं



(फलक २५ भ)। इन्हीं बरतनों के साथ रगड़कर चमकाये हुए सिलेटी रंग के बरतन और कुछ काले बरतन जिनपर सफेद धारियाँ बनी हैं, मिले हैं। इन दोनों स्तरों को ताम्रयुग का ही माना जा सकता है। एक कन्धा

निकली हुई कटोरी है जैसी जोरवे में पहले काल के दूसरे स्तर से मिली हैं तथा नावदा टोली के भी ताम्रयुग के स्तर से प्राप्त हुई हैं।

दूसरे काल में जब लोहा मिलने लगता है तब उसके साथ लाल-काला बरतन भी सामने आता है। इन बरतनों में भीतर घास-फूस भर देते थे और इन्हें आंवें में उल्टा सजा देते थे इस कारण ये बाहर से लाल और भीतर से काले हो जाते थे। इनमें कुछ का रंग मखनियाँ है। यह रंग आंवा में धुआँ अधिक हो जाने के कारण हो जाता है। इन बरतनों पर अच्छी चमक है। इस प्रकार के बरतनों में कटोरे जैसे उज्जैन से प्राप्त हुए हैं फलक २५ (ड) तथा थाली इत्यादि मिले हैं। इन बरतनों के साथ जो मोटे बरतन प्राप्त हुए हैं उनमें गोल शरीरवाले गगरे और कन्धे निकली हुई हाँडियाँ हैं। इन बरतनों का काल प्रायः ईसा पूर्व ६०० से ३०० वर्ष तक माना गया है।[1]

तीसरे काल के प्रथम स्तरों में लाल काले बरतन नहीं मिले हैं परन्तु कंकड़ी मिली हुई मिट्टी के मोटे बरतन पहले काल के आकार के प्राप्त हुए हैं। इन बरतनों पर ऊपर से किसी चोखी वस्तु से चिह्न भी बने हुए हैं। इन स्तरों से कुछ उत्तरी काली चमकवाले बरतन भी मिले हैं।

इस काल के दूसरे स्तर से जो लाल बरतन प्राप्त हुए हैं उनमें छोटे-छोटे कंकड़ों की मात्रा और अधिक है तथा इन्हें चिकना करने का भी प्रयत्न कम किया गया है। इस काल के स्तर से लाल चमकीले बरतन भी मिले हैं।

इसके पश्चात् इस स्थान पर नदी के बाढ़ के चिह्न प्राप्त होने लगते हैं जिसने कदाचित् सारे नगर को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया होगा तथा यहाँ के निवासियों को इस स्थान को छोड़ने के लिए भी विवश किया होगा। नगर पुनः मुसलमानों के काल में बसा।

टेकवाड़ा से, जो बहाल के बिलकुल पास ही है तथा गिरना नदी के दूसरे किनारे पर बसा है, प्राप्त बरतन उसी प्रकार के हैं जैसे बहाल के प्रथम काल के दूसरे स्तर से प्राप्त हुए हैं। इनमें कुछ बरतन लाल हैं जिनपर काले रंग से चित्रकारी की गयी है (ण), परन्तु अधिक लाल-काले हैं। इन लाल-काले बरतनों पर ऊपर से कुछ खोदाई की हुई (फलक ३१, ट ड, ढ, ण) है। इन बरतनों में गगरे (ण) के ऊपर की चित्रकारी की कारीगरी बहुत सुंदर है। इसपर घोंघे के आकार बनाये गये हैं। उनके सिरपर छः धारियाँ हैं जैसी मोर के मुकुट को चित्रित करने में व्यवहृत होती हैं।

उदयपुर के अहर गाँव के धूलकोट के टीले से जो स्तर प्राप्त हुए हैं उनको दो कालों में विभक्त किया जा सकता है। सबसे नीचे के स्तर से जो बरतन प्राप्त हुए हैं वे लाल काले हैं। इनको तीन स्तरों में बाँटा जा

[1] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५६-५७, पृ० १८।

सकता है। सबसे नीचे के स्तर के बरतन कुछ मोटे बने हुए हैं और बाहर की ओर ही चमकाये गये हैं (फलक ३१ त, द)। इनमें बहुतों पर चित्रकारी की गयी हैं (फलक ३१ थ)। इस काल के सबसे ऊपर के स्तरों से जो बरतन मिले हैं वे भी अनगढ़ हैं। इन्हीं स्तरों से एक प्रकार के लाल चमकदार चित्रित बरतन भी प्राप्त होने लगते हैं जिनमें किसी पर सफेद रंग से और किसी-किसी पर काले रंग से समानान्तर रेखाएँ तथा बिन्दियाँ बनायी गयी हैं। लाल-काले बरतनों के साथ एक प्रकार के लाल चमकीले बरतन भी प्राप्त होते हैं जिनके कन्धों पर खोदाई का काम किया गया है।[१]

यहाँ के दूसरे स्तर से जो बरतन प्राप्त होते हैं उनमें सादे लाल रंग के बरतनों के आकार बड़े सुन्दर हैं। कुछ ढक्कन ऐसे हैं जिनके सिर पर सुन्दर छोटे बरतनों के आकार बने हैं, कुछ के कोर पर लम्प बने हैं। कुछ कुण्डे अण्डे की भाँति के आकार के हैं। यहाँ से कुछ मिट्टी के बने तालाब भी मिले हैं।

चित्तौड़गढ़ तथा राजस्थान के पूर्वी दक्षिणी भाग की खोदाई के फलस्वरूप यह पता चला है कि इस क्षेत्र के उत्तर-पश्चिम तथा दक्षिण-पश्चिम की ओर हड़प्पा सभ्यता के पीछे के काल की भाँति के बरतन प्राप्त होते हैं जैसे बीकानेर, सिंध तथा काठियावाड़ में। उत्तरपूर्व की ओर हस्तिनापुर की भाँति चित्रित सिलेटी रंग के बरतन मिलते हैं। पूर्व-दक्षिण तथा दक्षिण-पूर्व की ओर लाल-काले तथा लाल पर काले रंग से चित्रण किये हुए पात्र प्राप्त होते हैं।[२] इस खोदाई में हड़प्पा काल के बरतन तो नहीं मिले परन्तु ऐसे स्थान प्राप्त हुए हैं जहाँ से लाल-काले बरतन अहर के ढंग के मिले हैं। इस प्रकार के बरतन उदयपुर जिले के दरौली, चित्तौड़गढ़ जिले के हिंगवानियों, उमंड, नंगौली, वनसेन, सिरदी तथा मण्डसोर के जबाड़ स्थानों से मिले हैं।

मध्यभारत में पश्चिम की ओर बढ़ने पर जो विशिष्ट स्थान इधर की खोदाई में प्राप्त हुआ है वह प्रकाश है। यह पश्चिमी खानदेश में पड़ता है। यहाँ के टीले की ५५ फुट की गहरी खोदाई में जो स्तर प्राप्त हुए हैं उन्हें चार कालों में विभाजित किया जा सकता है। सबसे नीचे के स्तर से जो बरतन प्राप्त हुए हैं वे लाल हैं और उनपर काले रंग से चित्रकारी की गयी है (फलक ३१ न, य, र, ल)। चित्रकारी में प्रायः ईंट, नदी की लहर, सीढ़ी तथा पशु के आकार दिखाये गये हैं।[३] इस प्रकार के बरतनों के साथ एक

[१] ए० घोष—इण्डियन आर्कैआलोजी १९५४-५५, पृ० १४।

[२] ए० घोष—इण्डियन आर्कैआलोजी—५६-५७, पृ० ८।

[३] ए० घोष—इण्डियन आर्कैआलोजी—५४-५५, पृ० १३।

प्रकार के पतले चमकदार सिलेटी रंग के बरतन प्राप्त हुए हैं जिन पर श्वेत धारियां बनी हुई हैं। इनके अतिरिक्त सिलेटी रंग के मोटे बरतन भी हैं जिनके बारपर लाल रंग का लेप है। ये बरतन चमकदार नहीं हैं।

दूसरे काल की बस्ती पहिले काल की बस्ती में कुछ काल पश्चात् बसी, ऐसा ज्ञात होता है। इस काल के नीचे के स्तरों से १४-१५ फुट तक लाल-काले बरतन मिलते हैं जैसे अहर से मिले हैं। इसी काल के ऊपर के स्तरों से उत्तरी काली चमकवाले बरतन प्राप्त हुए हैं। उनके साथ बड़े-बड़े कुंडे भूरे रंग के भी मिले हैं।

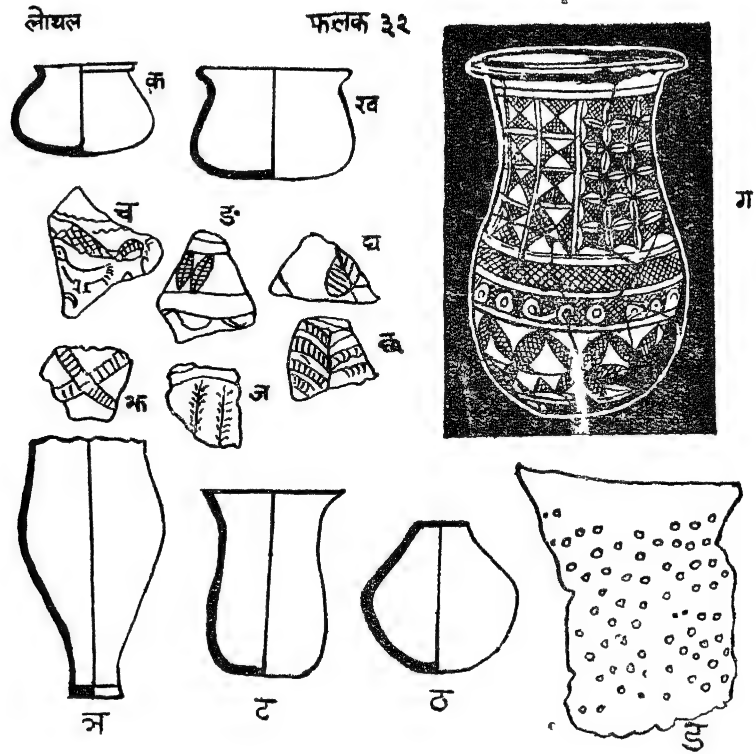
इस प्रकार दो तथ्य हमारे सामने आते हैं। एक तो यह कि इस क्षेत्र में लाल बरतन काले रंग से चित्रित लाल-काले बरतनों के पहले काल में मिलते हैं और दूसरा यह कि लाल-काले बरतन इस क्षेत्र में उत्तरी काली चमकवाले बरतनों के पूर्व बनने लग गये थे। यह काल प्रायः छठी से पहली शताब्दी ई० पू० का होना चाहिये। इसके बाद का काल, जो प्रायः ई० पू० पहली शताब्दी से लेकर ईसा पश्चात् चौथी शताब्दी तक चलता है, उसके स्तरों से प्रायः लाल चमकीले बरतन प्राप्त हुए हैं जिनमें गुलाबपाश इत्यादि हैं जैसे कुषाणयुग के बरतन और दूसरे स्थानों से मिले हैं।

पिछले दस वर्षों की भारत की खोदाइयों में सबसे महत्त्वपूर्ण तो लोथल की खोदाई है। मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, चान्हूदाड़ो इत्यादि के सन् १६४७ में पाकिस्तान चले जाने से भारत में कोई स्थान ऐसा नहीं रह गया था जहाँ प्रागैतिहासिक युग के स्तरों का अध्ययन भली भाँति हो सके। पूर्वी पंजाब के रोपड़ से हड़प्पा के पिछले काल के कुछ अवशेष अवश्य प्राप्त हुए थे, परन्तु सिन्धुघाटी के प्रारम्भिक काल की सभ्यता के अवशेष वहाँ भी नहीं मिले थे। लोथल की खोदाई ने भारत को पुनः मोहनजोदड़ो की भाँति का एक ऐसा स्थान प्रदान कर दिया जिस पर हमें गर्व हो सकता है। यों झालावाड़ के रंगपुर स्थान से वत्स को कुछ अवशेष हड़प्पा की सभ्यता के प्राप्त हुए थे और १६५३-५४ की खोदाई के फलस्वरूप हड़प्पा काल के कुछ स्तरों से लेकर उत्तरी काली चमकवाले बरतनों के स्तरों के पूर्व तक की शृङ्खला भी प्राप्त हुई थी[1] तथा यह निश्चित भी हुआ था कि हड़प्पा के बरतनों के पश्चात् पीछे चलकर एक प्रकार के लाल रंग के चमकदार बरतन बनने लग गये थे जो धीरे-धीरे मोटे से पतले हुए और उन पर काले रंग से चित्रकारी भी होने लगी परन्तु लोथल की खोदाई से प्राप्त स्तरों का यहाँ पता नहीं है। हाँ, यह अवश्य पता लगा कि धीरे-धीरे बरतनों के आकार में परिवर्तन हुए तथा पुराने हड़प्पा के आकारों के स्थान पर नये आकारों का आविर्भाव हुआ।

---

[1] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५४-५५, पृ० १२।

लोथल अहमदाबाद जिले में है। यहाँ का विस्तृत ढूहा सरगवाला गाँव में है। यह स्थान प्रागैतिहासिक युग में एक बड़े बन्दर के रूप में रहा होगा जैसा यहाँ की खोदाई के फलस्वरूप पता लगा है।[१] यहाँ के बने गन्दे पानी के नाले और गलियाँ, एक सीध में बने मकान यहाँ के निवासियों की सभ्यता के प्रत्यक्ष प्रमाण उपस्थित करते हैं।[२] इस स्तर से प्राप्त बरतन चमकीले लाल रंग के हैं और खूब माड़ी हुई मिट्टी के बने हैं। इन पर



काले रंग से चित्रकारी की गयी है (फलक ३२ ग)। चित्रकारी के विषय प्रायः वे ही हैं जो मोहनजोदड़ो में प्राप्त होते हैं जैसे ताड़ के पेड़ (फलक ३२ घ), पीपल के पत्ते (घ), गेहूँ के दाने (ङ), गेहूँ की बाल (ज), लतर, पक्षी (च), मछली इत्यादि। एक बात इस चित्रकारी से स्पष्ट हो जाती है कि या तो उस समय लोथल के पास ताड़ के पेड़ थे या इनके

---

[१] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५६–५७, पृ० १५।

[२] दी लीडर २५ अगस्त १९५८ पृ० ४।

बनाने वाले किसी ऐसे स्थान से आये थे जहाँ ताड़ के पेड़ बहुतायत से उपस्थित थे। आज इस ओर ताड़ के पेड़ प्रायः बहुत कम हैं। इन्हीं बरतनों के साथ लाल-काले बरतन (क) भी ऊपर के हड़प्पा स्तरों से प्राप्त होते हैं तथा एक प्रकार के भूरे रंग के मोटे बरतन (ख) भी मिलते हैं।

इन लाल काले बरतनों में कई प्रकार के हल्के गहरे रंग दिखाई देते हैं जो कदाचित् भट्ठी की तीव्र तथा हलकी आँच लगने के कारण उत्पन्न हुए प्रतीत होते हैं। कुछ लाल-काले बरतनों पर चित्रकारी भी है। एक पर तो पद्म भी बना है।[४]

कुछ बरतन ऐसे भी प्राप्त हुए हैं जिनकी भूमि तो बादामी है और उस पर चित्रकारी लाल तथा काले दोनों रंगों से की गयी है। ये बरतन मोहन जोंदड़ो के बरतनों के भाँति पानी सोखते हैं। फलक ३२ ग पर का बरतन हड़प्पा से प्राप्त इसी प्रकार के बरतन के आकार का है तथा चित्रकारी में भी बहुत कुछ उससे मिलता है।[५] बरतन का (क) का आकार भी हड़प्पा के बरतन की भाँति ही है[६] तथा इस पर की चित्रकारी तो बिलकुल वहाँ के बरतन से मिलती है।[७]

अब तक खोदाई के फलस्वरूप यहाँ के स्तरों को चार कालों में विभाजित किया गया है। इस आधार पर चमकीले लाल-काले बरतन पीछे के स्तरों में अधिक मिलते हैं जिससे इस धारणा की पुष्टि होती है कि इस प्रकार के बरतन हड़प्पा की भाँति के बरतनों के साथ बनने पर भी तथा उसी आकार के होने पर भी उनसे पीछे के काल में बने तथा बाद में लोथल वासियों के व्यवहार में आने लगे।

सौराष्ट्र में प्रायः अबतक २४ स्थान ऐसे प्राप्त हो चुके हैं जहाँ से प्रागैतिहासिक युग की सिन्धुघाटी की सभ्यता के ढंग के बरतन मिले हैं। उनमें सबसे दक्षिण की ओर भड़ोच का मेहगम तथा तेलोद हैं जहाँ के बरतन १९५७ की प्रदर्शनी में आये थे। सबसे उत्तर की ओर देसलपुर है। ऐसा ज्ञात होता है कि सिन्धुघाटी के आदिवासियों का यह नगर भारत के दक्षिण की सामग्री मोहनजोदड़ो तथा अन्य नगरों को समुद्र के मार्ग से

---

४ ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५६–५७ प्लेट १३ ए। ८

५ वत्स—एक्सकवेशन्स एट हड़प्पा—प्लेट ६९। १७ इसी के साथ मिलाइये मांके-फरदर एक्सकन्वेशन्स एट मोहनजोदड़ो—प्लेट ५८।७।

६ वत्स—उपर्युक्त प्लेट ६९।५।

७ पीपल का पत्ता—वत्स उपर्युक्त ६९।४७, गेहूँ के दाने मांके फरदर उपर्युक्त ७०।८। मछली—वत्स, उपर्युक्त ६८।५८, पक्षी—वत्स ६६।६२ इत्यादि।

पहुँचाता था, जब मोहनजोदड़ो इत्यादि नगर नष्ट हुए तो वहाँ के निवासी दक्षिण की ओर बढ़े और भारत के इस भू भाग में इन्होंने अपनी सभ्यता की ध्वजा फहराई। राजस्थान की ओर से आये हुए लोगों के प्रभाव के फलस्वरूप इन्होंने भी लाल काले बरतन पीछे बनाना प्रारम्भ किया। इस प्रकार थोड़े में मध्य तथा पश्चिमी भारत के मिट्टी के बरतनों की कहानी हमें यहाँ के निवासियों के विषय में भी कुछ खोज की सामग्री उपस्थित करती है। ये बरतन हमारे पूर्वजों के नित्य के व्यवहार में आते थे और इनका उनके जीवन में बड़ा महत्व था। इन बरतनों की चित्रकारी में उस काल के मनुष्य के जीवन की कहानी का बहुत कुछ अंश प्राप्त होता है जिसका अब कोई लिखित इतिहास उपलब्ध नहीं है।

उत्तरी भारत के मिट्टी के बरतनों की शृंखला

भारत का उत्तरीय भाग इतिहास की दृष्टि से सबसे अधिक विजातियों के आक्रमणों से त्रसित रहा है। सिन्धुघाटी की सभ्यता जो प्रायः आज से ५००० वर्ष पूर्व की मानी जाती है, उसमें भी आक्रमणों के चिह्न प्राप्त हुए हैं।[1] ऐसा विश्वास है कि उस सभ्यता को निर्मूल करने वाले ईरान की ओर से भारत में आये। इसके पश्चात् के युगों में ईरानी डरायस (दारा), यूनानी अलेकजाण्डर (सिकन्दर), यूनानी सल्यूकस, शक, पारथियन, कुषाण, हूण इत्यादि के आक्रमणों की गाथायें हमारे देश के इतिहास के पृष्ठों पर अंकित हैं। ये सभी पश्चिमोत्तर मार्ग से भारत में पधारे। इस प्रकार भारत का यह भूभाग निरन्तर नये-नये प्रभावों से प्लावित होता रहा है। कदाचित् भारतीय सार्थवाहों की वस्तुओं को देखकर विदेशियों के मन में इधर आने की बात उठी हो।

भारत के उत्तरी पश्चिमी प्रदेश के यूसुफजाइयों के इलाके में एक स्थान है, तख्त इबाही-यह पहाड़ी भूभाग होती-मरदान से सीधे ६ मील उत्तर की ओर है। यहाँ की खोदाई के फलस्वरूप गान्धार कला की अनेक मूर्तियाँ मिली हैं[2] जिनमें बहुत सी इण्डियन म्यूजियम कलकत्ते में रखी हैं। यहाँ की खोदाई से मिट्टी के बर्तन भी प्राप्त हुए थे[3] परन्तु उनका विवरण क्या हुआ जो प्राप्त नहीं होता। केवल इतना ज्ञात होता है कि ये काली थीं और इन पर खरोष्ट्री में कुछ खुदा था—'संघे चहुदिशे क'।

शाह जी की ढेरी से जो बर्तन प्राप्त हुए हैं वे प्रायः कुषाण काल के दिखाई देते हैं, इन पर गान्धार कला का पूरा प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। गगरे, (फलक ३३ क) लोटे (ख, घ, ङ, झ) सब लाल रंग से आच्छादित हैं। एक बिल्ली के मुँह की किसी पात्र की टोंटी भी प्राप्त हुई (च)। इस पर बिल्ली का मुँह बहुत सफाई से बनाया गया है। एक नपुए की भाँति के

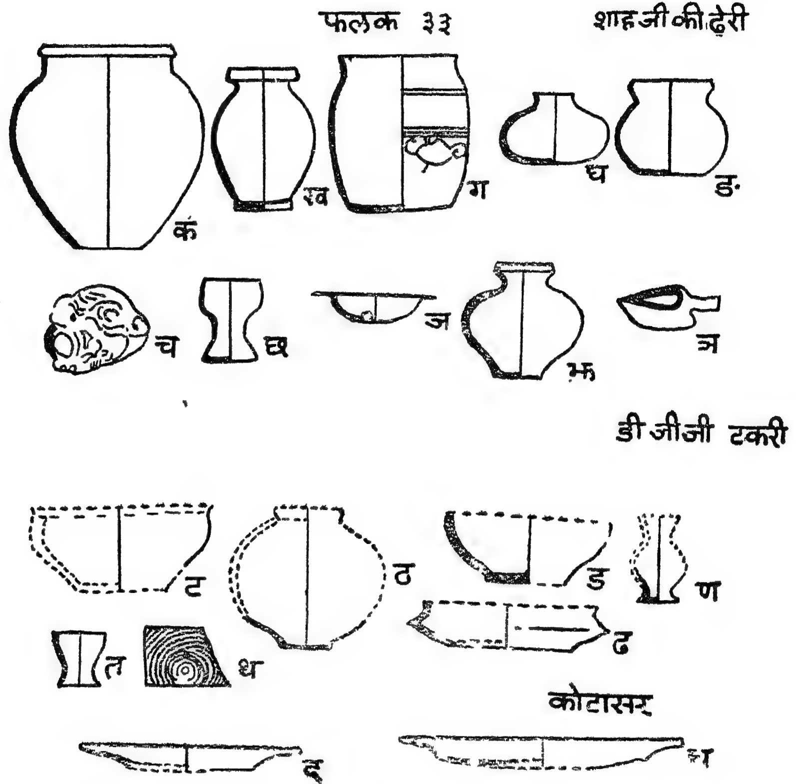
---

[1] एस्० पिग्गट—प्री हिस्टारिक इण्डिया पृ० २३८ ९।

[2] डी० बी० स्पूनर—एक्सकवेशन्स एट तख्त इबाही-अन्युल रिपोर्ट आफ आर्के-ओलाजिकल सर्वे १९०७–०८ पृ० १३२-१४८।

[3] एच्० हारग्रीव्स—एक्सकवेशन्स एट तख्त इबाही-अन्युअल रिपोर्ट १९१०–११। पृ० ३४.

बर्तन पर मछली के आकार का कोई जन्तु खोदा हुआ है (ग)। ढक्कन जो प्राप्त हुए हैं वे भी कुषाण काल के ढक्कनों से बहुत कुछ मिले हुए हैं। दो प्रकारके दीपक यहाँ मिलते हैं। एक में उठाने के हेतु मूठ है (अ), दूसरा केवल आगे से पिचका दिया गया है। एक धूपदान भी यहाँ से प्राप्त हुआ है (छ)। यहाँ ही कनिष्क का एक चैत्य भी था।[1]



डी जी जी टाकरी से कुछ बर्तन ऊपर के स्तरों से यवन काल के भी प्राप्त हुए हैं। यहाँ से हड़प्पा काल के बरतनों के टुकड़े भी मिले हैं। यह स्थान सिन्ध के खैरपुर ताल्लुके के अन्तर्गत है।[2] वैज्ञानिक खोदाई के अभाव में कई स्तरों के टुकड़े एक दूसरे के साथ मिल गये हैं। इनके आकार प्रायः और स्थानों के यवन काल के बरतनों से मिलते हैं। एक बरतन के टुकड़े पर

[1] एच्० हारग्रीव्स—एक्सकवेशन्स एट शाह जी की ढेरी-अन्युअल रिपोर्ट आर्के-ओलाजिकल सर्वे १९१०–११ प्लेट १५ पृ० ३१–३२।

[2] श्री माधो स्वरूप वत्स—एक्सप्लोरेशन्स इन खैरपुर स्टेट, अन्युअल रिपोर्ट आर्के-ओलाजिकल सर्वे १९३५–३६ पृ० ३६।

समाश्रित बहुत से वृत्त एक बीच के बिन्दु के आकार पर बने हैं (थ)। इस प्रकार के वृत्त प्रायः ईसा के प्रथम शताब्दी में बनते रहे।[1] इसी प्रकार यहाँ से प्राप्त थाली (ढ) का आकार तथा प्याले (त) का भी आकार सिरकप से प्राप्त बरतनों से बहुत कुछ मिलता है। थाली का कन्धा बाहर की ओर निकला हुआ है, जिसका विवरण यवन तथा कुषाणकालीन मिट्टी के बरतनों के साथ दिया हुआ है। इन बरतनों पर लाल रंग है और कुछ पर काले रंग से धारियाँ भी बनी हैं।

इसके पास ही एक स्थान कोटासर है। यह टाण्डो मस्ती खाँ रेल के स्टेशन से दो मील है।[2] यहाँ से प्राप्त बरतन तो यवन कालीन ही प्रतीत होते हैं। यहाँ से प्राप्त थालियों की कोर बाहर की ओर मुड़ी हुई है तथा इन पर काली चमक है।

रावल पिण्डी से २० मील पश्चिम की ओर तक्षशिला में इन आक्रमणों की कहानी की एक सूत्रबद्ध शृंखला हमें प्राप्त होती है। महाभारत में भी इस नगरी का नाम प्राप्त होता है और बौद्ध जातकों में तो इसका विवरण एक प्रसिद्ध विश्वविद्यालय के नगर के रूप में मिलता है। तीन महापथों का संगम होने के कारण इस नगरी की ख्याति दूर-दूर तक थी—उत्तर से काश्मीर से आनेवाला मार्ग, पूर्व से गंगा-यमुना के दोआब से आने वाला मार्ग तथा पश्चिम से खैबर के दर्रे से होकर आने वाला मार्ग सभी यहीं मिलते थे। प्रायः ईसा पूर्व ३२६ में अलेकज़ाण्डर के आगमन पर तक्षशिला के राजा आम्भी ने यहीं आत्म-समर्पण किया था।

यहाँ की खोदाई के फलस्वरूप एक के पश्चात् दूसरे तीन नगरों के अवशेष अब तक प्राप्त हो चुके हैं। तक्षशिला के भीर ढूहे की खोदाई के फलस्वरूप चार काल के स्तर मिले हैं जो प्रायः ईसा पूर्व ६०० से लेकर ईसा पूर्व २०० तक के ज्ञात होते हैं। सिरकप के ढूहे के स्तरों का काल प्रायः ईसा पूर्व २०० से लेकर कुशाणों के आगमन तक ज्ञात होता है। कुशाणों ने जो नगरी बसाई और जो हूणों के आक्रमण से नष्ट हुई वह यहाँ के एक ढूहे में मिली है। यहाँ से अनेक सिक्के प्राप्त हुए हैं, जिससे इन स्तरों का काल निश्चित होता है, तथा और भी अनेक ऐसी वस्तुएँ मिली हैं, जैसे आभूषण इत्यादि जिससे भी काल के निर्णय में सहायता मिलती है।

भीर ढूहे से प्राप्त सबसे सुन्दर तो उतरी काली चमक वाले बरतन हैं[3]

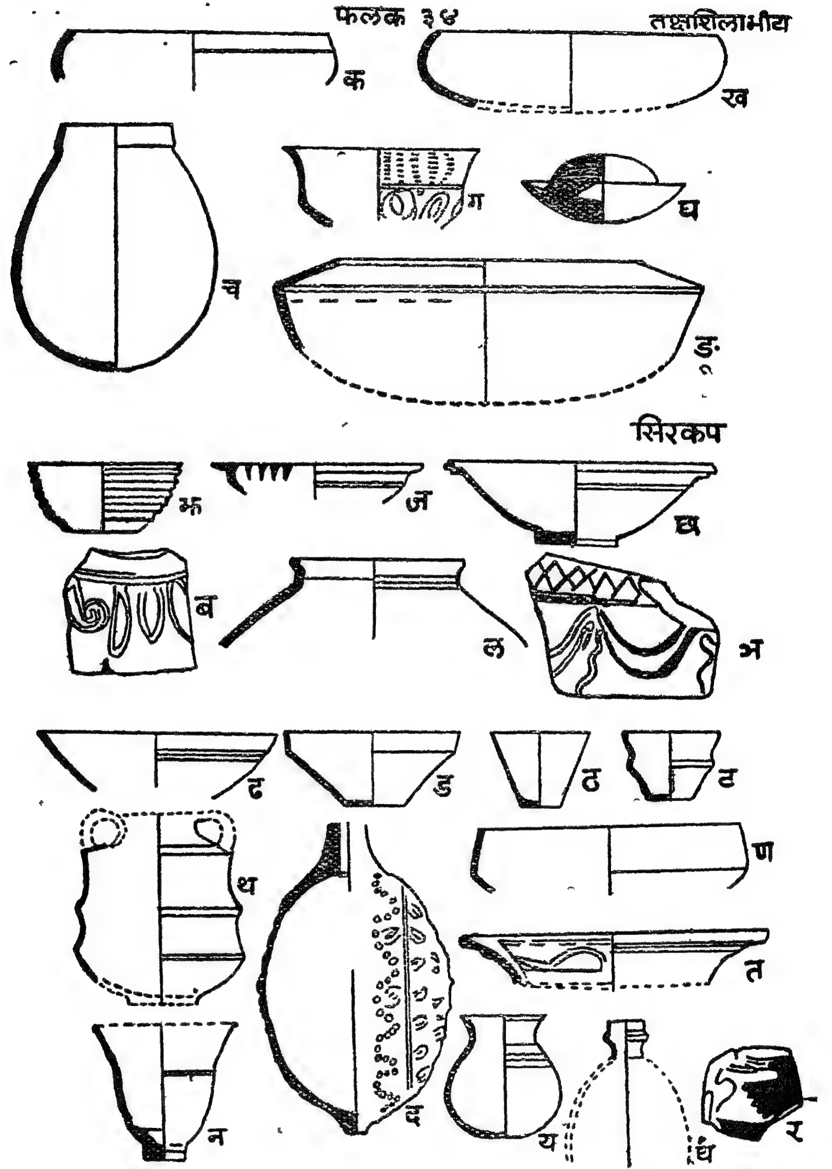
---

[1] देखिये बेगमपुर तथा वर्मी का खेड़ा सहारनपुर से प्राप्त इसी प्रकार के बरतनों के टुकड़े-अन्युअल रिपोर्ट आर्केओलाजिकल सर्वे १९३५-३६ प्लेट १४, ए० ई०।

[2] श्री माधो स्वरूप—उपरोक्त पृ० ३७।

[3] यह दुख का विषय है कि तक्षशिला से प्राप्त इस काल के बरतनों के सब आकार अभी तक अप्रकाशित हैं।

इनमें विशेष थाली एवं कटोरे ही मिले हैं (फलक ३४ क, ख, ग)। थालियों की कोर भीतर की ओर झुकी हुई हैं। एक थाली के बार पर बाहर की ओर कुछ रेखाएँ भी हैं (ख) तथा कटोरे (ग) के नीचे का भाग ऊपर के भाग



एक उभरी हुई रेखा द्वारा अलग किया हुआ है। नीचे के भाग में अण्डे के आकार का उठा हुआ काम भी हुआ है। क्या इस प्रकार की थाली को स्थाली

(शुक्ल यजु॰ १६।२७, ८६) तो नहीं कहते थे, जिसमें यज्ञ के समय चरु रखा जाता था।

यहाँ के मोटे बर्तनों में हाथ लगे हुए ढक्कन (ध), बिना बार की कन्धा निकली हुई हाँडियाँ (ङ), लम्बे लोटे (च) प्राप्त हुए हैं। इन पर कोई रंग नहीं है। संभवतः पहिले रहा हो, परन्तु अब ये सादे हैं। क्या इसी प्रकार की हाँड़ियों को उखा तो नहीं कहते थे (ऋग्वेद १।१६२।१३, १५) जिसे मृणमंथी कहा गया है (वैदिक इण्डैक्स १।८३)। उत्तर दक्खिन फैले हुए सिरकप के ढूहे[1] के नीचे बाक्ट्रियन यूनानियों की बसाई हुई तक्षशिला (प्रायः ईसापूर्व २००) के अवशेष से प्राप्त बरतनों के आकार बिखरे हुए हैं और उनमें सुन्दरता लाने का प्रयत्न किया गया है। यहाँ के बर्तनों को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि कुम्हारों ने आवश्यकता को दृष्टि में रखकर बर्तनों में उन्हें उठाने के हेतु हाथ लगाने का और तरलपदार्थ धार से गिरे इस हेतु मुँह बनाने का प्रयास किया है। ढूहे से प्राप्त बरतनों की अपेक्षा सिरकप से प्राप्त बरतनों में पेंदी भी बनाने का प्रयास हुआ है। इन बरतनों की मिट्टी को भलीभाँति मोड़कर चाक पर रखा गया है। प्रायः सभी बरतन चाक पर बने हुए हैं। मिट्टी में प्रायः बालू, चूना, कंकड़ तथा गेहूँ का छिलका मिलाया गया है।[2] इन्हें ऐसे आँवें में भी पकाया गया है जिसमें भलीभाँति वायु के प्रवेश का भी प्रबन्ध था। इस कारण प्रायः मिट्टी का हलका या गहरा लाल रंग है। सिलेटी रंग के बरतन बहुत थोड़े प्राप्त हुए हैं। इन बरतनों पर गहरे लाल रंग का लेप चढ़ा हुआ है, जो किसी किसी बरतन पर इतना गहरा हो गया है कि काले रंग की भाँति दिखाई देता है। इनको और सुन्दर बनाने के हेतु कुछ पर चित्रकारी भी की गई है, कुछ पर खोदाई का काम है और कुछ पर ठप्पे से छापा भी लगाया गया है। चित्रकारी बरतन के लाल लेप पर काले रंग से की गई है।

यहाँ के स्तरों को छः कालों में विभाजित किया गया है। पहला काल ईसापूर्व पहली शताब्दी के पूर्व भाग का तथा दूसरा इसी शताब्दी के उत्तर भाग का, तीसरा ईसा के प्रथम शताब्दी के पूर्व भाग का, चौथा ईसा की प्रथम शताब्दी के उत्तर भाग का, पाँचवा ईसा की दूसरी शताब्दी का तथा छठाँ काल ईसा की दूसरी शताब्दी के पश्चात् का है। कुछ बरतन जैसे कटोरे, पावे लगे कटोरे, कसोरे, गिलास, थालियाँ, ढक्कन, घट, लम्बे पेंदीदार शराब के ग्लास (न), लोटे तथा कुण्डे[3] तो प्रायः सभी स्तरों में प्राप्त होते हैं। प्रथम

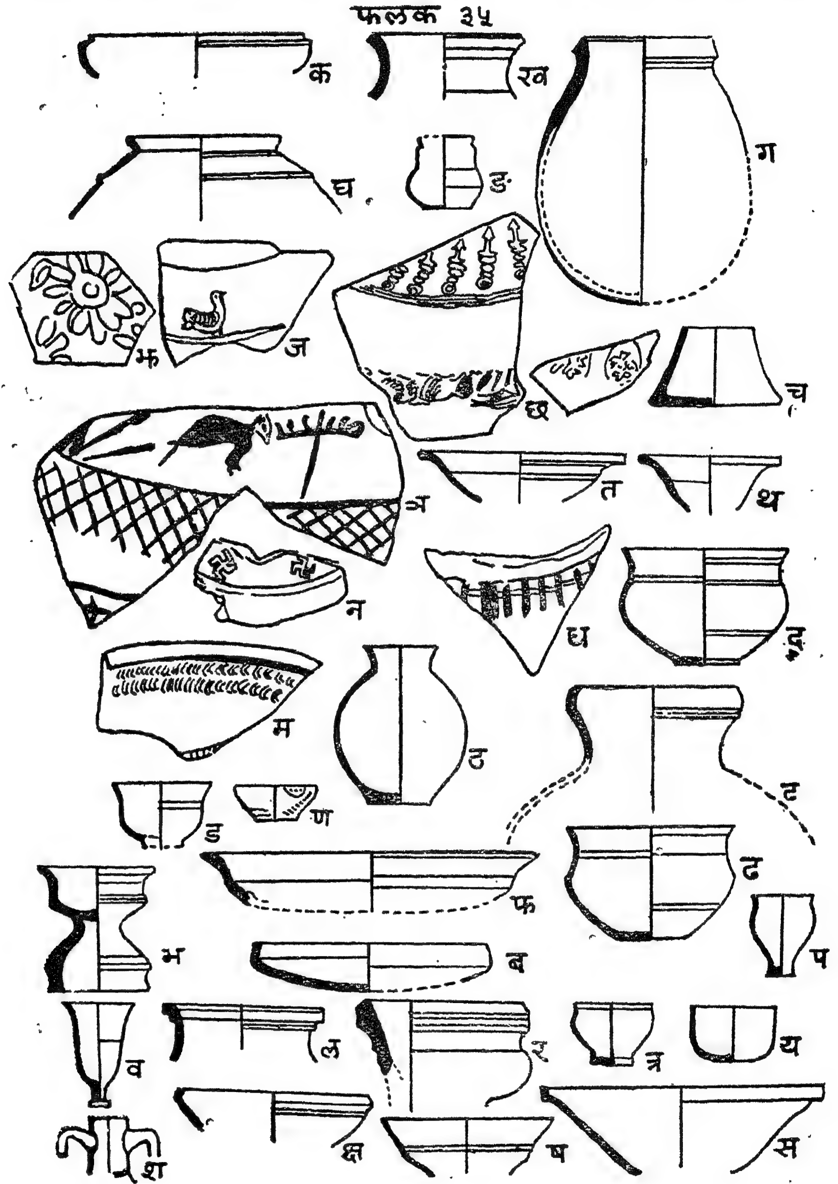
[1] ए० घोष—टक्सिला (सिरकप) १६४४-४५ फिगर।

[2] ए० घोष—उपर्युक्त पृष्ठ ४८।

[3] ए० घोष—टक्सिला (सिरकप) १९४४-४५ फिगर ३।१; ३।३; ४।७; ४।९; ५।२३; ७।३५; ८।३६; १२।५३; १३।६४; १४।७७।

स्तर के अपने बरतनों में तीन भाँति के कटोरे (फलक ३४ छ, ज, झ) तथा एक घड़ा (ल) मुख्य है। इस स्तर से चित्रित बरतन प्राप्त हुए हैं, उनमें

फलक ३५



एक कटोरे के भीतर की ओर त्रिकोण काले रंग से बने हुए हैं (ज) एवं एक टुकड़े पर बन्दरवार तथा ऊपर की ओर जाली काले रंग से बनी है (ञ)। एक बरतन पर लम्बे चतुष्कोण आकार एक सीध में खोद कर बनाए गये हैं तथा

इनके बीच-बीच में दो-दो रेखाएँ खड़ी और पड़ी एक दूसरे को काटती हुई दिखाई गई हैं।[1]

दूसरे काल[2] के स्तरों से उपर्युक्त सभी प्रकार के बरतन प्राप्त हुए हैं, परन्तु इन स्तरों के विशेष प्रकार के बरतनों में बिना लेप के पुरवे (ट, ठ), कसोरे (ड), लाल लेपदार कसोरे (ढ), खड़ी बार की थाली (ण), लोटा (य), चौड़ी तश्तरी (त), पानी के बोतल (थ, द), सुराही (ध) मुख्य हैं। पानी की बोतल (द) चिपटी है तथा इसके ऊपर बड़ा सुन्दर काम बना हुआ है। इस पर कौड़ी चिपका कर और खोदाई कर हंस की आकृति भी बनाई गयी है। यह लाल रंग के लेप से आच्छादित है। इस प्रकार की बोतलें अश्वारोही अपने साथ बराबर रखते थे। क्या इन्हें भी भस्त्रा कहते थे? यों भस्त्रा शब्द शतपथ में मिलता है (शतपथ ११।१।२।७ इत्यादि) तथा वैदिक इण्डैक्स के अनुसार यह शब्द चमड़े की बोतल का द्योतक है (२।६६) जिसे डाक्टर वासुदेवशरण जी ने ईरानी भरका अथवा मशक[3] माना है। ये बोतलें भी चमड़े की बोतलों की भाँति बनी हैं। मशक की भाँति पानी रखने के काम आती हैं और इस देश के उपयुक्त भी हैं, क्योंकि मिट्टी की बोतल और सुराही में पानी चमड़े की बोतल की अपेक्षा अच्छा ठण्डा होता है। इस बात का पता विदेशियों को इस उष्ण देश में आने पर लगा होगा और इन्होंने चमड़े की बोतलों के स्थान पर इन्हें अपनाया होगा। इनमें सुराही (ध) सिलेटी रंग की है। इस काल के बरतनों पर अभारतीय आकारों की छाप विशेष है।

तीसरे काल के स्तरों से जो बरतन प्राप्त हुए हैं वे प्रायः विदेशी लगते हैं। थालियों की बार का ढंग बदल जाता है (फलक ३५ क), लोटों की बार का दूसरा ही आकार मिलता है (ख, द)। कटोरे फैले मुख के बनने लगते हैं और उनकी बार भी बाहर की ओर मुड़ी हुई दिखाई देती है (त, थ)। थालियों की पेंदी गोलाई लिये हुए चिपटी है। मिट्टी इनकी पक कर हलके लाल रंग की हो गई है। भीतर से इनमें लाल रंग का लेप चढ़ा हुआ है। लोटे की मिट्टी पककर मटमैले रंग की हो गई है। ग्रीवा खड़ी है तथा इस पर भी लाल रंग का लेप है। हँडिया का भी आकार बदल जाता है (घ)। इस पर लाल रंग का लेप है। छोटे बरतनों (ङ) के आकार भी विदेशी से लगते हैं। एक बरतन रखने की चौकी भी प्राप्त हुई है (च), जिससे ऐसा अनुमान होता है कि पानी के बरतन चौकी पर

---

[1] ए० घोष—उपर्युक्त फिगर १७।४४।

[2] इस स्तर को श्री घोष ने फेज १ कहा है।

[3] डा० वासुदेव शरण अग्रवाल—पाणिनि कालीन भारतवर्ष पृ० १४९–१५८।

भी रखे जाते थे। लम्बे लोटे की बार भी दूसरे प्रकार की बनने लगती हैं (ग)[1]। इस काल के चित्रित बरतनों के कई नमूनों में चिड़िया का आकार (ज, ञ) है। एक टुकड़े (ञ) को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि उस काल में लोग पक्षी पालने लगे थे तथा उनके बैठने के हेतु लकड़ी के अड्डे भी बनाते थे जैसा पात्र के चित्र पर दिखाई देता है। ये अड्डे प्रायः बार के ऊपर रहते थे जैसा इस टुकड़े में नीचे की जाली को देखकर अनुमान होता है। एक दूसरे टुकड़े (ध) को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि लोग अपने घरों में बन्दनवार भी बाँधते थे। ठप्पे से छपा करके भी बरतनों पर काम बनाया जाता था जिसके नमूने यहाँ उद्धृत हैं (छ झ)। एक पर उभारदार कमल का फूल भी अंकित है[2] तथा एक पर एक वृत्त, उसके ऊपर ईंट का आकार और उस पर तीर बने हैं (घ)। एक अन्य टुकड़े पर एक गरुड़ पक्षी अंकित है।[3]

चौथे काल के बरतनों के आकार में कुछ गोलाई और सुंदरता बढ़ जाती है। पहिले काल के लम्बे गगरे (ञ) की अपेक्षा इस काल के गगरे की ग्रीवा घड़े की भाँति भीतर की ओर धँसी बनने लगी है। इस पर कोई लेप नहीं है (ट)। कटोरे लाल रंग के लेप से आच्छादित घण्टी के आकार के हो जाते हैं (ड)। पुरवों का आकार भी दूसरा दिखाई देता है (ढ)। सुरा का ग्लास के ऊपर का भाग भी गोलाई लिये हुए बनता है (प)। इसी प्रकार थाली के आकारों में भी परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है (फ, ब)। छोटे लोटे का शरीर लम्बा ही है, परन्तु पेंदी चिपटी है। सभी काल में मिलने वाले बरतनों में इस काल से भी दीपक (ण) तथा धूपदान (भ) भी प्राप्त हुए हैं। इस काल के ठप्पे से छपे हुए बरतनों में एक टुकड़े पर स्वस्तिक का चिह्न बना है (न) तथा एक बड़े कठौते की भाँति के बरतन के भीतर की ओर दो पंक्तियों में चन्द्रमा का आकार बना हुआ है (म)। चित्रित बरतनों में एक के ऊपर पताकाओं के आकार बने हैं[4], एक पर जाली इत्यादि बनी हैं।[5]

पाँचवें काल के बरतनों में गोल कुण्डे[6], लोटे (ब), छिछले कटोरे

---

[1] इस प्रकार के लोटे आज भी रहट में पंजाब के पश्चिमी भाग में काम लाये जाते हैं।

[2] ए० घोष—टक्सिला (सिरकप) एनशण्ट इण्डिया नं० ४-१७।४६।

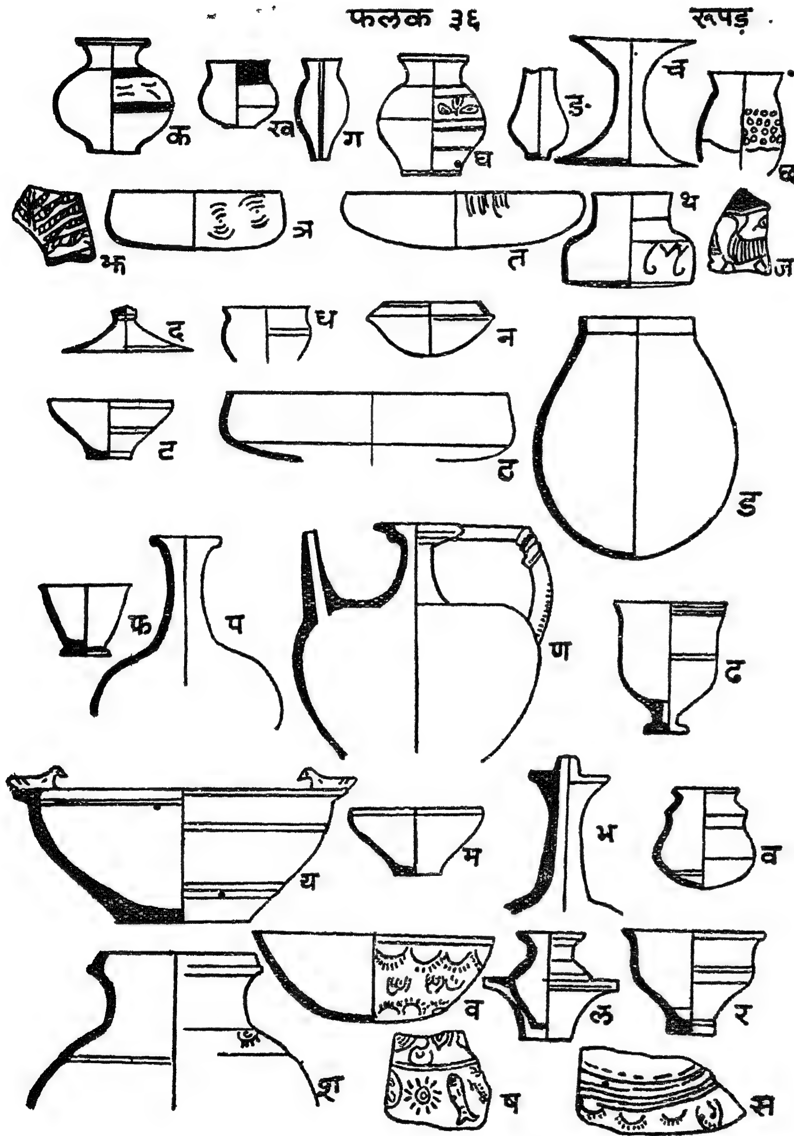
[3] ए० घोष—उपर्युक्त—१७।४३।

[4] ए० घोष—टक्सिला (सिरकप) १९४४-४५ एनशण्ट इण्डिया नं० ४ फिगर १५।३१।

[5] ए० घोष—उपर्युक्त फिगर १५।२२।

[6] ए० घोष—उपर्युक्त फिगर १०।४९।

(श, ष), गहरे कटोरे[1], बड़े कटोरे (स), धूपदान (ल), सुरा के ग्लास (क्ष), मद्य निकालने के बरतन (त्र), सभी के आकार निखरे हुए हैं। इस काल के स्तरों से भी चित्रित बरतन प्राप्त हुए हैं।[2]



पंजाब के हड़प्पा से प्राप्त बरतनों के विषय में पहिले लिखा जा चुका

[1] ए० घोष—उपर्युक्त फिगर ४।१२ डी०।

[2] ए० घोष—उपर्युक्त फिगर १५।२१।

है। अम्बाला से ६० मील की दूरी पर स्थित रूपड़ की खोदाई से जो स्तर प्राप्त हुए हैं, उनमें सबसे नीचे के काल के स्तरों से हड़प्पा के सदृश बरतन प्राप्त हुए हैं, (फलक ३६–क, ख, ग, घ, ङ, च) जिनमें वैसे ही चित्रित बरतन लोटे (क, घ), धूपदान (च) इत्यादि हैं। इन बरतनों के साथ ही और ठीक ऊपर चित्रित सिलेटी रंग के बरतन भी प्राप्त हुए हैं।[१] इनके कुछ नमूने यहाँ दिये जा रहे हैं। इनमें विशेष थाली और कटोरे ही हैं (ञ, त, थ)। ऐसा ज्ञात होता है कि प्रायः ७०० ई० पू० के लगभग इस स्थान के निवासियों ने इस स्थान को छोड़ दिया। ऐसा अनुमान होता है कि प्रायः १०० वर्ष तक यह स्थान निर्जन बना रहा; उसके पश्चात् पुनः ई० पू० ६०० में बसा। उस काल के बरतनों में एक प्रकार का मोटा सिलेटी रंग का बरतन, उत्तरी काली चमक वाले बरतन (द, ध) तथा सादे लाल रंग के बरतन मिले हैं (ट, ड)। इसके पश्चात् के काल के स्तरों से शुंग भारतीय यूनानी काल के, कुशाण तथा गुप्तकाल के मिट्टी के पात्र प्राप्त हुए हैं। यूनानीकाल के बरतनों में मद्यपात्र (ढ), गडुआ (ण), सुराही (प), ग्लास (फ), गुलाबपाश (भ) इत्यादि हैं। कुशाणकाल के बरतनों में मसाला रखने के पात्र (ब), कसोरा (म), कटोरा (र), लिखने वाला वोरका (ल), गोल पेंदी का प्याला (व), गगरा (श) इत्यादि मुख्य हैं। इस काल के ठप्पे से छपे बरतनों में नन्दीपाद, त्रिरत्न, मत्स्य (ष), पत्ती, कमल, चक्र (ष) इत्यादि हैं। एक टुकड़े पर एक आदमी भी खड़ा दिखाई देता है[२] जो अपने दोनों हाथ कमर पर अभारतीयों की भाँति रखे हुए है।

गुप्तकाल के बरतनों में चाँदी के पात्र भी मिले हैं, जिनसे ऐसा अनुमान होता है कि उस काल में प्रायः धातु के बरतन बनने लगे थे, इसमें एक प्याला तो बहुत सुन्दर है।[३]

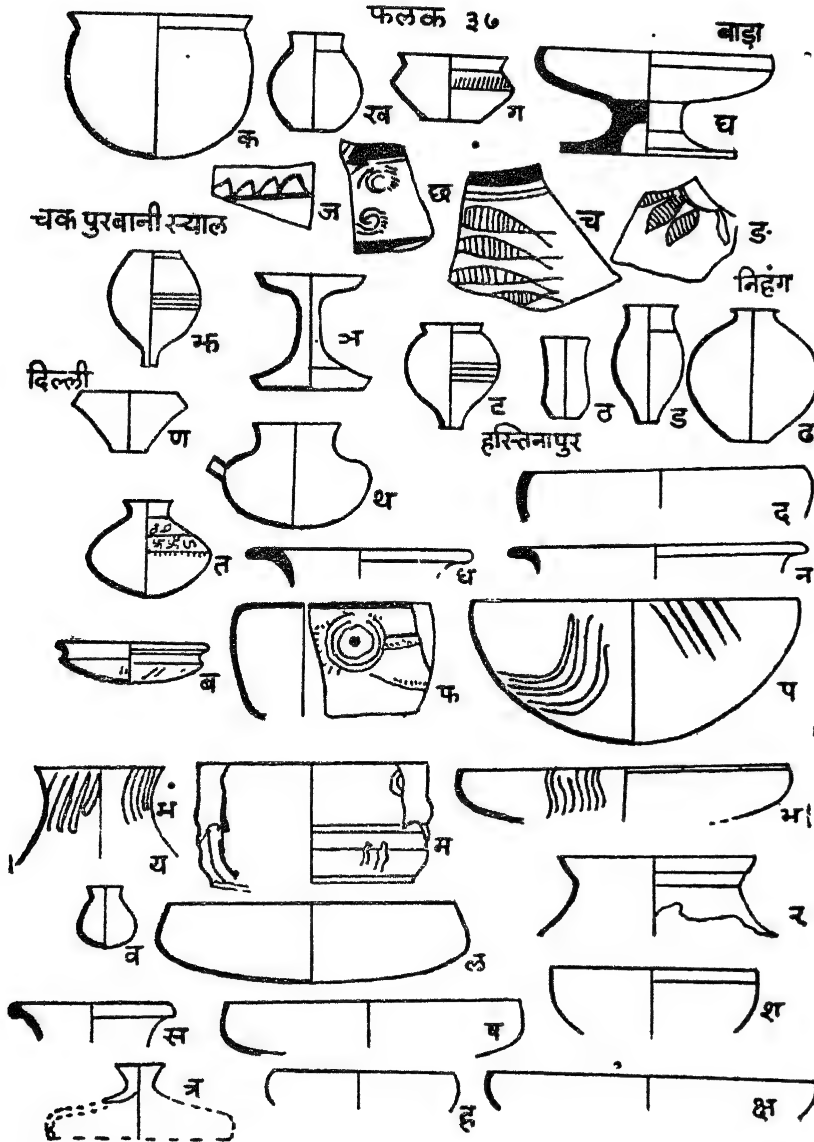
रूपड़ से ५ मील दक्षिण की ओर वाड़ा और सलौड़ा के ढूहों की खोदाई के फलस्वरूप जो बरतन प्राप्त हुए हैं, उनसे ऐसा ज्ञात होता है कि वाड़ा में तो हड़प्पा की सभ्यता वाले पिछले काल में कुछ दिन तक रहे, परन्तु सलौड़ा में जो वाड़ा से ३०० गज की दूरी पर है, उन लोगों की बस्ती थी जो सिलेटी रंग के चित्रित बरतन व्यवहार में लाते थे। ये हड़प्पा वाले जो बरतन व्यवहार में लाते थे, उनके देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि

[१] बी० बी० लाल—प्रोटोहिस्टारिक एक्सकवेशन एनशण्ट इण्डिया नं० ९, पृ० ९६।

[२] वाई० डी० शर्मा—एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टोरिकल साइट्स—एनशण्ट इण्डिया नं० ९, फिगर ७।७।

[३] वाई० डी० शर्मा—एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टोरिकल साईट्स—फिगर ४, काल ४।१३।

वाड़ा रूपड़ के कुछ काल पश्चात् तक इनका निवास स्थान रहा। सिन्धु सभ्यता के लम्बे लोटे यहाँ नीचे के स्तरों में मिले हैं। उसके ऊपर के स्तरों से जो बरतन प्राप्त हुए हैं, उनकी चित्रकारी और आकार बीकानेर के



बरतनों एवं हड़प्पाकाल के बरतनों से बहुत मिलते हैं (फलक ३७—क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज)। सलौड़ा से जो स्तर प्राप्त हुए हैं, उनमें नीचे के

स्तर से सिलेटी बरतन प्राप्त हुए हैं। उसके ऊपर के स्तरों से भारतीय यूनानी लोगों के बरतन तथा कुशाणकालीन बरतन प्राप्त हुए हैं।

चक पूरबानी स्याल हड़प्पा से १३ मील पश्चिम में है। यहाँ से वत्स को हड़प्पा की भाँति के बरतन प्राप्त हुए हैं।[१] सिन्धु घाटी के चित्रित लोटे (झ), धूपदान (ञ), ढक्कन लम्बे कुण्डे इत्यादि यहाँ से प्राप्त हुए हैं। ये प्रायः हड़प्पा की भाँति हैं।

कोटला निहंग खाँ रूपड़ से प्रायः १ मील पूर्व है। यहाँ से वत्स को हड़प्पा की भाँति के लोटे (ट), खड़े ग्लास (ठ), लोटे (ड), गोल गगरे (ढ) इत्यादि मिले हैं।[२] इससे ऐसा ज्ञात होता है कि हड़प्पा के लोग हड़प्पा से इधर बढ़े। हाल में हुई रूपड़ की खोदाई से भी यही सिद्ध हुआ है। यहाँ से अभी सिलेटी रंग के चित्रित बरतन भी प्राप्त हुए हैं।[3] दिल्ली के किले से प्राप्त बरतनों में सबसे प्राचीन स्तरों में चित्रित सिलेटी रंग की थाली और कटोरे प्राप्त हुए हैं[४] जो प्रायः ईसा पूर्व १००० वर्ष के समझे जाते हैं।[५] इसके ऊपर के स्तरों से उत्तरी काली चमक वाले बरतन मिले हैं। कुशाण-युग के बरतनों में कसोरे (ण), गडुए (थ) तथा गगरे हैं। गुप्तकाल के बरतनों में गगरे (त) हैं।

हस्तिनापुर से मिले हुए स्तरों में सबसे प्राचीन एक प्रकार के हलके लाल रंग के बरतन मिले हैं। ये बरतन भली भाँति पके हुए नहीं हैं तथा इन पर एक प्रकार का गेरू का रंग लगा हुआ है। इस प्रकार के बरतन राजपुर परसू (जिला बिजनौर) और बसौली (जिला बदायूं) से भी प्राप्त हुए हैं। ये प्रायः घड़े, लोटे और गहरे कटोरे के अवशेष प्रतीत होते हैं (फलक ३७, द, ध, न)।

इसके ऊपर के काल के स्तरों से चित्रित सिलेटी रंग के बरतन प्राप्त हुए हैं।[१] इन बरतनों की मिट्टी बढ़िया साफ की हुई है और ये चाक पर बड़ी सावधानी से गढ़े गये हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि ये बन्द मिट्टी में पकाये गए हैं, क्योंकि इनको ठोकने से धातु के बरतनों की भाँति ध्वनि

---

[१] ए० घोष—इण्डियन आर्केओलाजी—१९५४–५५ पृ० ११।

[२] वत्स—एक्सकवेशन्श एट हड़प्पा—ख० १, पृ० ४७५—प्लेट ७४।१–२०।

[3] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिनापुर—एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११, पृ० १४०।

[४] ए० घोष—इण्डियन आर्केओलाजी १९५४–५५–पृ० १३–१४।

[५] इनका विवरण आगे हस्तिनापुर से प्राप्त बरतनों के साथ।

[१] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिनापुर, एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११, पृ० ३२।

निकलती है। इन बरतनों के सभी भाग पके हुए हैं। सिलेटी रंग के बरतनों पर रेखाएँ तथा बिन्दु चित्रित हैं। प्रायः ये काले रंग से बनाये गये हैं। किसी-किसी बरतन पर लाल रंग से भी चित्रण किया गया है। बार के नीचे खड़ी तथा टेढ़ी रेखाएँ ही विशेष रूप से बनायी गयी हैं। यह चित्रण बरतन पकाने के पूर्व किसी धातु के रंग से किया गया है। इस प्रकार के बरतनों में थालियाँ (फलक ३१ भ), कटोरे (प, फ), लोटे (य), अथरी (ब) इत्यादि प्राप्त हुए हैं। इनके आकार आदिम काल के पत्थरों के बरतनों से बहुत मिलते हैं, फिर भी यह मानना पड़ता है कि इन्हें सुघर कुम्हारों ने बनाया है। इन बरतनों के साथ जो और मोटे बरतन प्राप्त हुए हैं, वे तीन प्रकार के हैं। एक तो लाल हैं, दूसरे चमकीले काले रंग के तथा तीसरे साधारण सिलेटी रंग के हैं। ये सभी चाक पर बने हुए हैं। लाल रंग के बरतनों की मिट्टी में प्रायः अबरक तथा भूसी मिली हुई है। प्रायः इन पर कोई लेप नहीं लगाया गया है। एकाध बरतन पर काले रंग से चित्रकारी भी की गई है (र) परन्तु यह बहुत साधारण है। इस प्रकार के बरतनों में गगरे और लोटे ही मुख्य हैं। कुछ लाल बरतन ऐसे भी प्राप्त हुए हैं, जिन पर लेप हैं। ये चिकने हैं और भली भाँति पकाये हुए ज्ञात होते हैं (ल, व)।

काले बरतन जो इन्हीं के साथ प्राप्त हुए हैं, वे उत्तरी काली चमकवाले बरतनों से भिन्न हैं।[1] ऐसा ज्ञात होता है कि पकाने के पहिले ये चमकाये गये हैं, परन्तु न तो इनपर उस प्रकार की चमक है न वह बात है (श, ष)। ये पानी भी सोखते हैं। सिलेटी रंग के बरतनों के साथ मिलने से ऐसा अनुमान होता है कि कुम्हार उस समय उत्तरी काली चमक वाले बरतनों को बनाने का प्रयत्न कर रहे थे, परन्तु सफलता नहीं मिली थी। इनमें कुछ ऊपर से लाल और अन्दर से काले-काले भी बन गये थे, जो कदाचित् भीतर फूस भरकर खुली मिट्टी में पकाने के कारण हो गये हों। इसी प्रकार के चित्रित बरतन सिलेटी रंग के बरतनों के साथ बीकानेर के ढूहों से भी प्राप्त हुए हैं।[2]

सिलेटी रंग के बरतन प्रायः वैसे ही बने हैं (स) जैसे चित्रित, परन्तु इन पर चित्रण नहीं किया गया है। यहाँ से प्राप्त काली चमक वाले बरतन जो धातु के बने बरतनों के सदृश बनाए गये थे, जिनको ठोकने से धातु के बरतनों की भाँति ध्वनि भी निकलती है, कई रंग के प्राप्त हुए हैं। इनमें कुछ तो शुद्ध काजल के रंग के काले हैं, कुछ लोहे के रंग के हैं, कुछ सिलेटी रंग के हैं, कुछ पर भूरे लाल रंग के चकत्ते हैं, कुछ गहरे लाल रंग

[1] बी० बी० लाल—उपर्युक्त—पृ० ४४।

[2] बी० बी० लाल—उपर्युक्त पृ० ५४ फ़ुटनोट (१)।

के हैं और कुछ कत्थई रंग के भी दिखाई देते हैं। कुछ बरतनों पर सोने की और कुछ पर चाँदी की झलक है। इनकी मिट्टी खूब साफ की हुई है और भलीभाँति माँड़ी गई है। प्रायः बरतनों की कोर सिलेटी रंग की है। कुछ की लाली लिये हुए भी है। यह उन्हीं बरतनों की है, जिनके काले रंग के नीचे एक प्रकार का लाल रंग दिखाई देता है। ऐसा ज्ञात होता है कि चाक पर उतारने के पश्चात् इन बरतनों को खूब रगड़ा जाता था, जिससे इनका पानी सोखना बन्द हो जाता था तथा इन पर लेप चढ़ाया जाता था। यह लेप आंच में डालने पर फैल जाता था। श्री वी० वी० लाल का अनुमान है कि यह चमक मिट्टी के घोल में मिट्टी के कणों को अति सूक्ष्म कर देने के कारण आती थी। आपका यह भी अनुमान है कि कुछ चमक मिट्टी में बरतन पर धूएँ के जम जाने के कारण आती थी,[1] परन्तु इस प्रकार कई प्रयोग करने पर भी उत्तरी काली चमक वाले बरतन नहीं बन पाये। यदि बरतन बन्द मिट्टी में पकाये जायं अथवा किसी दूसरे बड़े बरतन में उसका मुँह बन्द करके इन्हें मिट्टी में रखा जाय तो ये काले हो जाते हैं। परन्तु इन पर उस प्रकार की चमक नहीं उत्पन्न होती, जो उत्तरी काली चमक वाले बरतनों पर है। इन पर का लेप भी बरतन पर गोहरे या लकड़ी की आंच में फैल कर ढक नहीं लेता। कुछ बरतन जिन पर भीतर से लाल रंग है और ऊपर से काला उनको देखने से और बरतनों पर से कहीं-कहीं से पप्पड़ उखड़ने से ऐसा ज्ञात होता है कि ये बरतन दो बार आंच में दिये जाते थे जैसे यूनानी बरतन दिये जाते थे[2] परन्तु ये यूनानी बरतनों की भाँति नहीं बनते थे, क्योंकि यूनानी बरतनों में उतनी चमक नहीं जितनी भारतीय बरतनों में है। उन पर सोने चाँदी की झलक भी नहीं है। वे प्रायः आजकल के निजामाबाद के बरतनों के सदृश ही दिखाई देते हैं और थोड़ा पानी भी सोखते हैं। इस कारण उत्तर भारतीय काली चमक वाले बरतनों के बनाने की पद्धति पर और खोज करने की आवश्यकता है।

इस प्रकार के बरतनों में प्रायः भीतर की ओर मुड़ी हुई बार की थालियाँ (फलक ३७ क्ष), सीधे गोलाई लिए हुए (छ) या गड़ारीदार शरीर के कटोरे, चिपटे ढक्कन (त्र) तथा कन्धे निकली हुई बिना बार[3] की हँडियाँ प्राप्त हुई हैं।

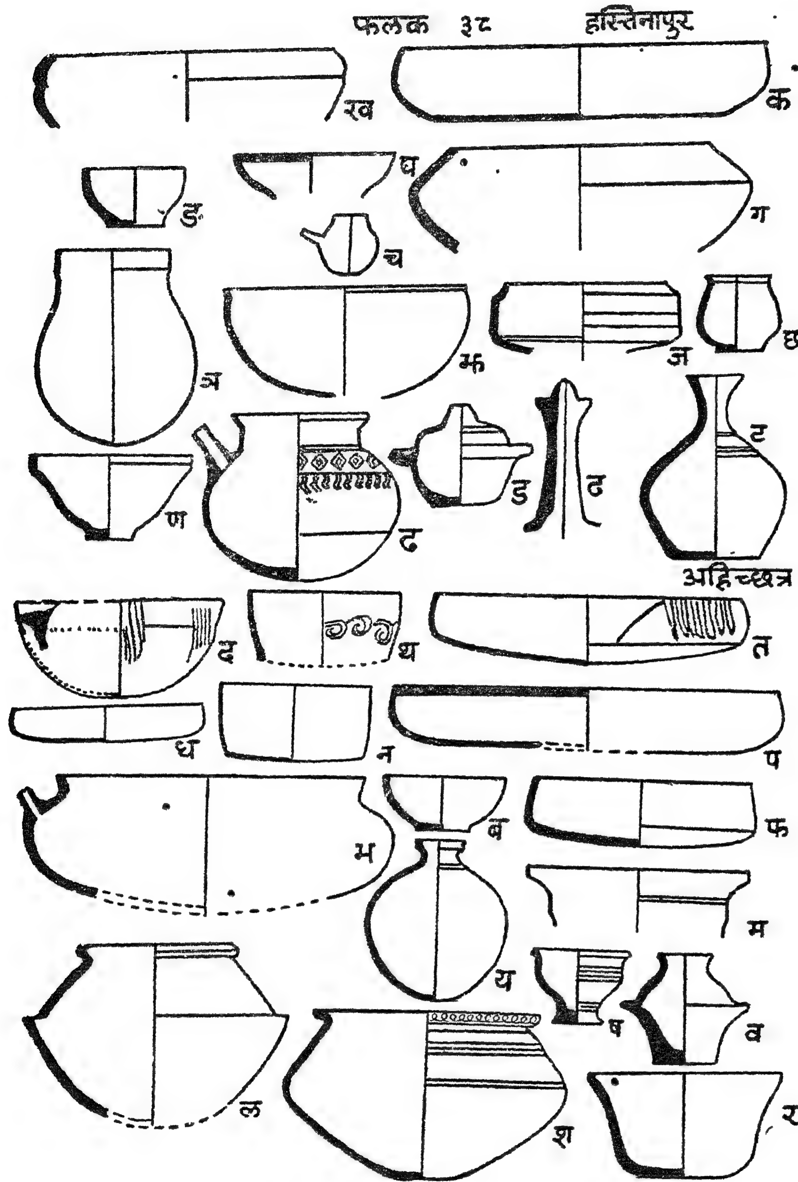
---

[1] बी० बी० लाल—उपर्युक्त पृ० ५१।

[2] जी० एम० ए० रिशटर—जनरल ब्रिटिश स्कूल ऐट एथेन्स ख० ४६ (१९५१) पृ० १४३–५०।

[3] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन ऐट हस्तिनापुर इत्यादि-एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ फिगर १४।१०।

इनके साथ एक प्रकार के सिलेटी रंग के मोटे बरतन तथा लाल बरतन प्राप्त हुए हैं। इस सिलेटी रंग के बरतन में तथा पूर्व के स्तर से प्राप्त सिलेटी रंग के बरतनों में कोई सादृश्य नहीं है। यह मोटा है तथा इसकी मिट्टी



उतनी साफ की हुई नहीं है और यह उतनी कड़ी आँच में पकाया भी नहीं गया है, जितना पहिले काल का बरतन। इसका रंग भी पहिले की अपेक्षा

कलछौंहँ लिये हुए हैं। किसी किसी पर कुछ चित्रकारी करने का भी प्रयत्न किया गया है, परन्तु फिर भी ये पहिले वाले बरतनों से नितान्त भिन्न हैं। इस प्रकार के बरतनों में थाली (फलक ३८ क), बड़े कटोरे (ख), बिना बार की हाँडी (ञ), छोटे कटोरे (घ, ङ) प्राप्त हुए हैं।

लाल बरतनों पर प्रायः कोई लेप नहीं है। मिट्टी में अबरक पर्याप्त मात्रा में है, तथा ये भलीभाँति पकाये गए हैं। ये पानी सोखते हैं। इस प्रकार के बरतनों में घट[1] लोटे (ञ), गहरे कटोरे (झ), खड़े डब्बे (ज), नाँद, कुण्डे, हँडिया,[2] छोटे मसाला रखने के पात्र (छ) तथा टोंटीदार गड़वे (च) इत्यादि मिले हैं।

इसके पीछे के स्तरों से कुषाणकालीन बरतनों की शृंखला प्राप्त होती है, जिनमें सुराही (ट), गुलाब पाश (ठ), मसीपात्र के ढक्कन (ड), घड़े, गड़वे, (ढ), गगरे, हँडिया, बोतलें, कसोरे (ण), कटोरियाँ इत्यादि हैं।

यहाँ के कुषाण के ऊपर के स्तर गुप्त कालीन ज्ञात होते हैं, क्योंकि ऊपर के स्तरों से प्राप्त घड़े[3] इत्यादि कुषाण कालीन बरतनों के समान नहीं हैं।

अहिच्छत्र बरेली जिले की आँओला तहसील में है। यहाँ से प्राप्त बरतनों की शृंखला में सबसे प्राचीन सिलेटी रंग के बरतन हैं। ये कहीं-कहीं तो उत्तरी काली चमक वाले बरतनों के साथ प्राप्त हुए हैं और कहीं-कहीं उसके नीचे के स्तरों में[4]। ये बरतन भी हस्तिनापुर के बरतनों के भाँति अच्छी तरह छानी हुई मिट्टी से बनाये गये हैं और दोनों ओर इस पर चमकदार लेप है। भलीभाँति पकाये जाने के कारण ठोस बने हुए हैं। यहाँ के सिलेटी रंग के बरतनों के कुछ भाग पीली लाल झलक देते हैं और कुछ भाग काली लाल झलक, कुछ में लाल चकत्ते भी दिखाई देते हैं। इन पर चित्रकारी पीले लाल रंग से और काले रंग से की गई हैं। चित्रकारी का विषय प्रायः खड़ी रेखायें हैं (त)। किसी-किसी पर गोल रेखाएँ भी बनी हैं (फलक ३९ थ)। इस प्रकार के बरतनों में अहिच्छत्र से प्रायः कटोरी (थ), गोल कटोरे (द) और थालियाँ ही प्राप्त हुई हैं। इन्हीं स्तरों से अचित्रित सिलेटी रंग के भी बरतन प्राप्त हुए हैं। इनमें भी कटोरे (न) और थालियाँ (ध) हैं। इन पर भी दोनों ओर चमकदार लेप है तथा हरी झलक है।[5] इसके पीछे के स्तरों से उत्तरी काली चमक वाले बरतनों में थाली (प)

[1] बी० बी० लाल—उपर्युक्त-फिगर १९।४०।

[2] बी० बी० लाल—उपर्युक्त फिगर १९।४९।

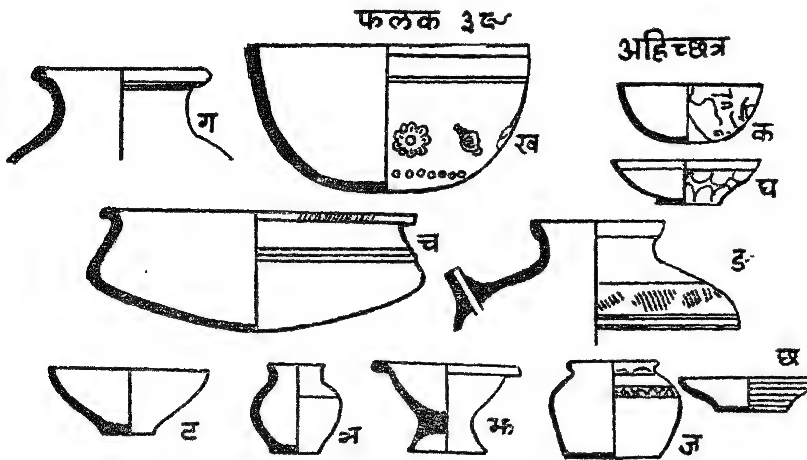
[3] बी० बी० लाल—उपर्युक्त फिगर २३।९।

[4] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—दी पाटरी आफ अहिच्छत्र-एनशण्ट इण्डिया पृ० ५९।

[5] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—उपर्युक्त पृष्ठ ४३।

तथा एक बरतन की पेंदी[1] उल्लेखनीय है। इन बरतनों के साथ मोटे सिलेटी रंग के और लाल रंग के बरतन हस्तिनापुर की भाँति प्राप्त हुए हैं। सिलेटी रंग के बरतनों में थाली (फ) तथा कटोरे (ब) मुख्य हैं। लाल रंग के बरतनों में लम्बे लोटे, हस्तिनापुर से प्राप्त (अ) की भाँति के, बिना बार की कन्धा निकली हुई हँडिया[2] वहीं के (ग) सदृश प्राप्त हुई हैं। एक टोंटीदार गडुवा भी प्राप्त हुआ है (भ)। यह भी आँच पर चढ़ाया हुआ प्रतीत होता है, क्योंकि नीचे का भाग जल गया है।

यहाँ के ऊपर के स्तरों को भारतीय यूनानी काल की संज्ञा दी जा सकती है। इस काल में अहिच्छत्र में सिलेटी रंग के मोटे बरतन बनते रहे, परन्तु अब ये अधिक सफेदी लिये हुए हैं तथा उनपर चमकदार लेप का भी अभाव



है। सबसे नीचे के स्तरों के बरतनों के आकार पहिले काल के बरतनों के आकार से मिलते हुए हैं। केवल एक लोटे के मुँह के आकार में विशेषता पायी जाती है, (म) तथा बरतन रखने की चौकी भी मिलने लगती है।[3] इसी काल के स्तरों के जो बरतन हैं, उनमें हाथ लगी हुई कढाइयाँ मिली हैं, जिनकी पेंदी में जलने के चिह्न अभी तक उपस्थित हैं। गोल शरीर वाले लोटे (य), मसीपात्र के ऊपर के ढक्कन (र), ग्रीवा वाले घड़े इत्यादि इस काल के स्तरों से प्राप्त हुए हैं।

इसके ऊपर के काल के स्तरों से कुषाण कालीन बरतन मिले हैं। इस काल के बरतनों की बार सादी है, उस पर कोई काम नहीं बना हुआ

[1] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—उपर्युक्त फिगर १०।४

[2] इसकी पेंदी जली हुई है, इससे यह पता लगता है कि यह भोजन पकाने के हेतु आँच पर चढ़ाई गयी थी।

[3] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—उपर्युक्त फिगर ११।१९।

है। कसोरों की पेंदी चिपटी है, जैसे हस्तिनापुर के कसोरों की है (ण)। कन्धेदार हँडियाँ हैं (ल)। मोटे लम्बे लोटे भी वैसे ही हैं, जैसे इस काल के और स्थानों से प्राप्त हुए हैं।[1] सुराही का आकार[2] तो बिल्कुल हस्तिनापुर से मिलता है (ट)। यहाँ से एक पूरा मसीपात्र ढक्कन सहित मिला है (ढ) जिसमें ढक्कन रखने का भी सुभीता है।[3] ठप्पों से अलंकृत घट भी बड़ी संख्या में यहाँ से प्राप्त हुए हैं[4] जिन पर नन्दीपाद, स्वस्तिक, त्रिशूल, दो मत्स्य इत्यादि बने हुए हैं। इस प्रकार के चिह्न प्रायः इस काल के बरतनों से जो और स्थानों से मिले हैं, वहाँ भी पाये गये हैं।

गुप्तकाल के स्तरों से जो बरतन प्राप्त हुए हैं, उनमें कुछ के बार पर काम बना हुआ है (हंडिया फलक ३२ श), परन्तु मध्ययुग के बरतनों की अपेक्षा यह काम हलका है। प्यालों में पाये भी हैं (ष), बड़े कटोरों के मुँह फैले हुए हैं। यहाँ से प्राप्त इस काल के बरतन प्रायः साँचे के बने हुए हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि इस काल तक बरतन भी मृण्मूर्तियों की भाँति साँचे से बनने लग गए थे। कुछ अच्छे बरतन दो अथवा तीन भागों में विभक्त हैं। इन भागों को गड़ारी द्वारा अलग-अलग किया गया है। एक भाग में लाल चिकना लेप है और दूसरे भाग में काम बनाया गया है, जैसे मोती के दाने या मछली के ऊपर की दिउली इत्यादि। इस काम पर अबरक लगाकर इनमें चमक उत्पन्न की गई है। किसी-किसी बरतन में अलग से भी एक भाग कटहल के आकार पर अबरक लगा हुआ भी प्राप्त हुआ है।[5] कुछ बरतनों पर चिकना सिन्दुरिया रंग का लेप भी है। इस काल के पिछले स्तरों से कुछ चित्रित बरतन भी प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार के बरतन प्रायः लाल हैं और उन पर काले रंग से एक चौड़ा फीता अंकित किया गया है! एक बरतन पर भेड़िये का दाँत भी बनाने का प्रयत्न किया गया है।[6]

मध्ययुग (ई० ७५० से ११००) के बरतनों पर चिकना लाल लेप है। प्रायः ये साँचे में ढले हैं और इन पर विविध भाँति के उभाड़दार काम हैं। इस काल के चिह्न पहिले काल के चिह्नों से अधिक उलझे हुए हैं[7]।

---

[1] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—उपर्युक्त फिगर ३।३७।

[2] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—उपर्युक्त फिगर ३।४३।

[3] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—उपर्युक्त फिगर।४४३।

[4] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—पृ० ४६।

[5] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—पृ० ४९।

[6] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—फिगर ८।१८।

[7] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—फिगर ६।७६।

चिह्नांकित जन्तुओं के आकार उनके वास्तविक रूपों के समान हैं। टोंटीदार बरतनों में दो मुँह की टोंटी भी है (फलक ३३ ङ)। हंडिया (च) की बार बाहर निकली हुई है, जिसमें उठाने में सुभीता हो। बार पर मोटी रस्सी के आकार को दिखाने का प्रयत्न किया गया है। कटोरे भी दो प्रकार के हैं, परन्तु दोनों में पाये बने हैं। एक में हाथी की पंक्तियाँ बनाई गई हैं (क) और दूसरे में नीचे की ओर दिउली बनाई गई है। गहरे कटोरों पर कमल और शंख के आकार बने हैं (ज, भ)। कसोरों के मुँह फैले हुए हैं और इनकी पेंदी छोटी है (ट)। यहाँ से इस काल के स्तरों से धूपदान (झ) भी प्राप्त हुए हैं।

मथुरा में कटरा के टूहे के सबसे नीचे के स्तरों से भी चित्रित सिलेटी रंग के बरतन प्राप्त हुए हैं[1]; परन्तु हाल की खोदाई के फलस्वरूप सबसे नीचे के स्तरों से हस्तिनापुर की भाँति सादे सिलेटी रंग के बरतन तथा काले चमकीले बरतन तो मिले परन्तु चित्रित सिलेटी रंग के नहीं[2]। इनके आकार प्रकार हस्तिनापुर से ही मिलते हुए हैं। इन स्तरों के ऊपर से उत्तरी काली चमकवाले बरतन प्राप्त हुए हैं। फिर ऐसा ज्ञात होता है कि कुछ काल तक इस स्थान पर बस्ती नहीं रही। कुषाण काल की बस्ती के अवशेष जो प्राप्त हुए हैं, उनमें उसी प्रकार के मिट्टी के बरतन मिले हैं, जैसे हस्तिनापुर से प्राप्त हुए हैं। इसके पश्चात् के स्तर गुप्तकाल के हैं, जिनसे सिन्दुरिया रंग के लाल बरतन जैसे कटोरे इत्यादि मिले हैं। गगरे प्रायः दबी ग्रीवा के हैं और उनके बार पर हलका काम है। कन्नौज जिला फर्रुखाबाद की खोदाई के फल-स्वरूप भी सबसे नीचे के स्तरों से चित्रित सिलेटी रंग के तथा लाल और काले लेप के बरतन प्राप्त हुए हैं।[3] ये बरतन प्रायः उसी प्रकार के हैं, जैसे हस्तिनापुर से मिले हैं। दूसरे काल के स्तरों से उत्तरी काली चमक वाली थाली और कटोरे मिले हैं। तीसरे काल के बरतन कुषाण काल के हैं। इन पर भी वैसे ही ठप्पे लगे हुए हैं, जैसे अहिच्छत्र के बरतनों पर। यहाँ से प्राप्त गुप्तकाल के बरतनों का विवरण प्राप्त नहीं होता है।

पंजाब के सोनपत, बागपत, तिलपत, पानीपत, इन्द्रपत इत्यादि उत्तरी उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बीकानेर के कई स्थानों से चित्रित सिलेटी रंग के उसी प्रकार के बरतनों के मिलने से[4] जैसे हस्तिनापुर से मिले हैं, अब यह निश्चित-सा हो गया है कि एक काल ऐसा था जब इस प्रकार के बरतन

---

[1] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिनापुर इत्यादि पृष्ठ १५० मथुरा।

[2] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५४–५५ पृ० १४।

[3] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५५-५६ पृ० १९।

[4] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिनापुर इत्यादि पृ० १३८–१४३।

व्यवहार में आते थे। प्रायः इनका काल उत्तरी काली चमक वाले बरतनों के पहिले होना चाहिये, क्योंकि ये उनसे पहले के स्तरों से मिले हैं।[1] इस कारण इनका काल प्रायः ईसा पूर्व ६०० से ७०० तक अनुमान किया जाता है। ये बरतन प्रायः हड़प्पाकाल के स्तरों के पश्चात् मिले हैं। इधर उत्तरी काली चमक वाले बरतन भी कई स्थानों से प्राप्त हुए हैं।[2] परन्तु उत्तरी क्षेत्र में ये प्रायः सिलेटी रंग के बरतनों के पीछे के काल के स्तरों से प्राप्त हुए हैं, जैसा हम देख चुके हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उत्तरी भारत में सबसे नीचे के स्तरों से हड़प्पा की सभ्यता के बरतन प्राप्त हुए हैं तथा उसकेऊपर चित्रित सिलेटी रंग के बरतन प्राप्त होते हैं। इसके पश्चात् के स्तरों से उत्तरी काली चमक वाले बरतन मिले हैं। यूनानियों के भारत में बसने के पश्चात् उनके प्रभाव वाले जो मिट्टी के बरतन मिले हैं वे उत्तरी काली चमकवाले बरतनों से ऊपर के स्तरों से प्राप्त हुए हैं। कुषाणकाल के बरतन और ऊपर के स्तरों से मिले हैं। इस प्रकार एक मिलती जुलती शृंखला प्रायः उत्तरी भारत के सभी स्थानों में मिलती है। चाहे स्थान-स्थान के बरतनों के आकार में थोड़ा भेद हो।



[1] बी० बी० लाल—एवसकवेशन एट हस्तिनापुर इत्यादि पृ० १४१ तिलपट।

[2] बी० बी० लाल—उपर्युक्त पृ० १४४–१४६।

पूर्वी भारत के प्राचीन मिट्टी के बरतन

इस प्राचीन देश के किस भू-भाग को पूर्वी भारत की संज्ञा दी जाय तथा इसकी सीमा किस प्रकार निर्धारित की जाय—ये विषय निरन्तर विवाद-ग्रस्त रहे हैं और अब भी हैं। इस अध्ययन की दृष्टि से यदि हम उत्तर प्रदेश के आधुनिक प्रयाग तथा बनारस-गोरखपुर क्षेत्रों को बिहार, बंगाल तथा उड़ीसा के पूरे प्रदेशों को पूर्वी भारत मान लें तो कुछ विशेष आपत्ति न होनी चाहिये। इस भू-भाग के रहने वालों की एक सी भाषा तथा एक सा जीवन न होते हुए भी इनका व्यावहारिक सम्पर्क एक दूसरे से बहुत रहा है तथा यहाँ के बरतनों के क्रमिक विकास की श्रृंखला बहुत कुछ मिलती हुई है, इस कारण इन स्थानों का अध्ययन एक साथ ही करने में सुविधा होती है।

इस पूर्वी भारत में सबसे पूर्व कौशाम्बी की खोदाई के फलस्वरूप जो बरतन प्राप्त हुए हैं उन्हीं को ले लीजिये। यहाँ सबसे नीचे के स्तरों से एक प्रकार के सिलेटी रंग के बरतन प्राप्त हुए हैं[1] जिनमें भीतर की ओर कुछ मुड़े हुए कोर के कटोरे के दो तीन टुकड़े मिले हैं। इनके रंग में चमक है और इन पर काली धारी चित्रित है (फलक ४० क, ख)।

इसके पश्चात् के काल के स्तरों से उत्तरी काली चमक वाले बरतन प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार के बरतनों में गहरे कटोरे तथा थालियाँ ही अधिक दिखाई देती हैं। कटोरों में कई बाहर की ओर से गड़ारीदार हैं (ग, घ, च)। इस उत्तरी काली चमक वाले बरतनों में कई रंग के बरतन प्राप्त हुए हैं जैसे कटोरे 'ग' तथा 'घ' तो काले रंग के हैं[2] परन्तु कटोरा 'च' का रंग बाहर से पीला है तथा भीतर से सिलेटी रंग का[3]। इसी प्रकार कटोरा 'घ' भी बाहर से पीला

---

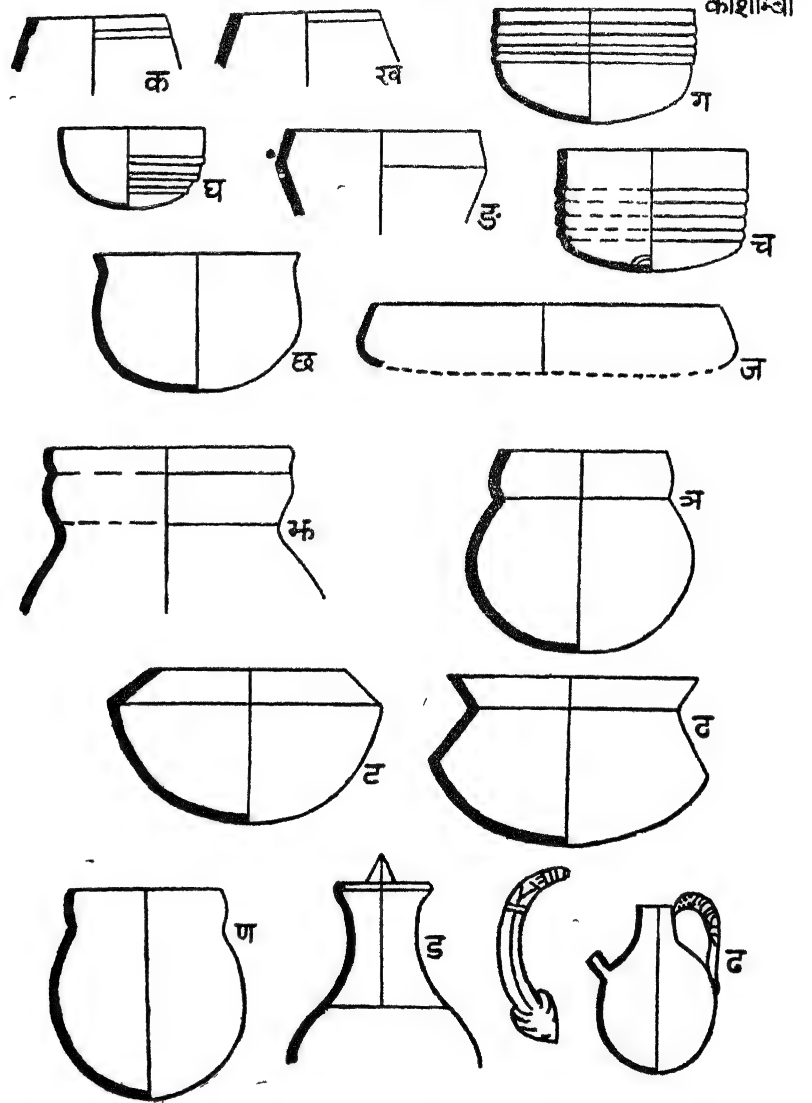
[1] श्री गोवर्धनराय शर्मा की सूचना के आधार पर जिन्होंने कृपा कर इन सभी बरतनों के आकारों को अंकित कर लेने की सुविधा दी। सिलेटी रंग के बरतन साइट के० एस ३ टेंच सी १–१८–१६ गहराई २७ फीट ३ इंच २४

[2] के० एस ३, डब्लू० ए० १, ३ × २'४" पिट सील्ड बाई ८; के० एस० ३ सी १ पिट सील्ड बाई १०

[3] के० एस ३ सी० आई पेज १६–१७ पिट ९ सील्ड बाई १०

है और भीतर से सिलेटी रंग का है[1]। थाली (ज) सिलेटी रंग की है[2]। इसी प्रकार और भी कटोरे मिले हैं जिनमें एक बाहर की ओर ईंट की भाँति

फलक ४०



लाल रंग का है तथा भीतर की ओर लाल और गहरा सिलेटी रंग का है[3]।

---

[1] के० एस० ३ डब्लू० ए० १–२'७" पिट ५ सील्ड बाई १४ वा ल० २

[2] के० एस० ३ सी० आई पेज १६–१७ पिट ४ सील्ड बाई १०

[3] के० एस० ३ पिट १६ सील्ड बाई १५

एक कटोरा बाहर-भीतर दोनों ओर नारङ्गी रंग का है[1]। यहाँ से सुनहले रुपहले चमकवाले बरतन भी मिले हैं, कुछ बरतन जैसे कटोरे (च) के बीच में एक घुंडी और उसके चारों ओर वृक्ष बने हुए हैं। इन सब बरतनों की मिट्टी सिलेटी रंग की है।

इन्हीं के साथ जो मोटे बरतन मिले हैं उनमें गगरे (झ, ञ), भीतर की ओर मुड़ी हुई कोर बिना ग्रीवा के कटोरे (ट), कन्धेदार हँड़िया (ठ) जिनमें कुछ कटोरे हाथ से पीट कर बनाये हुए भी प्रतीत होते हैं[2], प्रायः भूरे रंग के हैं। इन्हीं के साथ मोटे बने हुए सिलेटी रंग के बरतन[3] तथा काले रंग के कटोरे भी प्राप्त हुए हैं।[4]

इसके पश्चात् के काल के स्तरों से जो बरतन प्राप्त हुये हैं, वे लाल हैं। इनमें गुलाबपाश इत्यादि हैं। एक टोंटीदार हाथ लगा हुआ गडुआ भी प्राप्त हुआ है जिसके हाथ पर खोदाई करके बहुत सुन्दर काम किया हुआ है (फलक ४० ढ)।

इसी प्रकार के और भी बहुत से सुन्दर-सुन्दर बरतन इन स्तरों से प्राप्त हुये हैं; परन्तु इन बरतनों की मिट्टी उतनी बढ़िया माड़ी हुई नहीं है जैसी उत्तरी काली चमक वाले बरतनों की। बरतनों के ऊपर का खुरदरापन ढकने के हेतु मोटे लाल रंग का लेप ऊपर से चढ़ा हुआ है। ये बरतन पानी सोखते हैं। ठप्पे से छपे हुए तथा खोदे हुए बरतन इन स्तरों से विशेष रूप में प्राप्त हुए हैं।

इसके ऊपर गुप्त काल के स्तरों के बरतन प्राप्त होते हैं जैसे और पूर्वी भारत के स्थानों से प्राप्त हुए हैं। इनका विवरण पहिले दिया जा चुका है।

पूर्वी भारत के प्राचीन मिट्टी के बरतन

राजघाट में जो खोदाई काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की ओर से सन् १९५७ में हुई, इसमें भी प्रायः वे ही स्तर प्राप्त हुए जो कौशाम्बी में हुए हैं। राजघाट में पहिले भी सन् १९४० के लगभग कुछ खोदाई हुई थी और बहुत से बरतन, मृणमूर्तियाँ इत्यादि जो कृष्ण देव जी को प्राप्त हुई थीं भारत सरकार की उदारता के फलस्वरूप भारत कला-भवन, काशी विश्वविद्यालय में सुरक्षित हैं। परन्तु खोदाई अवैज्ञानिक होने के कारण इन वस्तुओं का उतना मूल्य

[1] के० एस० ३ पिट सील्ड बाई १४

[2] के० एस० एल० टी० डब्लू० टी १ ए'-५' एल सील्ड बाई ८

[3] के० एस० ३ सी १-१५-१६-(८ ए) के० एस ३ डब्लू ए' ए-१-२-पिट ५ सील्ड बाई १०

[4] के० एस० ३ डब्लू० ए० १, २-३ पिटकट १३ सील्ड बाई १२

नहीं है जितना हाल की खोदाई में मिली चीजों का। इस खोदाई से पूर्व की खोदाई से प्राप्त वस्तुओं का भी काल निर्धारण हो सकता है।

राजघाट में जो खोदाई हुई उसकी कुछ वस्तुएँ हाल में हुई आर्केआलोजिकल प्रदर्शनी (१९५७ ई०) में प्रस्तुत की गई थीं। यहाँ सबसे प्राचीन स्तर जो अभी तक प्राप्त हुआ है वह उत्तरी काली चमक वाले बरतनों का है। उसके पूर्व की सभ्यता का कोई अवशेष इस खोदाई में नहीं प्राप्त हुआ है। कुछ हड्डियाँ एक जानवर की अवश्य प्राप्त हुई हैं जो हड्डी से पत्थर का रूप धारण करने को उद्यत हैं। यह स्तर उत्तरी काली चमक वाले बरतनों से प्रायः बीस फीट और नीचे जाने पर मिला था।

भूगर्भशास्त्रियों का कहना है कि इस प्रकार हड्डियाँ प्रायः बीस हजार वर्ष में यह रूप धारण करती हैं। जो हो, इस विषय में हमें यहाँ कुछ नहीं कहना है। यों श्रीकृष्णदेव जी को खोदाई में यहाँ से कुछ सिलेटी रंग के बरतन भी प्राप्त हुए थे,[1] परन्तु हाल की खोदाई में वह स्तर नहीं प्राप्त हुआ है, न उस प्रकार के बरतन मिले हैं। यहाँ से प्राप्त उत्तरी काली चमक वाले बरतनों में काले, नीले, सिलेटी रंग के, नारंगी रंग के, एक ओर काले रंग के और दूसरी ओर सिलेटी रंग के, एक ओर लाल रंग के और दूसरी ओर सिलेटी रंग के, सोने और चाँदी की चमकवाले प्राप्त हुए हैं। पहिली खोदाई से प्राप्त एक कटोरा काले रंग का चमकदार और एक सुराही का मुँह फलक ४० पर प्रदर्शित है। यहाँ से उत्तरी काली चमक के भिक्षा-पात्र या थाली, पुरवे कटोरी इत्यादि भी प्राप्त हुए हैं। इन्हीं के साथ कुछ जानवरों की मृण्मूर्तियाँ भी काली चमक के लेप से आच्छादित प्राप्त हुई हैं। ये बरतन पतले बने हुए हैं और आवाँ में धूआँ देकर पकाये गये हैं। इन पर लेप किस चीज का है यह कहना कठिन है, क्योंकि इस लेप के कारण बरतन पानी नहीं सोखते और यह लेप खुली आँच में देने से नष्ट नहीं होता। यदि बरतन काला है तो वह केवल लाल हो जाता है[2]। इतनी अधिक संख्या में इसके टुकड़े प्राप्त हुए हैं कि यह विचार नहीं किया जा सकता कि ये बाहर से आये होंगे। सोने की चमक लेप में खली देने से आ जाती है तथा चाँदी की चमक खड़ी बेर के दाने को आवाँ में देने से आती है। दिल्ली के सरकारी अनुसन्धान से यह पता चलता है कि लेप में ४६·५५ प्रतिशत सिलिका, २५·०२ प्रतिशत फोरस आक्साइड २५·०२ प्रतिशत अलुमिना, १५·५३ प्रतिशत चूना ४·७४ प्रतिशत मैगनीशिया, ३·४३, पानी तथा ३·४ प्रतिशत अलकली है[3]।

[1] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—दी पाटरी आफ अहिच्छत्र डिस्ट्रिक्ट बरेली यू० पी० अपेंडिक्स—अनशण्ट इण्डिया नं० १—पृ० ५६।

[2] यह प्रयोग मैंने स्वयं कुम्हार के यहाँ करके देखा है।

[3] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—दी पाटरी आफ अहिच्छत्र—एनशण्ट इण्डिया नं० १ पृ० ५८

परन्तु इस प्रकार लेप बनवाकर बरतनों पर लगाये जाने पर न वह चमक उत्पन्न हुई न लेप ठीक से चारो ओर गलकर फैला। इस विषय में और अनुसन्धान की आवश्यकता है[1]। इस प्रकार की काली चमक वाले बरतन चीन में लुंगशान जोशानुटंग के प्रदेश में मिले हैं।[2] ये बरतन पतले बने हुए हैं तथा इन पर चमक भी भारतीय बरतनों की भाँति है। इनको चीन के ताम्रयुग के पूर्व का बना हुआ मानते हैं।[3] हाल में इसी प्रकार के बरतन हांगचाउ के पास-चींकियांग के प्रदेश में भी प्राप्त हुए हैं।[4] इससे ऐसा अनुमान होता है कि एक काल में चीन में इस प्रकार के बरतनों की बहुत चलन थी। क्या हमारे यहाँ इस प्रकार के बरतनों के बनाने की बिधि उधर से तो नहीं आई? क्योंकि यूनान से प्राप्त इसी प्रकार काले बरतनों से ये भिन्न हैं तथा भारत में इस प्रकार के बरतनों की चलन भी यूनानी सभ्यता के सम्पर्क से पहिले की है।[5]

इन चमकीले बरतनों के साथ राजघाट की खुदाई में दो अन्य भाँति के बरतन भी प्राप्त हुए हैं। एक तो वे हैं जिन पर किसी प्रकार का लेप नहीं है। इन लाल रंग के बरतनों में लम्बे अंडे की भाँति के कुंडे, भीतर झुकी हुई वार के कसोरे, परई इत्यादि हैं। दूसरे वे हैं जिन पर काला या सिलेटी रंग का लेप लगा है परन्तु चमक नहीं है। ये बरतन उत्तरी चमक वाले बरतनों से मोटे हैं। इस प्रकार बने बरतनों में थाली, कटोरी, पुरवे आदि मिले हैं।

ये सभी बरतन प्रायः शुंगकाल तक ही मिलते हैं। इसके पश्चात जो बरतन मिलने लगते हैं उनका रंग गहरा लाल गेरू के रंग की भाँति का है तथा उन पर ठप्पे से छपाई की हुई है। इन ठप्पों में प्रायः बौद्ध धार्मिक चिह्नों का बाहुल्य है।[6] एक बरतन पर तो पूरे सारनाथ की रेलिंग का ठप्पा है। इस प्रकार के बरतनों में घड़े, कसोरे, लोटे इत्यादि ही मिले हैं। थालियाँ नहीं मिली हैं जिससे ऐसा अनुमान होता है कि इस युग में इस क्षेत्र में धातु की थालियाँ व्यवहार में आने लगी थीं।

इसके पश्चात् के यूनान कुषाणकाल की सतहों से जो बरतन प्राप्त हुए

---

[1] ऐसा तो नहीं है, कि बरतन पकाकर उस पर पुनः कोई लेप लगाते थे जैसा चुल्ल वग्ग में भित कम्मकत या भित्त कर्म कृत से संकेत मिलता है। चुल्लवग्ग-५।९।१-२।

[2] एच० जी० क्रील—स्टडीज इन अर्ली चाइनीज़ कलचर (१९३८) पृ० १९४।

[3] नियोलिथिक युग का।

[4] जी० ई० डानियल—ए० हण्डरेड इयर्स आफ आर्केआलोजी पृ० २६९।

[5] ए० घोष, पाणिग्रही—दी पाटरी आफ अहिच्छत्र एनशण्ट इण्डिया नं० १ पृ० ५६।

[6] ए० घोष इण्डियन आर्केआलोजी—१९५७-५८ प्लेट ६९ बी०।

हैं वे मोटे तथा ऊपर से खुरदरे हैं। इन पर मोटा लाल लेप लगाकर इनको सुन्दर बनाने का प्रयत्न किया गया है। इनमें टोंटी लगे हुए गडुओं का बाहुल्य है। बहुत-सी टोटियाँ अलग से भी प्राप्त हुई हैं जो प्रायः मकर मुख, गजमुख, मनुष्य-मुख की भाँति बनी हुई हैं। एक टोटी स्त्री की मूर्ति की भाँति है जो त्रिरत्न चिह्न अपने मस्तक पर धारण किये हुए है। परई और कसोरे इस युग के खड़े बार के हैं और उन पर कोई लेप नहीं है। गगरे और कुण्डों पर छोटे-छोटे ठप्पों से विविध चिह्न अंकित हैं। इन बरतनों के आकार की अभारतीयता देखकर ऐसा अनुमान होता है कि विदेशी प्रभाव के एक तीव्र वेग की आँधी ने प्राचीन मान्यताओं को एक दम नष्ट कर दिया होगा।

गुप्तकाल के मिट्टी के बरतनों के आकारों में एक समन्वय दृष्टिगोचर होता है। राजघाट से प्राप्त इस युग के बरतन नारंगी के रंग के हैं तथा ऐसा ज्ञात होता है कि इनको रगड़कर चिकना करने का भी प्रयत्न किया गया है। इन बरतनों में लम्बी ग्रीवा की सुराही, गोल लोटे जिनकी बार बाहर की ओर निकली हुई है, कन्धे निकली हुई हंडिया, गन्दा पानी जाने की नालियाँ मुख्य हैं। इस काल के मिट्टी के बरतनों की कमी इस बात की द्योतक है कि अब पूर्वी भारत में धातु के बने बरतनों का बहुत व्यवहार होने लगा था। इस काल के बरतनों के आकारों में एक लोच है जो पहिले के युग में नहीं प्राप्त होती।

हाल में पटना नगर के कई स्थानों की खोदाई के फलस्वरूप जो बरतनों की शृङ्खला प्राप्त हुई है वह कुम्हरार की खोदाई से बिलकुल मिलती हुई है। यहाँ पाँच कालों के बरतन प्राप्त हुए हैं। प्रथम काल के बरतनों में उत्तरी काली चमक वाले बरतन हैं जिनमें भिक्षा-पात्र, कटोरे इत्यादि हैं। इनके साथ के बरतनों में लाल रंग के बड़े कुण्डे, थालियाँ और भीतर की ओर मुड़े हुए कोर के कसोरे प्राप्त हुए हैं तथा चिपटे बार की गोल पेंदी की हंडिया, सिलेटी रंग के कटोरे भी मिले हैं। यहाँ से पत्थरों के बरतन भी प्राप्त हुए हैं[1] जिनसे यह अनुमान होता है कि पूर्वी भारत में उस काल में लोग मिट्टी के बरतनों के अतिरिक्त पत्थर के बरतनों में भी भोजन करते थे। धातु के बने बरतनों की चलन कम थी। कदाचित् महँगे होने के अतिरिक्त इनमें बना भोजन इतना पवित्र नहीं समझा जाता होगा, जितना मिट्टी के पात्रों का। पत्थर के बरतनों का तो पूर्वी भारत में आज भी बहुत व्यवहार है। प्रायः लोग खट्टी चीजें तथा दही इसी में खाते हैं क्योंकि इसमें इस प्रकार की वस्तु बिगड़ती नहीं।

---

[1] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५५-५६ पृ० २२।

दूसरे काल की सतह से जो मिट्टी के बरतन प्राप्त हुए हैं उनके कुछ टुकड़े उत्तरी काली चमक वाले बरतनों के हैं और इन्हीं के साथ लाल रंग के बरतन हैं जिन पर चमक है तथा कुछ बरतन सिलेटी रंग के हैं। ये लाल रंग के बरतन अच्छे पके हुए ईंटों के रंग के हैं। दो टुकड़ों पर ठप्पे से पंच मार्क मुद्राओं के चिह्नों के सदृश चिह्न बने हुए हैं। ये बरतन यवन कुषाण कालीन बरतनों के ठीक पहिले के काल के हैं।

इसके पश्चात् की सतह से जो बरतन मिले हैं वे कुषाण कालीन हैं। इनमें सीधी बार के कसोरे, कन्धे निकली हुई हण्डियाँ, लम्बे पीने के प्याले लाल और सिलेटी रंग के हैं। छोटे छोटे खिलौनों के सदृश भी पात्र प्राप्त हुए हैं। कुछ बरतनों के आकार फलक ४१ पर दिखाये गये हैं। इन सब बरतनों में पेंदी है (क, ख, ग, घ, ङ) और इनकी रेखाओं में अभारतीय कड़ापन, तथा खिंचाव है और प्रवाह का अभाव है जैसा इस युग के अन्य स्थानों से प्राप्त बरतनों में दिखाई देता है। इन्हीं बरतनों के साथ एक सुवर्ण का यंत्र भी प्राप्त हुआ है जिसके लेख से यह पता चलता है कि वह हुविष्क के काल का है। एक ओर शाओनानों शाओ ओएशकी कोशानों हुविष्क लिखा है और उसी के नीचे हुविष्क का चित्र भी है तथा दूसरी ओर ग्रीक भाषा में आरडो-क्षोरोम नाम की देवी के साथ लिखा हुआ है[१]। इससे भी यह सिद्ध होता है कि ये बरतन उसी युग के हैं। इन्हीं बरतनों के साथ धातु की बनी कलछी और सीकचे भी मिले हैं जिनसे ऐसा ज्ञात होता है कि माँस भूनने के हेतु धातु के सीकचे व्यवहार में आते थे और कलछी भी धातु की व्यवहार में आती थी।

इसके पश्चात् के काल के बरतन (३००–६०० ई०) जो यहाँ से प्राप्त हुए हैं, उनमें कोई विशेषता नहीं है, ऐसा लिखा प्राप्त होता है। यह आश्चर्य का विषय है, क्योंकि गुप्त राज्य की प्रमुख नगरी से तो उस काल के सबसे अच्छे बरतनों के उदाहरण प्राप्त होने चाहिये। कदाचित् सीमित खोदाई के कारण ही यह कमी रह गई हो।

हाल की कुम्हरहार की खोदाई के फलस्वरूप जो आरोग्य विहार में स्तूप प्राप्त हुआ, वह गुप्तकालीन ज्ञात होता है। उसका पूरा विवरण प्राप्त होने पर कदाचित् इस काल के बरतनों पर कुछ और प्रकाश पड़े।[२]

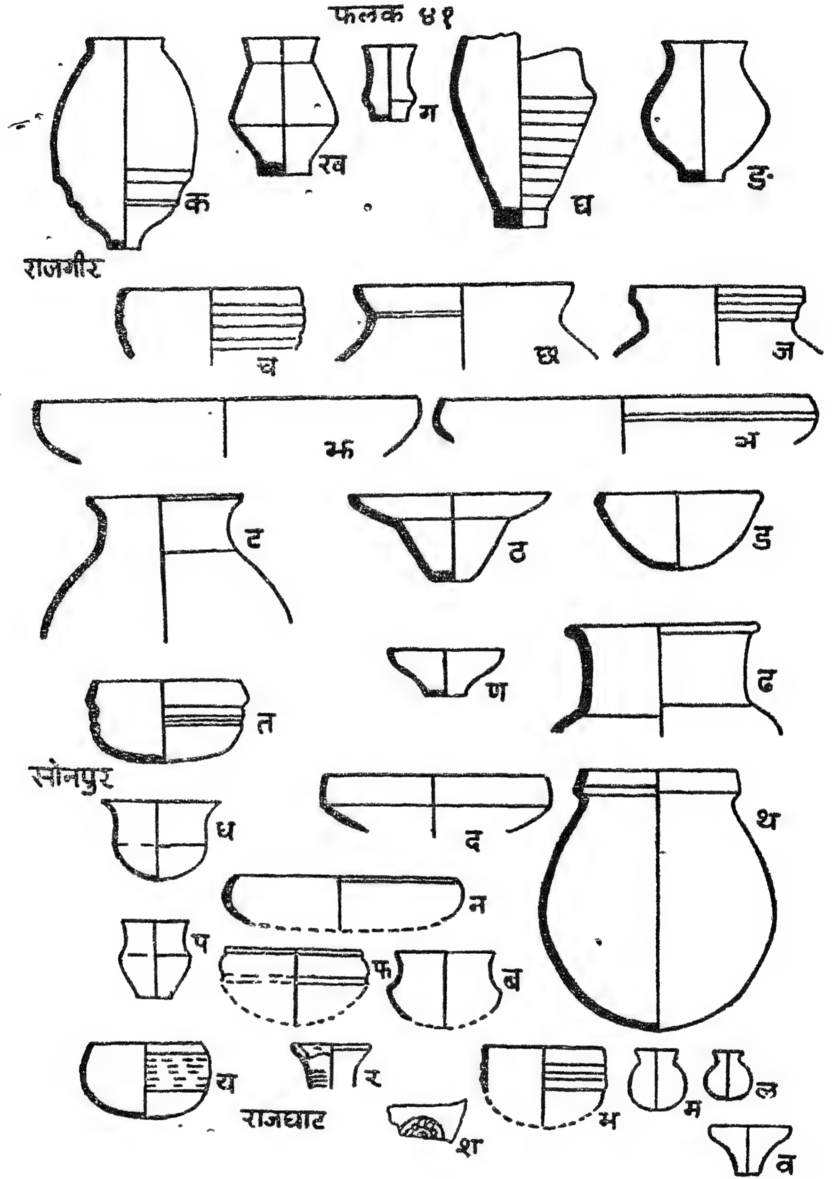
राजगीर या राजगृह मगध की प्राचीन राजधानी थी। यह स्थान पटने से ६० मील पूर्व-दक्षिण की ओर है। यहाँ की खोदाई के फलस्वरूप जो बरतन प्राप्त हुए हैं उनमें कुछ टुकड़े उत्तरी काली चमक वाले बरतनों के

[१] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५५–५६ पृ० २३ प्लेट ३४ बी०।

[२] ए० घोष—१९५४–५५ पृ० १९।

पूर्व काल के भी हैं[1]। ये टुकड़े बहुत छोटे होने के कारण इनके बरतनों के आकार का आभास नहीं मिलता। ये लाल रंग के बरतनों के टुकड़े हैं जिन

फलक ४१



पर काला लेप चढ़ाया गया था। एक टुकड़े पर कत्थई रंग का लेप भीतर की

[1] ए० घोष—राजगीर १९५० एनशण्ट इंडिया नं० ७ पृ० ७०।

ओर है और बाहर काला लेप है। भीतर की ओर इसे चमकाने का भी प्रयत्न किया गया है।

उत्तरी काली चमकवाले बरतन इस प्रथम सतह के ऊपर ही प्राप्त हुए हैं। इनमें विशेप रूप से थाली और कटोरों[1] (फलक ४१ च का भी बाहरी भाग गडारी दार है[3]) के आकार के बरतन ही हैं। इन थालियों की बारें प्रायः भीतर की ओर झुकी हुई हैं तथा पेंदियाँ गोलाई लिये हुए हैं। इन बरतनों के साथ के बरतन प्रायः जैसे सभी स्थानों से प्राप्त हुए हैं वैसे ही यहाँ से भी मिले हैं। इन बरतनों में कुछ ऐसे हैं जिन पर सिलेटी रंग का लेप है और चमक दी गई है (झ)। कुछ पर काले रंग का लेप है और चमक भी है (ञ)। परन्तु यह उत्तरी भारतीय चमकीले बरतनों से भिन्न हैं। एक थाली पर लाल नारंगी रंग हैं। इस पर भी चमक है। एक घड़ा है जिसकी मिट्टी सिलेटी रंग की है, भीतर से लाल रंग का लेप है और बाहर से काले रंग का (ठ)। एक ढक्कन है जिस पर बाहर और भीतर दोनों ओर लाल रंग है और एक गोल पेंदी का कटोरा है जिसके बार को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि उस पर ढक्कन भी था। यह सिलेटी रंग का है[2]। कुछ बरतनों के टुकड़े ऐसे भी इस युग के प्राप्त हुए हैं जिन पर चित्रकारी है। एक छोटे मुँह की लुटिया है जो भीतर से सिलेटी रंग की है और बाहर से लाल लेप लगा है। लेप पर गहरी कालिमा लिए हुए लाल रंग से चित्रकारी की गई है[3]। कुछ चित्रित बरतन राजघाट की खोदाई में भी प्राप्त हुए हैं जिनमें एक टुकड़े पर जो सिलेटी रंग का है लाल धारी बनी हुई है। राजगीर से और दो टुकड़े चित्रित बरतनों के प्राप्त हुए हैं। एक काला है जिस पर दो पीली रेखायें बनी हैं, दूसरा लाल रंग का है जिस पर काली धारियाँ हैं।

इसके पश्चात् सुंगकाल के बरतन मिलते हैं जो प्रायः लाल रंग के हैं। इन्हीं के साथ कुछ प्राचीन उत्तरी चमक वाले बरतनों के टुकड़े भी यहाँ से प्राप्त हुए हैं।[4] जिससे यह अनुमान होता है कि इस काल तक कुछ प्राचीन बरतन बच गये थे जो इस युग में टूटे। इस युग के बरतनों में मोटे कुण्डे और नाँदें यहाँ से अधिक संख्या में मिली हैं। बरतनों पर सफाई इस युग में कम दृष्टिगोचर होती है परन्तु आकार बहुत नहीं बदलते।

---

[1] ए० घोष—उपर्युक्त–फिगर ३।

[2] कौशाम्बी से प्राप्त है।

[3] ए० घोष—उपर्युक्त–फिगर ६।३।

[4] यों यहाँ के पीरिएड दो का फेज़ सी भी इसी युग के अन्तर मानना चाहिये। परन्तु घोष साहब ने उसे पीरियड दो के अन्तर्गत ही रक्खा है। ए० घोष राजगीर १९५० एनशण्ट इण्डिया नं० ७ पृ० ७२।

फलक ४१ (ट) पर एक घड़े का मुख है। इस घड़े की मिट्टी काली है, बाहर से यह भूरे लाल रंग का है। इसकी कोर देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि यह ठिकाने से पकाया नहीं गया था। दूसरा बरतन एक कसोरा (फलक ४१ ण) है। इसका आकार उत्तरी काली चमक वाले कसोरे से बहुत मिलता है। उसी प्रकार इसकी कोर भी भीतर की ओर घूमी हुई है। इस पर नारंगी के रंग का लाल लेप बाहर और भीतर दोनों ओर है। तीसरा एक कटोरा है (त)। यह भी लाल रंग के लेप से आच्छदित है। बार के नीचे एक गडारी बनी रहने के कारण यह सन्देह होता है कि इस पर ढक्कन रहा होगा। इसका आकार उत्तरी काली चमक वाले बरतन में कटोरे (च) के आकार का स्मरण दिलाता है।

यहाँ के यूनान-कुषाण काल के बरतन तो राजघाट से प्राप्त बरतनों से बहुत मिलते हैं। यहाँ का लोटा (थ) और थाली (त) तो उसी प्रकार की हैं जैसी इस काल के और सभी स्थानों से प्राप्त हुई हैं।

हाल की राजगीर के जीवकमखन तथा मनियारमठ की खोदाई से भी कोई नया तथ्य नहीं दृष्टिगोचर हुआ।[1]

गया जिले के सोनपूर की खोदाई के फलस्वरूप जो विविध स्तर प्राप्त हुए हैं उनमें पहिले से लाल काले बरतन मिले हैं जिनमें चौड़े मुँह के पुरवे, थाली, अथरी तथा लोटे के आकार के बरतनों के टुकड़े विशेष रूप से विद्यमान हैं। विहार में यह प्रथम स्थान है जहाँ से इस रंग के बरतन सबसे नीचे के स्तर से प्राप्त हुए हैं। इसका काल प्रायः ईसा पूर्व १००० वर्ष से लेकर ८०० तक कूता जाता है (फलक ४१ ध, न, फ, ब)[2]।

इसके दूसरे काल के स्तर से इन लाल काले बरतनों के साथ कुछ सिलेटी रंग के बढ़िया बरतनों के टुकड़े तथा उत्तरी काली चमक वाले बरतनों के टुकड़े भी प्राप्त हुए हैं। इन बरतनों को प्रायः ईसा पूर्व ६०० से ६५० तक माना गया है, परन्तु यह कुछ उचित नहीं ज्ञात होता। उत्तरी काली चमकवाले बरतनों का काल प्रायः ५वीं शती समझा जाता है[3] और जिस स्तर से ये मिलने लगते हैं उसे उसी काल का अनुमान किया जाता है तो इस स्तर को ईसापूर्व ८०० से ६०० का कैसे माना जा सकता है। इसे ई० पू० ६०० से ४०० तक का ही माना जा सकता है। इस स्तर से लाल काले रंग के पुरवे (प), लुटिया (म), थाली इत्यादि प्राप्त हुए हैं। इन्ही बरतनों के साथ एक प्याला उत्तरी काली चमक का भी प्राप्त हुआ है

[1] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५४–१९५५ पृ० १६।

[2] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी—१९५६–५७ पृ० १९ प्लेट २३।

[3] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—दी पाटरी आफ अहिच्छत्र—अपेण्डिक्स ए० कृष्णदेव एण्ड ह्वीलर-एनशण्ट इण्डिया नं० १ पृ० ५६।

जिसका आकार गड़ारीदार है। इसी प्रकार का प्याला राजघाट से भी प्राप्त हुआ है[1] और राजगीर से (च) भी। कौशाम्बी से भी इसी प्रकार का गड़ारीदार शरीर का प्याला प्राप्त हुआ है। इस प्रकार इन तीनों स्थानों के स्तरों को एक ही काल का समझना चाहिये।

इसके ऊपर के स्तर से उत्तरी काली चमक वाले बरतन बहुतायत से पाये गये हैं। इनमें कुछ पर सोने की और कुछ पर चाँदी की चमक है जैसी राजघाट और कौशाम्बी के बरतनों पर पायी गई है। इस स्तर से भी पहिले काल के कुछ लाल काले बरतनों के टुकड़े प्राप्त हुए हैं। कुछ नारंगी रंग के बरतन भी मिले हैं जिन पर गहरी लाल या काली धारियाँ हैं[2]। इस स्तर को मौर्यकाल का कहना अनुचित न होगा क्योंकि इस स्तर से जो और वस्तुएँ प्राप्त हुई हैं वे मौर्य काल की ओर ही संकेत कर रही हैं। इन बरतनों में थालियाँ और कटोरे अधिक संख्या में प्राप्त हुए हैं। कदाचित् इस युग में लोग इन कटोरों और थालियों को विशेष रूप से भोजन करने के काम में लाते थे और इन्हें पुनः पुनः धोकर व्यवहार कर लेते थे, जैसे आज भी भिक्षु संन्यासी अपने खप्पर का करते हैं। इन बरतनों के आकार पहिले के काल के बरतनों के आकार की ही भाँति हैं। गड़ारीदार एक प्याला इस स्तर में भी मिला है।

इसके ऊपर का स्तर सुंग काल का ज्ञात होता है। इसमें से उत्तरी काली चमक वाले बरतनों की भाँति के जो बरतन प्राप्त होते हैं उन पर चमक पहिले के बरतनों से कम है और ये मोटे भी हैं। लाल और काले बरतन जैसे राजघाट में मिले हैं, मिलने लगते हैं। इनमें थालियाँ, चिपटे बार के कटोरे, कसोरे (व) लुटिया (ल) मुख्य हैं। कुछ बरतन ठप्पे से छापे भी गये हैं। (फलक ४१, श)

सबसे ऊपर का स्तर तो कुषाण काल का स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है। उसी प्रकार के बोरके यहाँ भी प्राप्त हुए हैं जैसे राजघाट, हस्तिनापुर[3] इत्यादि स्थानों में मिले हैं। उसी प्रकार के भूरे लाल रंग के खड़ी बार वाले कसोरे, ठप्पों से अलंकृत गगरे इत्यादि भी हैं। केवल स्त्री मृण मूर्तियों के आधार पर या पत्थरों के कुछ अस्त्रों पर ईसापूर्व ३०० से ५० वर्ष तक का इस स्तर को नहीं कूता जा सकता।

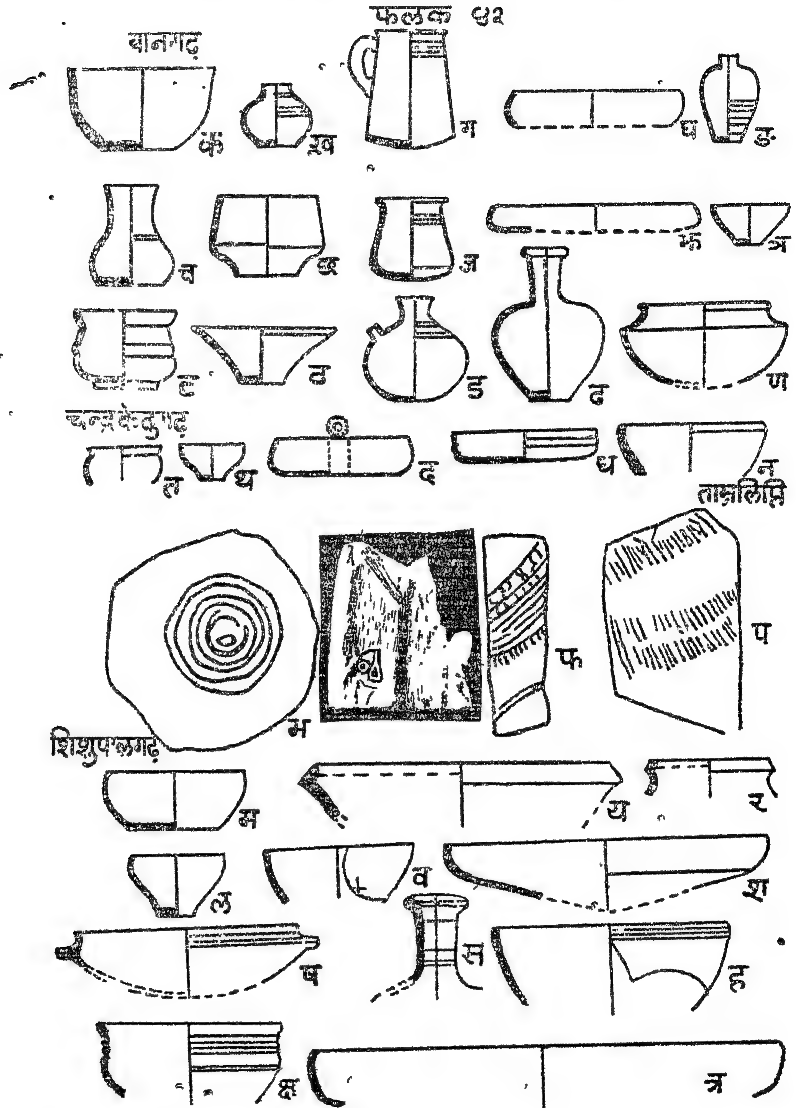
पश्चिमी बंगाल के ज़िला दिनाज पुर के बानगढ़ की खोदाई के फलस्वरूप जो पाँच स्तर प्राप्त हुए हैं उनमें सबसे प्रथम तो मौर्य स्तर है जहाँ से उत्तरी

[1] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—उपर्युक्त फिगर १०-नं० ११।

[2] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५६-५७ प्लेट २३ पीरियड ३।

[3] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिना पुर इत्यदि-एनशण्ट इण्डिया नम्बर १०-११ फिगर २०।१२ केवल इसका ढक्कन सोन पुर में नहीं है।

काली चमक वाले बरतन प्राप्त हुए हैं[1]। इन बरतनों में कटोरा (फलक ४२ क), खड़ी ग्रीवा का लोटा (ख), थाली (घ), छोटे मुँह की लम्बी सुराही (ङ) और एक टम्बलर (ग) मुख्य हैं। इन बरतनों के आकार थाली और कटोरे



को छोड़कर अभारतीय हैं। इससे ऐसा ज्ञात होता है कि ये उस युग के हैं जब यूनान का प्रभाव भारत में फैल चुका था। इसी प्रकार के हाथ लगे हुए

[1] के० जी० गोस्वामी—एक्सकवेशन्स एट बानगढ़ (कलकत्ता १९४८) पृ० २७।

गड़ुए हैं परन्तु इनसे सुन्दर सिरकप से भी प्राप्त हुए हैं[1]। इन बरतनों में कटोरे की मोटाई तो अपेक्षाकृत अधिक ज्ञात होती है।

दूसरे काल के बरतन जो मृणमूर्तियों के आधार पर सुंग काल के कूते गये हैं उनमें अभारतीय तत्व का बाहुल्य (फलक ४२ घ ज झ ञ) है। इनमें थाली और कसोरों को छोड़कर प्रायः सभी बरतन विदेशी सभ्यता से प्रभावित हैं। इनके भारी भरकम आकार की रेखाओं में प्रवाह का नितान्त अभाव है। ये बरतन लाल रंग के हैं और ऊपर से वैसे ही हैं जैसे और स्थानों के इस स्तर से प्राप्त हुए हैं।

तीसरे काल के बरतन तो प्रायः कुषाण कालीन स्तरों से प्राप्त बरतनों के सदृश ही हैं।[2] इनमें लम्बी ग्रीवा की सुराही (ढ), टोंटी लगे हुए गड़ुए (ड), कसोरे (ठ), अथरी (ण), लोटे इत्यादि इन्हीं से मिलते जुलते आकारों के और स्थानों से भी प्राप्त हुए हैं। इनकी मिट्टी भी बहुत माड़ी हुई नहीं है। इन पर ऊपर से मोटा लाल लेप है। कुछ बरतन ठप्पों से छापे हुए भी प्राप्त हुए हैं। इन ठप्पों के विषय और स्थानों के ठप्पों से भिन्न हैं।[3]

इसके पश्चात् का स्तर गुप्त काल का है और उसके ऊपर का पाल काल का। चन्द्रकेतुगढ़ में जो चौबीस परगने के अन्तर्गत आता है, हाल की खोदाई से जो बरतन प्राप्त हुए हैं (फलक ४२ त-न), उनमें सोन पुर की भाँति प्रथम स्तर से लाल-काले बरतन प्राप्त हुए हैं, जिन पर लेप है।[4] इन्हें प्राग्-मौर्यकाल का कहा जा सकता है। परन्तु यहाँ के बरतनों के आधार पर विविध स्तरों का मौर्यशुंग तथा कुषाण काल निश्चित करना कठिन है। जब उत्तरी काली चमक वाले बरतनों के साथ रुलेटेड बरतन यहाँ मिलते हैं तो यहाँ काली चमक वाले बरतनों का काल ईसा की पहिली शताब्दी के पूर्व नहीं जा सकता। यों और स्थानों में ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी से ये बनने बन्द हो जाते हैं।[5] रुलेटेड बरतन के भारत में पदार्पण का काल व्हीलर ने प्रमाण सहित ईसा की प्रथम शताब्दी निश्चित किया है[6]। बानगढ़ जो समुद्र से बहुत दूर है, वहाँ तो यह और भी बाद में पहुँचा होगा। अस्तु।[7] शिशुपाल-

---

[1] वाई० डी० शर्मा—एक्सप्लोरेशन्स आफ हिस्टारिकल साइट्स एनशण्ट इण्डिया नं० ९ फिगर २।१।

[2] वाई० डी० शर्मा—उपर्युक्त एनशण्ट इण्डिया नं० ९ फिगर ६।

[3] वाई० डी० शर्मा—उपर्युक्त पृ० १५५।

[4] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५६-५७ पृ० ३०।

[5] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—दी पाटरी आफ अहिच्छत्र-एनशन्ट इण्डिया नं० १ पृ० ५६।

[6] आई० एम० व्हीलर—अरिकामेड्ड इत्यादि एनशण्ट इण्डिया नं० २ पृ० ३४-३५। बी० बी० लाल शिशुपालगढ़-एनशण्ट इण्डिया नं० पृ० ७१।

[7] बानगढ़ से प्राप्त और स्तरों का विवरण यथास्थान दिया जा चुका है।

गढ़ में भी यही कठिनाई पड़ती है जैसा हम आगे देखेंगे। दूसरे काल के बानगढ़ से प्राप्त बरतनों में थाली, कसोरे, हंडिया और कटोरे मुख्य हैं (फलक ४२ त, थ, द, ध, न,)। एक कटोरा भी प्राप्त हुआ है (न) जिसके एक ओर पतली धार गिराने के हेतु मुँह बना है। यह आकार हस्तिनापुर के इसी आकार के बरतन से मिलता है।[1] इस पर रुलेटेड चिह्न है। इस काल के उत्तरी काली चमक वाले बरतन, काले लेप के बरतन सिलेटी चमकीले अथवा बुत्त बरतन, रुलेटेड बरतन इत्यादि प्राप्त हुए हैं। कुछ बरतनों पर ठप्पे से छापा भी गया है।[2] इन चिह्नों में सूर्य का आकार तथा एक वृत्त बीच में और सात वृत्त उसके चारों ओर बनाये गये हैं। रुलेटेड चिह्न एक बरतन के बाहर की ओर भी बन गया है[3] जैसा अरिकामेडू के कतिपय बरतनों पर पाया जाता है।

इसके पश्चात् के स्तरों को दो भागों में बाटा गया है परन्तु हैं वे एक ही काल के। इस काल में लाल बरतन मिलने लगते हैं तथा उनमें एक पर ठप्पे से चिह्न भी अंकित किया गया है। यहाँ का इस काल का कसोरा[4] प्रायः सभी स्थानों से ऐसा ही मिला है। इस युग के पश्चात् गुप्त काल के अवशेष प्राप्त होने लगते हैं। जिला मिदनापुर में तिलदह की खोदाई के फलस्वरूप जो बरतन प्राप्त हुए हैं वे गुप्त अथवा मध्य कालीन हैं[6]। तामलुक जिला मिदना पुर में है। कदाचित् यह प्राचीन ताम्र लिप्ति का बन्दरगाह था। हाल में श्री देशपाण्डे जी की देख-रेख में यहाँ खोदाई हुई है[5] जिससे ऐसा पता चलता है कि यह स्थान पिछले काल के प्रस्तर युग से प्रायः अभी तक बराबर विद्यमान रहा है, चाहे बीच-बीच में कुछ काल के लिये निर्जन हो गया हो। प्रस्तर युग के बरतन थोड़े से प्राप्त हुए हैं और वे ठीक से पकाये हुए नहीं हैं। दूसरे स्तर के बरतन मौर्य-शुंग काल के हैं। तीसरे काल के बरतनों में रुलेटेड (फलक ४२ प) बरतन तथा ठप्पे से छपे हुए बरतन हैं (ब)। इसके पश्चात कुषाण-गुप्त स्तर प्राप्त हुआ है।

गंजाम जिले का जौगढ़ उड़ीसा के उन स्थानों में है जहाँ से अशोक कालीन कई लेख प्राप्त हुए हैं। यहाँ से सबसे नीचे स्तर से जो मिट्टी के

---

[1] बी० बी० लाल—एक्सकवेशन एट हस्तिनापुर—एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० ६९ फिगर २३।२

[2] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५६–५७ प्लेट ३९।

[3] ए० घोष—उपर्युक्त पृ० ३०।

[4] ए० घोष—उपर्युक्त फिगर १४।११।

[5] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५४-५५ पृ० २३।

[6] ए० घोष—उपर्युक्त पृ० १९।

बरतन प्राप्त हुए हैं उनमें कुछ तो भूरे लाल रंग के हैं जिनमें किसी पर लाल लेप है और किसी पर नहीं है। कुछ बरतन लाल काले रंग के हैं। इस रंग के बरतनों में थाली तथा कटोरे मुख्य हैं[1] और कुछ बरतनों पर लाल रंग का लेप है। कुछ बरतनों के बीच में एक घुंडी और उसके चारों ओर कई वृत्त बने हैं। दूसरे काल के बरतन लाल रंग के हैं। ऐसा ज्ञात होता है कि ये पकाने के पश्चात् रंगे गये हैं क्योंकि यह रंग रगड़ने से छूटने लगते हैं। ये पकाये भी ठीक नहीं गये हैं। इन पर खोदाई करके तथा अलग से आकार बनाकर उन्हें चिपका कर इनकी सुन्दरता बढ़ाई गई है। यहाँ की खोदाई के काम में तथा राजघाट, कौशाम्बी की खोदाई के काम में अन्तर है। इस काल के कुछ बरतनों के बीच घुंडी और उसके चारों ओर वृत्त मिले हैं परन्तु वे उतने सुन्दर नहीं हैं जितने पहिले काल के हैं। इस स्तर का काल निश्चित करने में यहाँ से प्राप्त पुरी कुषाण सिक्कों से बड़ी सहायता मिलती है। ये बरतन कुषाण काल के आकार के हैं! उड़ीसा के शिशुपालगढ़ से प्राप्त बरतनों की शृंखला भारत के इस भू-भाग के विषय में विशेष सामग्री उपस्थित करती है।

इस स्थान के स्तरों को श्री० बी० बी० लाल ने ४ भागों में बाटा है। पहिला स्तर पिछले मौर्यकाल का ईसा पूर्व ३०० से २०० तक का, इसके पश्चात् ए स्तर, ईसा पूर्व २०० से ईसा पश्चात् १०० वर्ष तक का, दूसरा 'बी' ईस्वी १०० से २०० तक तथा तीसरा स्तर ई० २०० से ३५० तक का है।[2] इन विभिन्न स्तरों से प्राप्त मिट्टी के बरतनों की विशेषता यह है कि इन पर चित्रकारी नहीं है और बहुतों पर घुंडी तथा उसके चारो ओर वृत्त बने हुए हैं जो कदाचित् स्तूप के द्योतक हैं।

सब से नीचे के स्तर से प्राप्त बरतन या तो हलके सिलेटी रंग के हैं या लाल रंग के। कुछ बरतन चमकाये भी गये हैं। गहरे और हलके सिलेटी रंग के बरतन घुंडीदार और बिना घुंडी के सभी स्तरों में मिले हैं। इससे ऐसा अनुमान होता है कि इस प्रकार के बरतन प्रायः बौद्ध भिक्षु व्यवहार में लाते थे। इस स्तर से प्राप्त एक काले रंग का कटोरा थोड़ी-सी बाहर निकली हुई बार का, फलक ४२ म पर प्रदर्शित है। इस पर चमक है। इसकी पेंदी प्रायः चिपटी है। 'य' पर एक घड़े का मुँह है जिस पर लाल चमक है। एक छोटा लोटा 'र' पर है जो हलके लाल रंग का है। इसकी बार गोलाई लिये हुए है। इसी प्रकार के लोटे अहिच्छत्र से भी प्राप्त हुए

[1] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५६-५७ पृ० ३०।

[2] बी० बी० लाल—शिशुपाल गढ़, एनशण्ट इण्डिया नं० ५ पृ० ७२।

हैं।[1] एक गगरी का मुहँ इसी काल का और प्राप्त हुआ है जो गहरे लाल सिलेटी रंग का है और जिसकी बार बाहर निकली हुई है।[2]

दूसरे काल के 'ए' स्तर से लाल काले बरतन दक्षिण भारत की भाँति प्राप्त हुए हैं। इस काल के लाल बरतनों का रंग भी सिन्धुरिया है। कुछ बरतनों पर खोदाई करके या आकारों को ठप्पे से बनाकर ऊपर से चिपका कर सुन्दरता बढ़ाने का प्रयत्न किया गया है। इन्हीं बरतनों के साथ कुछ बढ़िया चमक वाले बरतन भी मिले हैं। श्री बी० बी० लाल के अनुसार इन पर वह चमक नहीं है जो धातु के बने बरतनों के सदृश उत्तरी भारत के काली चमक वाले बरतनों पर है[3]। इसी काल की पिछली सतहों से रुलेटेड बरतन भी प्राप्त हुए हैं[4]। इससे ऐसा अनुमान होता है कि इन काली चमक वाले बरतनों के बनाने की कारीगरी उड़ीसा की ओर बाद में पहुँची और इसी कारण इसमें वह चमक नहीं बन पाई जो उत्तरी भारत के काली चमक वाले बरतनों में मिलती है। रुलेटेड बरतनों के इन काली चमक वाले बरतनों के साथ मिलाने से एक तथ्य जो सामने आता है वह यह है कि सभी स्थानों पर काली चमक वाले बरतन एक ही काल में नहीं बनने लगे। इनके बनाने की कला को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने में समय लगा। यह कोई आश्चर्य का विषय भी नहीं होना चाहिये। इस कारण केवल काली चमक वाले बरतनों को देखकर हमें उस स्तर का काल तुरत निर्धारित नहीं करना चाहिये।

इस स्तर से जो बरतन प्राप्त हुए हैं उनमें एक कटोरा (फलक ४२ ल) हलके लाल रंग का है जिसकी बार अन्दर की ओर मुड़ी हुई है। दूसरा वह कटोरा है जिसकी पेंदी कदाचित् चिपटी थी (व) और जो बानगढ़ से प्राप्त कटोरे (फलक ४२ क) की भाँति है। इस पर काली चमक है। एक थाली है जिसकी पेंदी गोल है, जो गहरे सिलेटी रंग की है। इसकी बार भीतर की ओर उपर्युक्त कसोरे की भाँति मुड़ी हुई है (श)। एक लाल रंग का चमकदार ढक्कन बानगड़ से[5] प्राप्त हुआ है। ऐसा ही एक ढक्कन ब्रह्मगिरि और चन्द्रावल्ली[6] से प्रथम शताब्दी का प्राप्त हुआ है। एक सुराही का मुँह लाल रंग का मिला है जिस पर चमक है। इसके भीतर की ओर धारियाँ

---

[1] ए० घोष एण्ड पाणिग्रही—दी पाटरी आफ अहिच्छत्र-एनशण्ट इण्डिया नं० १ पृ० ८२।

[2] बी० बी० लाल—उपर्युक्त पृ० ८२, ६।१३।

[3] बी० बी० लाल—उपर्युक्त पृ० ७९।

[4] बी० बी० लाल—उपर्युक्त पृ० ८४—फिगर ८।१३

[5] वाई० डी शर्मा—एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टारिकल साइट्स-एनशण्ट इण्डिया नं० ९

[6] व्हीलर—ब्रह्मगिरि एण्ड चन्द्रावल्ली १९४७ एनशण्ट इण्डिया नं० ९ फिगर। टी १६३

खुदी हुई हैं (स)। इसका भी आकार बानगढ़ से प्राप्त सुराही से बहुत कुछ मिलता है (ढ)। इन्हीं के साथ और घड़े मिले हैं जिनमें दो पर काली चमक है[1]। एक घड़ा भूरे लाल रंग का है[2]। इन्हीं बरतनों के साथ जो लाल काले बरतन मिले हैं उनमें कटोरे और थालियाँ अधिक हैं[3] इनमें का कटोरा ब्रह्मगिरि कटोरे से बहुत मिलता है (सी ८८) तथा थाली (त्र) ब्रह्मगिरि की थाली की ही भाँति है (सी ८८) तथा गहरा कटोरा (क्ष) भी ब्रह्मगिरि के कटोरे 'टी १०६' के ही आकार के हैं।

इस स्तर के रुलेटेड बरतनों को प्रायः ईसा पश्चात् ५० वर्ष तक का १७६ से १८६ के बीच रखा जा सकता है।[4] इनमें दो भाँति के बरतन प्राप्त हुए हैं। एक तो काले हैं जिन पर चमक है और दूसरे वे हैं जो सिलेटी रंग के हैं और बहुत साफ नहीं बने हुये हैं। नीचे के स्तर वाले जिन पर काली चमक है, कदाचित् बाहर से आये हों ऐसा अनुमान है[5]। इस स्तर (२ ए) से तो एक ही टुकड़ा इस प्रकार का प्राप्त हुआ है। इस प्रकारके बरतनों में भीतर की ओर मुड़ी हुई छिछली तश्तरियाँ ही अधिक हैं।[6]

इस युग के बरतनों पर खोदाई करके और छिलाई करके भी सुन्दरता लाने का प्रयत्न किया गया है। इन आकारों में प्रायः तिरछी या सीधी रेखायें ही हैं। छिलाई करके दोनों ओर डोरी की बटन तथा बीच में गोल दबे हुए आकार बनाये गये हैं।

दूसरे 'बी' स्तर से प्राप्त मिट्टी के बरतन पूर्व के स्तरों के बरतनों की भाँति सफाई से नहीं बने हैं। ये अच्छी भाँति पकाये भी नहीं गये हैं तथा इनके ऊपर का लेप इतना लाल भी नहीं है। इस काल के बरतनों के साथ कुछ रुलेटेड बरतन और तीन उत्तरी काली चमक वाले बरतनों से इस स्तर का काल निर्धारित किया जा सकता है। इस स्तर का सबसे बढ़िया बरतन एक कमण्डलु है जो एक कछुए के आकार का बना हुआ है (फलक ४३ क)। यह हलके लाल रंग का है। इसके अतिरिक्त यहाँ से कई प्रकार के कटोरे (ख, ग, घ, ङ, ञ) जिनमें प्रायः सभी में पेंदी है, प्राप्त हुए हैं। हड़िया (छ), अथरी (ञ), सुराही (झ), गगरे (च) इत्यादि भी प्राप्त हुए हैं। इनमें सुराही (झ) और कटोरे (ग) पर तो लाल रंग का लेप और

---

[1] बी० बी० लाल—शिशुपालगढ़ एनशण्ट इण्डिया नं० ५ पृ० ८२–१४, १७।

[2] बी० बी० लाल—उपर्युक्त पृ० ८२–१६।

[3] बी० बी० लाल—उपर्युक्त फिगर ८।

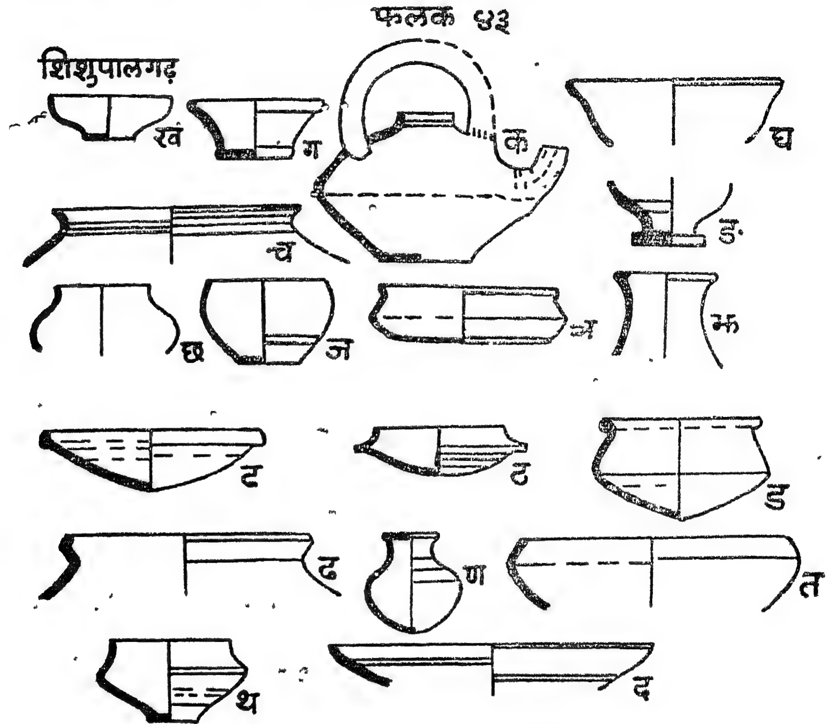
[4] बी० बी० लाल—शिशुपालगढ़-एनशण्ट इण्डिया नं० ५ पृ० ६।

[5] बी० बी० लाल—उपर्युक्त पृ० ७८।

[6] बी० बी० लाल—उपर्युक्त प्लेट ४२।

चमक है। कटोरे (ङ), गगरा (च) तथा हड़िया (छ) पर हलका लाल रंग है और एक कटोरे (ञ) पर सिलेटी रंग है।

फलक ४३



तीसरे स्तर के बरतनों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि जनता को इनसे कोई प्रेम नहीं रह गया था। कदाचित् इस काल तक धातु के बने बरतन विशेष व्यवहार में आने लगे थे। ये बरतन न तो सफ़ाई से बनाये गये हैं और न अच्छी भाँति पकाये ही गये हैं। इन पर गेरू या रामरज का रंग ऊपर से पकाने के पश्चात् लगा दिया गया है। खोदाई करके जो सुन्दरता लाने का प्रयत्न किया गया है वह भी कुछ हृदयग्राही नहीं है क्योंकि बरतन ही साफ नहीं बने हैं। कुछ सिलेटी रंग के बरतनों पर रुलेटेड आकार भी बने हैं परन्तु ये भी उतने साफ नहीं हैं। इस काल में लाल काले बरतनों का नितान्त अभाव है।

इस काल के बरतनों में छिछले कसोरे (फलक ४३ ट), ढक्कन (ठ), गहरी अथरी (ड), गगरा (ढ), लोटा (ण), परई (त), कटोरा (थ) तथा थाली (द) मुख्य हैं। ये प्रायः हलके लाल रंग के हैं। इनकी बार प्रायः बाहर निकली हुई बनाई गई है। पहिले के युग से इनके आकार प्रायः मिलते हुए हैं परन्तु ये उतने सुगढ़ नहीं बने हुए हैं। इनको प्रायः कुषाण काल का माना गया है।

शिशुपालगढ़ हमारे लिए पूर्व और दक्षिण भारत के बरतनों की श्रृंखला की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। इस कारण यहाँ और खोदाई होने की आवश्यकता है जिससे यहाँ के मौर्य युग पर कुछ और विशेष प्रकाश पड़े।

इस प्रकार हमारे पूर्वी भारत के मिट्टी के बरतनों की इस सरसरी पड़ताल में एक प्रकार की श्रृंखला दृष्टिगोचर होती है जो कौशाम्बी से लेकर शिशुपालगढ़ तक स्थानीय भेदों के रहते हुए भी इन सुदूर स्थानों को एक सूत्र में बद्ध करती है। स्थान-स्थान के बरतनों की अनेकता में भी एक प्रकार की एकता मिलती है। ऐसा अनुमान होता है कि बरतनों के आकार प्रकार उत्तरपूर्व की ओर से दक्षिण पूर्व की ओर गये हैं। इस कारण एक ही प्रकार के बरतन एक युग के होते हुए भी एक ही काल के नहीं है। हमें विनयपिटक के चुल्लवग्ग में मिट्टी के बरतनों के कुछ नाम प्राप्त होते हैं[1]। कदाचित् ये उत्तरी काली चमक वाले बरतनों के नाम हों परन्तु इनके आकार का कोई विवरण नहीं मिलता। इसके पश्चात् की पुस्तकों में इनके आकार भी नहीं मिलते हैं जिससे इनके नाम युग के हिसाब से दिये जा सकें। इस कारण कोई निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन है। यह कठिनाई प्रायः सभी भारतीय कला-कौशलों के विवेचन में पड़ती है।

निष्कर्ष

संक्षेप में भारतीय प्राचीन मिट्टी के बरतनों की यह कहानी हमारे समक्ष मनुष्य के प्रायः ३५०० वर्ष के प्रयत्न, उसकी कठिनाइयों तथा उसकी सफलता का चित्र उपस्थित करती हैं। किस प्रकार मनुष्य ने हाथ से मिट्टी के पात्र बनाने प्रारम्भ किये, किस प्रकार उनको धूप में सुखाने की क्रिया उसने सीखी, पुनः उनको आँच में पकाना जाना, किस प्रकार चाक का आविष्कार हुआ, किस प्रकार उनको रंगना प्रारम्भ किया इत्यादि सभी बातों पर कुछ न कुछ प्रकाश इस कहानी से पड़ता है। पीछे के इन युगों के विषय में लिखित प्रमाणों के अभाव में हमारा ज्ञान बहुत अधूरा है। हमारे समक्ष प्राचीन भारतीयों के बनाये हुए बरतन हैं। उन्हीं की वैज्ञानिक जाँच करके हम कुछ निष्कर्षों पर पहुँचते हैं। इन्हीं जाँचों के सहारे हमें यह पता लगता है कि किस प्रकार बरतनों के बनाने की विधि में उपर्युक्त प्रगति हुई। किस प्रकार उसकी आवश्यकताओं ने उसे नये २ आविष्कार करने को विवश किया क्योंकि आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है।

सीधे सीधे पत्थरों के बरतनों के नमूनों पर बनते बनते बरतनों ने फलों के आकार धारण किये। एक बरतन जो अहिच्छत्र से प्राप्त हुआ है वह तो बिलकुल कटहल के आकार का है और एक बरतन महा स्थान से नारियल

[1] चुल्ल वग्ग ५।९ १-२।

के आकार का प्राप्त हुआ है। टोंटियाँ सीधी बनते २ मनुष्यों और पशुओं के मुख जैसी बनने लगीं। मनुष्य के मुख, हाथी के मुख और मकर मुख जैसी अनेक टोटियाँ स्थान-स्थान से मिली हैं। कई एक बरतन पशुओं के आकार के बने जैसे एक कछुए के आकार का कमण्डलु जो शिशुपाल गढ़ से प्राप्त हुआ है[1]। इन आकारों में विदेशी प्रभाव और उनका पुनः भारतीकरण हमारे अध्ययन का विषय है क्योंकि इन प्रभावों से हम इतिहास की सामग्री एकत्रित करते हैं। बाहर से आने वालों के रहन-सहन अभारतीय होने के कारण उनके प्रयोग के हेतु उनके काम के बरतन बनाने पड़ते थे जिसकी छाप भारतीय बरतनों पर भी पड़ती थी। इन्हीं से हम इनके आने की तिथियाँ भी निश्चित कर पाते हैं जैसे आज चाय पीने के हाथदार चीनी के प्यालों ने मिट्टी के प्यालों को जन्म दिया। इनके आकार हमारे नहीं हैं। ये तो सुदूर पश्चिम से आये हैं। इसी प्रकार शराब की विलायती बोतलों के आकारों ने कलकत्ते की सुराही के आकार को बदलकर अभारतीय बना दिया। वे थोड़े दिन पहिले तक लम्बे बोतल की भाँति की बनने लगी थीं। इनकी तिथि से हम अंग्रेजों के भारत में बसने के काल का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। इसी प्रकार दक्षिण भारत में ईसा की पहिली शताब्दी में रोम के बने बरतनों ने भारतीय बरतनों के आकारों को बदल दिया जिसका भारतीकरण पीछे चलकर सातवाहनों के काल में हुआ। उत्तर भारत में मौर्य काल में यूनानियों के सम्पर्क से जो विकृति उत्पन्न हुई वह शुंग काल में गयी तथा उसके पश्चात् यूनानियों के कुषाण काल में पुनः आगमन ने जो अभारतीयता आकारों में उत्पन्न की उसका समन्वय गुप्त काल में हुआ।

इसी प्रकार बरतनों की रंगाई की भी कहानी है। प्रारम्भ में तो कदाचित् बरतनों की सुन्दरता बढ़ाने की इच्छा ने कुम्हारों को बरतनों को रंगने के हेतु प्रेरित किया होगा। परन्तु पीछे चलकर वह बरतनों का अंग बन गया तथा बिना रंगे बरतन बाजारों में नहीं चलने लगे। पीछे चलकर तेल, घी इत्यादि तरल पदार्थों को ऐसे बरतनों में रखने की आवश्यकता ने जो उन्हें सोखे नहीं, उत्तरी काली चमक वाले लेप को जन्म दिया होगा। इस प्रकार के बरतनों की विशेष आवश्यकता तो तब हुई होगी जब बौद्ध भिक्षुओं को एक पात्र को बहुत दिन तक चलाने का निर्देश विनय पिटक के अनुसार मिला होगा। इस प्रकार के लेप से आच्छादित प्रायः भिक्षा पात्र तथा कटोरे ही विशेष रूप से पाये गये हैं जो भोजन करने के काम में आते थे। इनका बनना तभी बन्द हुआ होगा जब धातु के बने बरतनों का व्यवहार बढ़ा होगा। ऐसा अनुमान होता है कि ईसा की पहिली शताब्दी में धातु के बने

[1] बी० बी० लाल—शिशुपालगढ़ १९४८–एन अर्ली हिस्टारिकल फोर्ट इन ईस्टर्न इण्डिया एनशण्ट इण्डिया नं० ५ (१९४९) पृ० ८० फिगर ५।

बरतन भिक्षु लोग भी व्यवहार करने लगे थे। रंगाई ने ही कुम्हारों को चित्रकारी की ओर भी उन्मुख किया होगा। रंगाई और चित्रकारी के सहारे तो आज हम यह भी पता लगा लेते हैं कि एक सभ्यता के लोग किस प्रकार एक स्थान से दूसरे स्थान गये।[1] ऐसा ज्ञात होता है कि चित्रकारी पहिले साधारण रेखाओं तक सीमित रही। कभी किसी ने एक दूसरे को काटती हुई रेखायें बना दीं, कभी नदी का आकार लहरियादार रेखाओं से बना दिया तो कभी सीढ़ी का आकार बना दिया। पीछे चलकर तो इन रेखाओं से अनेक आकार बनने लगे। प्राचीन बरतनों पर सीढ़ी के आकार को देख कर हमारे मन में आज कोई विशेष भाव नहीं उत्पन्न होता परन्तु हम भूल जाते हैं कि सीढ़ी मनुष्य को पेड़ों पर से फल तोड़ने और शहद के छत्तों को लेने में कितनी उपयोगी सिद्ध हुई होगी। इसी प्रकार नदी मनुष्य के मार्ग में बड़ी बाधा रही होगी तथा इसको पार करना एक कठिन समस्या। इसमें पानी को स्वयं बहते देखकर उसने इसमें देवता की स्थापना की होगी। इसी कारण उसने अपने बरतनों पर नदियों को दिखाया है। सिन्धु सभ्यता के एक बरतन पर एक मछुए को अपने जाल सहित अंकित देखकर हमें यह समझना चाहिए कि उस काल में मछली पकड़ना प्रारम्भ ही हुआ था।

चित्रकारी से ही कुम्हार को सन्तोष नहीं हुआ तो उसने बरतनों पर खोदाई करके भी आकार बनाने प्रारम्भ किये। पहिले तो वह पके हुए बरतनों पर खोदता रहा जैसा हम सिन्धु सभ्यता के कतिपय बरतनों पर देखते हैं[2]। इसके पश्चात् उसने मौर्य काल में तो कच्ची मिट्टी के बरतनों पर आकार बनाने प्रारम्भ कर दिये। इन आकारों में सबसे मुख्य भिक्षा पात्रों के बीच में स्तूप का आकार था। एक आकार को पुनः पुनः बनाने की आवश्यकता ने ठप्पों को जन्म दिया। इस प्रकार ठप्पों से बनाये हुए आकार भी मौर्य काल के बरतनों पर दृष्टिगोचर होते हैं परन्तु इस प्रकार की कारीगरी का विशेष व्यवहार तो शुंग-कुषाण युग में हुआ। ठप्पों से बरतनों को आभूषित करने पर चिह्न बरतन से अलग दिखाई नहीं देते थे। बरतनों को छीलकर आकार निकालना कष्टप्रद था इस कारण उसने साँचे में ढालकर भी

---

[1] डी, एच, गार्डन—दी पाटरी इण्डस्ट्रीज़ आफ दी इण्डो इरानियन बार्डर, ए री स्टेटमेण्ट एण्ड टेण्टेटिव क्रानोलाजी, एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १५९–१६०; डी, एच, गार्डन-सियाल्क, गियान, हिस्सार एण्ड दी इण्डो इरानियन कनेक्शन, मैन इन इण्डिया, २७ नं० ३–१९४७ पिग्गट, एस, डेटिंग दी हिस्सार सी क्वेन्स-दी इण्डियन एविडेन्स-अण्टिक्वेरी दिसम्बर १९४३ इत्यादि।

[2] आर, ई, एम, व्हीलर—हड़प्पा १९४६ दी डेफेन्सज एण्ड सिमेट्री आट ३७ प्लेट ३९–४, ७।

विविध चिह्न कच्चे बरतनों पर चिपकाने प्रारम्भ किये। पीछे चलकर जब कुम्हारों ने देखा कि आभूषित बरतनों का मूल्य अधिक मिलता है तो उन्होंने बरतनों को साँचे में ढालकर भी बनाना प्रारम्भ किया। जैसा हम कौशाम्बी से प्राप्त एक बरतन से अनुमान करते हैं[1] इस क्रिया में इच्छानुसार उभाड़ दार काम बन सकता है। इतना काम ठप्पे से करना कठिन था। यह साँचे से तुरन्त बन जाता था। ये साँचे और ठप्पे पहिले कच्ची मिट्टी में खोदकर बना लिये जाते थे। उसके पश्चात् इनको भट्ठी में पका लेते थे। इन साँचों में कच्ची मिट्टी के बरतनों को दबा कर उन पर आकार बनाते थे। यह क्रिया आज भी कुछ बरतनों के बनाने में काम आती है। विशेष रूप से उन बरतनों के बनाने में जिन पर कारीगरी अधिक करनी होती है और एक ही भाँति के बहुत से बरतन बनाने होते हैं।

बरतनों के पकाने में कुम्हारों ने कई प्रयोग किये। ऐसा प्रतीत होता है कि पहिले बरतनों के चारो ओर लकड़ी जलाकर उन्हें पकाते थे। फिर उन्होंने इन लकड़ियों को चारो ओर से मिट्टी की दीवार बनाकर ढकना प्रारम्भ किया जिससे आग हवा लगने से इधर उधर फैले नहीं। इसी से आगे चलकर ईंटों की भट्ठी बनी होगी जिसमें एक ओर से आग देकर बरतन पकाते थे। इस प्रकार की भट्ठी मोहनजुदाड़ों में आज से ५००० वर्ष पहिले की बनी हुई मिल चुकी है। कुम्हारों ने इस प्रथा को क्यों छोड़कर पुनः बरतनों के चारों ओर गोहरा सुलगा कर उन्हें पकाना प्रारम्भ किया इसका रहस्य समझ में नहीं आता क्योंकि भट्ठी में आँच पर नियन्त्रण हो सकता था। इस आवें में एक बार आग जलाने के पश्चात उसको कम या अधिक करना कठिन हो जाता है।

ऐसा ज्ञात होता है कि कुछ बरतन दो बार भी पकाये जाते थे। एक बार बिना लेप दिये हुए और दूसरी बार लेप देकर। इस प्रकार के बरतनों में उत्तरी काली चमक वाले बरतनों की गणना की जा सकती है तथा मोहन-जुदाड़ो से प्राप्त सीसे का लेप चढ़े हुए बरतनों की। लाल काले बरतनों की परीक्षा करके हम इस तथ्य पर पहुँचते हैं कि हमारे कुम्हार यह जानते थे कि भट्ठी में धूआँ उभाड़कर और उसे सब ओर से बन्द करके बरतनों को पकाने से वे काले निकलते हैं तथा हवा का मार्ग छोड़ने से वे लाल हो जाते हैं। उत्तरी काली चमक वाले बरतन धूआँ देकर बन्द भट्ठी में पकाये हुए हैं। यही हाल सिलेटी रंग के चित्रित तथा सादे बरतनों का भी है। इस प्रकार के बरतनों का बनना बन्द क्यों हुआ, इसका कोई कारण समझ में नहीं आता। केवल यही कहा जा सकता है कि भट्ठी के परित्याग ने ही लाल बरतनों के बनाने के हेतु कुम्हारों को विवश किया होगा। हो सकता है कि उत्तर भारत में यूनान के लाल बरतनों को देखकर और दक्षिण में रोम के

[1] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी १९५४-५५ कौशाम्बी प्लेट ३३।

लाल बरतनों से प्रभावित होकर ग्राहकों ने लाल बरतनों की माँग की हो जिससे इस प्रकार के बरतन बनने लगे हों क्योंकि प्रायः ग्राहकों की माँग पर बहुत सी वस्तु बनने लगती हैं।

इस विषय के सबसे जटिल प्रश्न हैं उत्तरी काली चमक वाले बरतनों के लेप के बनाने का ढंग, तथा उनके यकायक बन्द होने का कारण। अभी तक बहुत प्रयत्न करने के पश्चात् भी यह पता नहीं लग सका कि धातु के बने बरतनों के समान चमक इन बरतनों पर कैसे आयी। काशी के एक कुम्हार ने प्रायः छः मास इस प्रकार के बरतन बनाने का प्रयत्न किया परन्तु वह सफल न हो सका। बरतन काले बन गये। उन पर थोड़ी चमक भी आ गयी। कुछ पानी भी सोखना गन्धक के प्रभाव से बन्द हुआ परन्तु फिर भी वह चमक न आयी जो उत्तरी काली चमक वाले बरतनों पर है। ऐसे सुन्दर बरतनों का बनाना यकायक शुंग काल के पश्चात् क्यों बन्द हुआ? क्या कोई वस्तु इसके बनाने में ऐसी पड़ती थी जो बाहर से आती थी? केवल आँच का खेल नहीं जिससे यह चमक उत्पन्न होती थी। कोई वस्तु कापिस के लेप में मिलाई अवश्य गयी है। वह वस्तु क्या है, इसके अन्वेषण की आवश्यकता है। बरतनों के टुकड़ों ने किस प्रकार दक्षिण की सभ्यता के स्तरों के काल को निश्चित कर दिया यह हम देख चुके हैं। उत्तरी भारत के तक्षशिला के सिरकप की खोदाई ने वहाँ के बरतनों की शृंखला की तिथि भी किस प्रकार निश्चित की यह भी हम समझ चुके हैं। इन्हीं मिट्टी के बरतनों के सहारे यह भी बहुत दूर तक निश्चित हो चुका है कि सिन्धु-सभ्यता को ध्वंस करने वाले पश्चिम की ओर से आये। कुछ लोगों का मत है कि ये आर्य थे जो मिदानियन सभ्यता का अन्त होने पर भारत की ओर बढ़े। मांस्यू शोफर का कथन कि प्रायः ईसा पूर्व २००० वर्ष एक भूकम्प आया जिसने कासपियन समुद्र के आस-पास का भूभाग नष्ट भ्रष्ट कर दिया, इस धारणा को पुष्ट करने में सहायक होता है। मोहनजुदाड़ो में रहने वाले आर्य नहीं थे यह तो वहाँ से प्राप्त मृत शरीरों की परीक्षा से स्पष्ट हो गया है। वे कौन थे यह कहना कठिन है। परन्तु यह तो प्रत्यक्ष है कि यहाँ के निवासियों का रहन-सहन उस काल के अनुसार बहुत ऊँचे स्तर का था और वे बड़े सुन्दर मिट्टी के बरतन बनाते थे तथा व्यवहार करते थे। यहाँ से प्राप्त कुछ बरतनों पर काँच का लेप भी है जो सिन्धु सभ्यता को छोड़कर भारत में मुसलमान काल के पूर्व कहीं प्राप्त नहीं होता। चीन के कान्सु प्रदेश की खोदाई अण्डरसन ने की थी। उनको वहाँ से प्रायः सिन्धु सभ्यता के काल के बरतन प्राप्त हुए[1] परन्तु वहाँ से भी इस प्रकार के बरतन नहीं मिले, न ईरान में ही इस

[1] जे, जी, अण्डरसन—रिसर्चेज़ इन दी प्री हिस्ट्री आफ दी चाइनीज़ (स्टाक हाम १९४३) प्लेट १८५।

प्रकार के बरतन मिले।[1] यों इस सभ्यता का सम्पर्क मंगोलिया से भी था और इस काल की ईरान की मेसोपोटामियाँ की सभ्यता से भी जैसा मोहनजुदाड़ो से प्राप्त प्रमाणों से ज्ञात होता है। यों मेसोपोटामियाँ में कुछ ईंटे ऐसी मिली हैं जिन पर शीशे का लेप है। चूड़ियों पर शीशे का लेप चढ़ाते चढ़ाते कदाचित् कुम्हार बरतनों पर भी इस प्रकार का लेप चढ़ाने लगे हों परन्तु यह बहुत महँगा होने के कारण सभी बरतनों पर नहीं चढ़ सकता था। इस प्रकार इस लेप को इसके दाम ने ही अधिक बरतनों पर उपयोग न होने दिया होगा क्योंकि इस प्रकार के बरतन के लिये भट्टी भी बड़ी बनानी आवश्यक थी तथा बरतन को डुबाने के लिये बहुत सा मसाला बड़े बरतन में बनाना पड़ता था। इस बढ़ी हुई सभ्यता का अन्त कैसे हुआ और कैसे यहाँ के कारीगरों का नाश हो गया इसका कुछ पता नहीं। हाल की अहमदाबाद में लोथल की खोदाई से[2] कुछ ऐसा अनुमान होता है कि सिन्धु सभ्यता का अन्त होने पर सिन्धु प्रदेश के कुछ कारीगर भारत के दक्षिण लोथल की ओर भागे और पंजाब के हड़प्पा के कारीगर रूपड़ की ओर जहाँ से वे नीचे मेरठ के उखलीना तक पहुँचे।[3] इन दोनों स्थानों पर हड़प्पा की सभ्यता के बरतन प्राप्त हुए हैं। ये स्थान इनके आने के पूर्व बिलकुल वीरान रहे होंगे, ऐसा विश्वास नहीं होता क्योंकि प्रायः यह देखा गया है कि जहाँ आदमी की बस्ती रहती है वहीं नव आगन्तुक आकर बस जाते हैं। नयी बस्ती बनाना कठिन होता है। अतः इन स्थानों से सिन्धु सभ्यता के पहिले की सभ्यता के भी अवशेष प्राप्त होने चाहिये।

भारत भूमि की एक विशेषता रही है कि जो भी यहाँ आया और बसा वह थोड़े दिन में भारतीय बन गया। उसके विचार, उसका धर्म, उसकी कला कौशल की जानकारी हमने अपना ली और उसको भारतीय जामा पहिना दिया। इस संस्कार का फल प्रायः यह हुआ कि प्राचीन भारत के आक्रमण-कारियों का अब कहीं पता नहीं है। यूनानी, शक, हूण मंगोलिया के निवासियों को खोज कर हमारे समाज से पृथक् करना कठिन है। मुसलमान और ईसाई ही ऐसे रहे जो हिन्दू समाज में विलीन नहीं हुए। फिर भी उनके विचार रहन सहन के ढंग बहुत कुछ भारतीय हो ही गये। हमारे मिट्टी के बरतनों पर विदेशियों की छाप जो पड़ती रही उसका समन्वय तो हम बराबर करते ही चले गये।

---

[1] डी० जी० कोटर्नो—ला सिविलिज़ासियों डु इरान (पारी १९३६) फिगर २, ४, ५, ६ इत्यादि।

[2] जोन आफ इण्डस वैली सिविलीज़ेशन एक्सटेण्डेड-दी लीडर अगस्त २५, १९५८ पृ० ४।

[3] १९५७–५८ के भारत सरकार के पुरातत्त्व विभाग की प्रदर्शनी में हैदराबाद में ८ से १२ अक्तूर १९५८ तक प्रदर्शित बरतनों के आधार पर।

भारतीय कलाकार को प्रकृति के साथ रहना भाता है। प्रकृति में सीधी रेखाओं का अभाव है, इस कारण शुद्ध कोण नहीं बनते। प्रकृति-जनित वस्तुओं के आकार की रेखायें गोलाई लिये हुए ही रहती हैं। हमारा कलाकार इसी कारण अपने आकारों में गोलाई देने का प्रयत्न करता है। इसके विपरीत पाश्चात्य देशों का कलाकार रेखागणित के आकारों को शुद्ध समझता है उनमें भी वृत्त को नहीं, क्योंकि उन आकारों पर उसको आधिपत्य प्राप्त हो जाता है और वह अपनी कला में इसी प्रकार की रेखाओं से भावों की व्यञ्जना करता है। इसमें प्रकृति पर उसके आधिपत्य की भावना निहित रहती है चाहे उसके सहयोगी वैज्ञानिक ने अभी तक पेड़ की एक पत्ती भी अपनी प्रयोगशाला में उसके अवयवों से निर्माण करके न दिखाई हो। विदेशी विचार-धारा से प्रभावित मिट्टी के बरतन जब भारत के कुम्हारों के हाथों में पहुँचे तो उन्होंने किस प्रकार उनका संस्कार करके उन्हें हमारा देसी बाना पहिनाया यह दक्षिण से प्राप्त 'आन्ध्र बरतनों' को देखने से स्पष्ट हो जाता है। यहाँ के कुम्हारों ने कोनों को मार कर गोलाई दे दी। उनके आकार जो विलायती पुष्पों और फलों पर आधारित थे, उन्हें बदल कर इन्होंने बरतनों को भारतीय पुष्पों तथा फलों के आकार का बना दिया। कमल हमारे देश का जातीय पुष्प रहा है। इसका आकार तो प्रायः सभी काल के भारतीय बरतनों पर प्राप्त होता है। इसी प्रकार हमारा स्वस्तिक का चिह्न है। कमल तथा स्वस्तिक दोनों ही सौभाग्य सूचक चिह्न हैं तथा इनका धन देने वाली देवी से बहुत प्राचीन काल से सम्बन्ध था।[1] बरतनों पर इनका आकार बनाने से ऐसा समझा जाता था कि ये सौभाग्य-प्रद होंगे। हंसपंक्ति अथवा बगुले की पंक्ति भी भारत के ही नील आकाश में दिखाई देती है तथा पावस के आगमन का सूचक समझी जाती है। यह भी बहुत से बरतनों पर हमें मिलती है। सूर्य का आकार कम बरतनों पर नहीं मिलता। यों तो अहिच्छत्र से प्राप्त बरतनों पर विविध आकार मिले हैं जिनका विश्लेषण डा० वासुदेव शरण जी ने किया है[2] परन्तु भारतीय बरतनों पर खोदे हुए, छपे हुए, चिपकाये हुए अथवा रंगे हुए आकारों को देख कर हम इस निष्कर्ष पर तो अवश्य पहुँचते हैं कि ये चिह्न भावों के उसी प्रकार द्योतक हैं जैसे चीन के अक्षर अथवा मिस्र के चित्रलेख। इनके द्वारा अपढ परन्तु कलाकार कुम्हार ने अपने भावों को व्यक्त करने का

---

[1] गोविन्द चन्द्र—सिन्धु घाटी की सभ्यता में 'देवी लक्ष्मी की मूर्तियाँ'—'आज' २२ दिसम्बर १९५७—पृ० ९।

[2] वी०, एस०, अग्रवाल—पाटरी डिजाइन्स फ्राम अहिच्छत्र—ललितकला नं० ३-४ अप्रैल १९५६ मार्च १९५७ पृ० ७९, ८१।

प्रयत्न किया है, इस कारण इनका अर्थ है। इनको अध्ययन करने के हेतु हमें इन्हें दो विभागों में बाँटना आवश्यक है। एक तो वे चिह्न जो विविध धर्मों से सम्बन्धित हैं तथा दूसरे वे जिनका संबंध व्यावहारिक वस्तुओं से है। जो बरतन हमें शव के साथ मिले हैं और जो यों रहने के स्थानों से मिले हैं, इन दोनों पर बने आकारों में भेद होना स्वाभाविक है। परन्तु इसके पूर्व कि हम आगे चलें हमें यह मानना पड़ेगा कि ये आकार लोग काल विशेष में प्रतिदिन व्यवहार में लाते थे और इस कारण इनका अर्थ भी समझते थे। धार्मिक चिह्नों में हम नन्दिपाद, त्रिरत्न, बौद्ध, स्वस्तिक, शंख त्रिशूल, वारोह, जंगला, चैत्य, स्तूप, चक्र, हाथी, नदी (वैतरणी), कमल इत्यादि को ले सकते हैं। व्यावहारिक वस्तुओं के चिह्नों में बक पंक्ति, हिरन, मकान, नरिये की छत का आकार, वृक्ष, मोतियों की लड़ी, तोरण इत्यादि को गिना जा सकता है। शवों के साथ जो बरतन हड़प्पा में प्राप्त हुए थे,[1] उनमें लोटे, घड़े, प्याले, बोरसी (जिसे बरतन रखने की गेड़ुरी कहा गया है) तश्तरी, थालियाँ इत्यादि उल्लेख्य हैं। ये शवों के मस्तक के पास रखी मिली हैं जिससे ऐसा अनुमान किया जाता है कि उस काल में यह विश्वास था कि आत्मा को इस संसार से दूसरे संसार अथवा स्वर्ग पहुँचने तक भूख प्यास की तुष्टि की आवश्यकता पड़ती है। इस कारण भोजन तथा पानी शव के सिराहने मिट्टी के पात्रों में रख दिया जाता था। इन बरतनों पर प्रायः काले रंग से आकार बनाये गये हैं जिनमें नदी, पीपल के पत्ते, एक बिन्दु तथा वृत्त के चारो ओर त्रिकोण, चतुष्कोण, नदी में मछली, गेहूँ के दाने की भाँति के आकार, सर्प को पंजे में दबाये हुए मोर मुख्य हैं। नदी को तो हम वैतरणी मान सकते हैं क्योंकि आज भी पुराणों के आधार पर आत्मा को स्वर्गारोहण में वैतरणी पार करना पड़ता है। कदाचित् यह पौराणिक विचार—धारा प्राचीन विश्वास पर आधारित हो। सर्प को मोर के पंजे में दिखाने का यह ध्येय हो सकता है कि आत्मा की यात्रा में सर्प बाधा को मोर दूर करे क्योंकि मोर को सर्प का भक्षक माना गया है। पीपल का पेड़ तथा उसके नीचे देव मूर्ति जिसके समक्ष एक तड़ाग हो, यह हमारे यहाँ के प्राचीनतम देवस्थान का स्वरूप है।[2] कदाचित् पीपल में देवताओं का वास है, यह विश्वास मोहनजुदाड़ो में भी रहा हो और इसी कारण इनको इन बरतनों पर चित्रित किया गया हो। त्रिकोण पहाड़ों के द्योतक हो सकते हैं जिसे लाँघ कर आत्मा को

[1] आर०, ई०, एम० ह्वीलर-हड़प्पा १९४६ : दी डिफेंसेज़ एण्ड सिमेट्री आर० ३७ एनशण्ट इण्डिया नं० ३ पृ० ८६ फीगर ८, १, २ सी, ३ ई, ४ ए, ४ सी, ९, फीगर ९, १७ डी २७ बी, २९, फीगर १०-३७ ए, ३९।

[2] आर०, ई०, एम० ह्वीलर-उपर्युक्त—प्लेट ४५।

जाना होगा। प्रायः ये त्रिकोण उल्टे दिखाये गये हैं जिससे यह अनुमान किया जा सकता है कि कुम्हार आत्मा को यह दिखाना चाहता है कि तुम्हारे मार्ग के पहाड़ तुम्हारे लिये समतल भूमि के समान हों। बरतनों पर[1] चतुष्कोण पृथ्वी का द्योतक है।[2] कहीं-कहीं इस चतुष्कोण के बीच में एक काला बिन्दु बनाया गया है जो सूर्य का द्योतक है—ये चिह्न इस कारण बरतनों पर बनाये गये हैं कि पृथ्वी का मार्ग सुखप्रद हो। पक्षियों का आकार[3] आकाश में आत्मा की सहायता करने के हेतु बना प्रतीत होता है। बेर का आकार जो प्रायः बनाया गया है वह आत्मा का द्योतक है। इसी आत्मा के आकाश में चढ़ने के लिये सीढ़ी हम केटा से प्राप्त प्राथमिक सभ्यता के बरतनों पर पाते हैं।[4] यही बेर का आकार आगे चलकर मोहनजुदाड़ो और हड़प्पा में गेहूँ के दाने का आकार धारण करता है।[5] ऐसा अनुमान है कि कुम्हारों ने इन्हीं धारणाओं को लेकर ये चिह्न बनाये हैं। धर्मचक्र, नन्दीपाद इत्यादि चिह्न बरतनों पर इस कारण बनाये जाते थे कि उनके व्यवहारकर्ता को सुख सौभाग्य की प्राप्ति हो। यही इन चिह्नों को बनाने का ध्येय था। इन चिह्नों में भी कालान्तर में परिवर्तन होते थे जैसे पहिले नदी को लहरियादार रेखाओं से दिखाते थे परन्तु पीछे चलकर उनका आकार बहुत सी अर्ध गोलाकार रेखाओं से दिखाने लगे। इनमें जलबिन्दु भी प्रदर्शित करने लगे।[6] कमल का फूल जो अष्टदल से व्यक्त करते थे पीछे चलकर १६ और ३२ दलों से दिखाने लगे। सूर्य को जो पहिले एक काली बिन्दी तथा उसके चारों ओर लहरियादार रेखाओं से दिखाते थे, पीछे से सूर्य की किरणों को सीधी करके दिखाने लगे, जैसे सूर्य हम पंच मार्क सिक्कों पर पाते हैं तथा जैसे अभी राजघाट की खोदाई में शुंग काल के बरतनों पर छपे हुए प्राप्त हुए हैं।

यह विषय इतना बृहत् है कि इस पर अलग-अलग काल के अलग-अलग स्थानों के बरतनों पर एक-एक पुस्तक प्रस्तुत हो सकती है। प्रस्तुत पुस्तक में तो केवल इस विषय की ओर ध्यान आकृष्ट करने का प्रयास किया गया है।



---

[1] आर० ई० एम, व्हीलर—उपर्युक्त प्लेट ४५–८

[2] जी कोंटेनो—मान्युअल डारके ओलोजी टोम ३ (१९३१) पृ० १५००–१५०१।

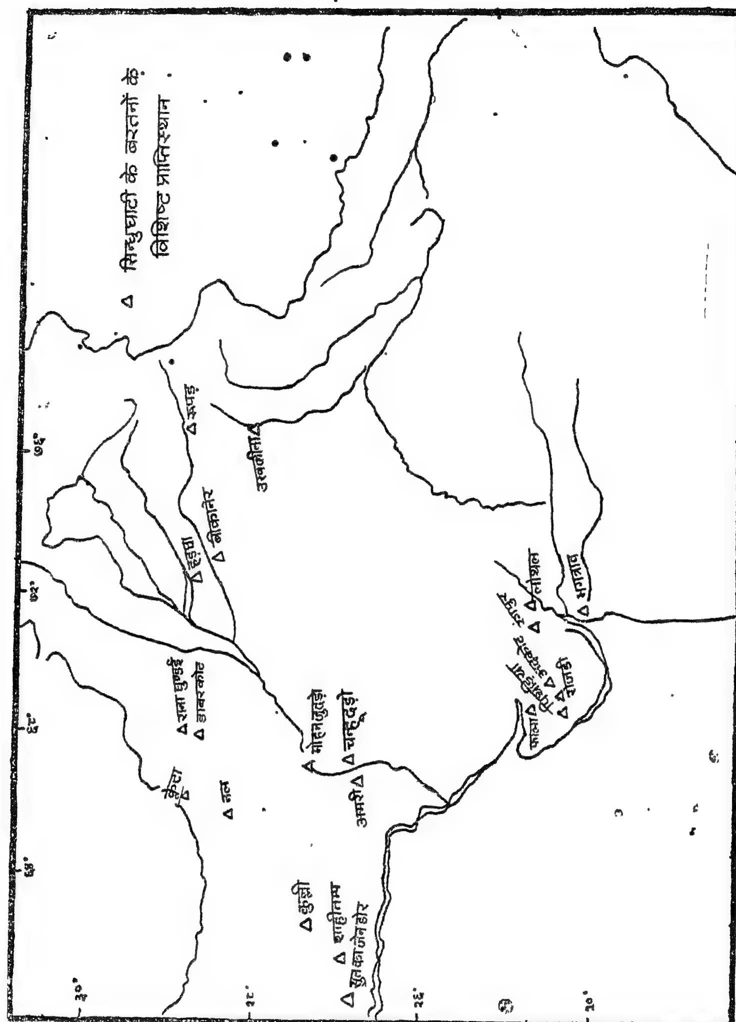
[3] आर० ई० एम व्हीलर—उपर्युक्त प्लेट ४७, ए ग्रीवा के नीचे।

[4] एस० पिग्गट्ट—ए न्यू प्री हिस्टारिक सिरेमिक फ्राम बलूचिस्तान-एनशण्ट इण्डिया नं० ३ फीगर २–१।

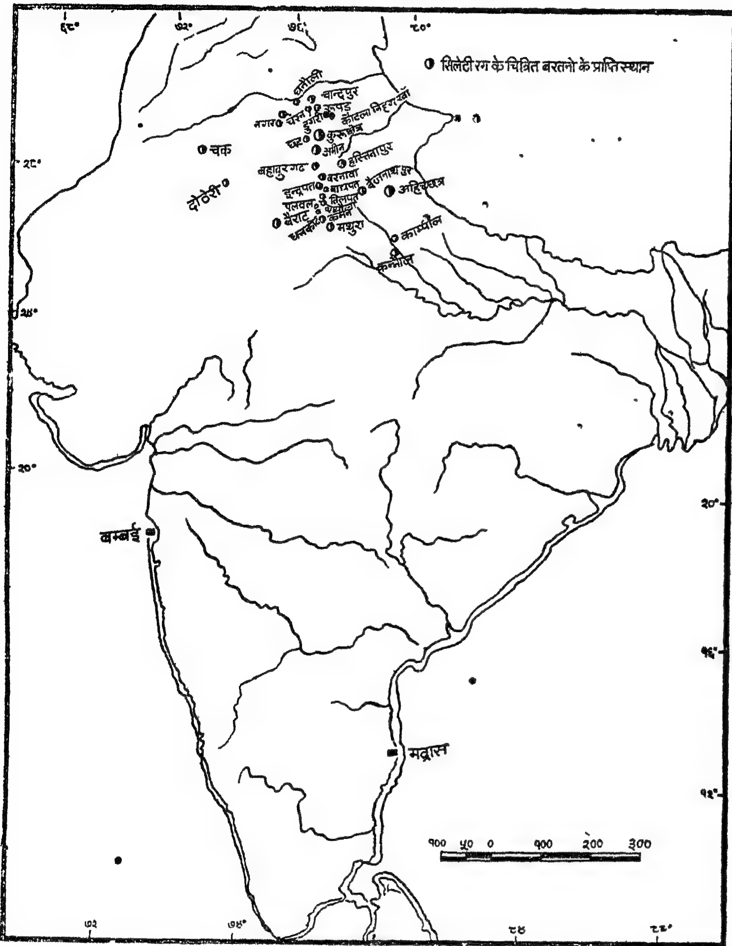
[5] आर० ई० एम व्हीलर—उपर्युक्त प्लेट ४७ ए के बरतन के नीचे के भाग में बने आकार।

[6] ए० घोष—इण्डियन आर्केआलोजी प्लेट ५३ गंगा के नीचे के भाग में।

परिशिष्ट


सिन्धुघाटी के बरतनों के विशिष्ट प्राप्तिस्थान
राना घुण्डई
डाबरकोट
नल
कुल्ली
शाहीतम्प
सुतकाजेनडोर
हड़प्पा
बीकानेर
रूपड़
मोहनजुदड़ो
चन्हूदड़ो
अमरी
पिथाड़िया
अटकोट
रंगपुर
लोथल
रोजडी
भगत्राव

चित्रित सिलेटी रंग के बरतनों के प्राप्ति स्थान



अहिच्छत्र—उत्तर प्रदेश-जिला बरेली तहसील आओंला।

अमीन—पंजाब-जिला करनाल तहसील थानेश्वर (२८°·१२′ उत्तर ७७°·१९′ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३८।

इन्द्रपत—दिल्ली (२८°·३८ उत्तर ७७°·१६′ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४० (पुराना किला)।

कमन—राजस्थान-जिला डीघ-इण्डियन आर्केआलोजी १९५७–५८ पृ० ६८।

काम्पील—उत्तर प्रदेश-जिला फरुक्काबाद (२७°·३६' उत्तर ७६°·१६ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४० ।

कुरुक्षेत्र—पूर्वी पंजाब तीन मील कुरुक्षेत्र से थानेश्वर की ओर (२६°·५८ उत्तर ७६°·५० पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४० ।

कोटला निहंग—पूर्वी पंजाब-जिला अम्बाला (३०°·५७' उत्तर ७६°·५०' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४० वत्स-एक्सकवेशन्स एट हड़प्पा पृ० ४७६–४७७ ।

कन्नौज—उत्तर प्रदेश जिला-फरुक्काबाद-इण्डियन आर्केआलोजी १९५५–५६ पृ० १९ ।

घनौली—पूर्वी पंजाब-जिला अम्बाला ६ मील रूपड़ से उत्तर पूर्व (३१°·२' उत्तर ७६°·३५' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४० ।

चक ८६—राजस्थान-जिला बीकानेर-अनूपगढ़ तहसील (गंगा नगर) (२६°·१४' उत्तर ७३°·१४' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३९ ।

चरन—पूर्वी पंजाब-जिला जलन्धर तहसील रहामों (३१°·१' उत्तर ७६°·१४' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३९ ।

चान्दपुर—पूर्वी पंजाब—जिला अम्बाला रूपड़ तहसील (३१°·१' उत्तर ७६°·३८' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३९ ।

छज्जा—पूर्वी पंजाब-जिला होशियार पुर (३१°·७' उत्तर ७६°·३३' पूर्व एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३९ ।

छट—पूर्वी पंजाब-जिला पटियाला तहसील राजपुर ३०°·३७' उत्तर ७६°·५३' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३९ ।

डुगरी—पूर्वी पञ्जाब, जिला अम्बाला रूपड़ से चार मील उत्तर पूर्व (३०°·२८' उत्तर—७६°·३४' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३९ ।

तिलपत—दिल्ली से १७ मील (२८°·२७' उत्तर—७७°·२२' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११ पृ० १४१ ।

तेओरा—पञ्जाब—जिला करनाल (३०°·७' उत्तर ७६°·५३' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४१ ।

दोथेरी—राजस्थान—बीकानेर (२९°·२५' उत्तर—७४°·०" पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३९ ।

दिल्ली—दिल्ली-वलदी की सरायँ-इण्डियन आर्केआलोजी १६५७–५८ पृ० ६७।

धनकोट-पूर्वी पञ्जाब जिला गुड़गाँव (२८°·२८' उत्तर ७६°·५३ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३६।

नगर—पूर्वी पञ्जाब जिला जलन्धर तहसील फिल्लौर—एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४०।

पलवल—पूर्वी पञ्जाब-जिला गुड़गाँव् (२८°·८' उत्तर ७७°·१६' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४०–१४१।

पिहोवा—पूर्वी पञ्जाब—करनाल जिला (२६°·५८' उत्तर ७६°·३५' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४१।

पानीपत—पूर्वी पंजाब—जिला कटनाल (२६°·२४' उत्तर ७६°·५८ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४१।

बपूला—पूर्वी पंजाब—जिला गुड़गाँव तहसील पलवल (२६°·१३' उत्तर ७७°·१६' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३८।

बहादुर गढ़—पूर्वी पंजाब—जिला रोहतक (२८°·४१' उत्तर ७६°·५६' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३६।

बरनावा—उत्तर प्रदेश—जिला मेरठ तहसील सरधाना (२६°·७' उत्तर ७७°·२६ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ १३६।

बाघपत—उत्तर प्रदेश—जिला मेरठ (२८°·५७' उत्तर ७७°·१३ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३८।

बिसरख—उत्तर प्रदेश—जिला मेरठ तहसील गाजियाबाद (२८°·३४' उत्तर ७७°·२६' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११–१३६।

बैजनाथपुर–उत्तर प्रदेश–जिला मुरादाबाद तहसील ठाकुरद्वारा (२८°·४१' उत्तर ७३°·५६' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३६।

मथुरा—उत्तर प्रदेश—(कटरा) (२७°·२८' उत्तर ७७°·४२' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४०।

राना कर्ण का किला—पूर्वी पंजाब जिला थानेश्वर (२६°·५८' उत्तर ७६°·४६' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४१।

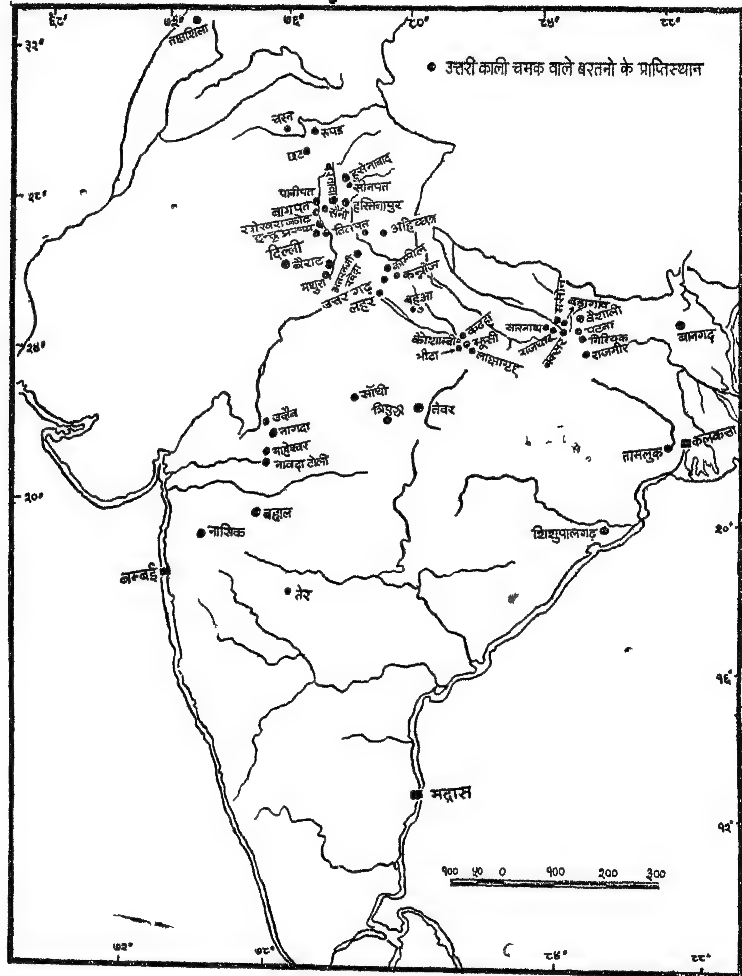
रूपड़—पूर्वी पंजाब—जिला अम्बाला (३०°·५८' उत्तर ७६°·३२' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४१।

सैनी—उत्तर प्रदेश—जिला मेरठ (२६°·२' उत्तर ७७°·४७ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४१।

हस्तिनापुर—उत्तर प्रदेश—जिला मेरठ (२६°·६' उत्तर ७८°·३' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० ८।

हुसेनाबाद—उत्तर प्रदेश—जिला नजीबाबाद–तजीबाबाद कोट द्वारा की सड़क पर दूसरा नाम इस स्थान का दौलताबाद–इण्डिया आर्केआलोजी १६५७–५८ पृ० ६६।

उत्तरी भारत के काली चमक वाले बरतनों के प्राप्ति स्थान



अहिच्छत्र—उत्तर प्रदेश के बरेली जिले के आओंला तहसील में (२८°·२२' उत्तर—७९°·७' पूर्व) एनशन्ट इण्डिया नं० १ पृ० ५५–५६।

अतख जी खेड़ा—उत्तर प्रदेश के एटा जिले में (२७°·४२' उत्तर—७८°·४१" पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १ पृ० ५५ ।

उज्जैन—मध्यप्रदेश—(२३°·११' उत्तर—७५°·४६ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११ पृ० १४६ ।

उभन—उत्तर प्रदेश—जिला कानपुर इण्डिया० आर्केआलोजी १९५७-५८. पृ० ६६ ।

उमर गढ़—उत्तर प्रदेश—जिला कानपुर· इण्डियन आर्केआलोजी १९५७-५८ पृ० ६६ ।

इन्द्रप्रस्थ—दिल्ली एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११ पृ० १४४ ।

कढ़हा—उत्तर प्रदेश—जिला इलाहाबाद (२५०°·४२' उत्तर—८१°·२२ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११ पृ० १४४ ।

कन्नौज—उत्तर प्रदेश—जिला फरुक्काबाद इण्डियन आर्केआलोजी १९५५-५६ पृ० १९ ।

काम्पील—उत्तर प्रदेश—जिला फरुक्काबाद (२७°·३६' उत्तर—७९°·१६' पूर्व एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११ पृ० १४४ ।

कौशाम्बी—उत्तर प्रदेश—जिला इलाहाबाद (२५°·२२' उत्तर—८१°·२३

खोखरा कोट—पंजाब—जिला रोहतक (२८°·५३' उत्तर—७६°·३४' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११ पृ० १४४ ।

गिरिअक—विहार—जिला पटना (२५°·२' उत्तर—८५°·१२' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १ पृ० ५६ ।

चरन—पंजाब-जिला जलन्धर तहसील रहाओं (३१°·३' उत्तर—७६°·१४' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११ पृ० १४४ ।

छट—पंजाब—जिला पटियाला तहसील राजपुर (३०°·३७' उत्तर—७६°·४७' पूर्व एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११ पृ० १४४ ।

जबलपुर—इण्डियन आर्केआलोजी १९५७-५८ पृ० ६८ ।

झूसी—उत्तर प्रदेश—जिला इलाहाबाद (२५°·२९' उत्तर—८१°५५' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १ पृ० ५५ ।

तक्षशिला—पश्चिमी पंजाब-जिला रावलपिण्डी (३३°·४५' उत्तर—७२·५० पूर्व) मारशल तक्षशिला ।

तामलुक—बंगाल-जिला मिदनापुर (ताम्रलिप्ति) (२२°·१७' उत्तर—८७°·५५' पूर्व रूपनारायण नदी पर स्थित, एनशण्ट इण्डिया नं० १०-११ पृ० १४५ ।

तिलपत—दिल्ली से १३ मील दक्षिण (२८°·२७′ उत्तर—७७°·२०′ पूर्व एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४६।

तेर—बम्बई-जिला उसमानाबाद तरना नदी के किनारे-इन्डियन आर्के-आलोजी, १६५७-५८ पृ० २३।

त्रिपुरी—मध्य प्रदेश-जिला जबलपुर २३°·६′ उत्तर—७६°·५०′ पूर्व एनशण्ट इण्डिया नं १०-११ पृ० १४६।

दौलताबाद—उत्तर प्रदेश-नजीबाबाद जिला (११ मील) इसको हुसेनाबाद भी कहते हैं। इण्डियन आर्केआलोजी १६५७-५८ पृ० ६६।

नागदा—मध्य प्रदेश-(२२°·५५′ उत्तर—७६°·३′ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४५।

नासिक—बम्बई प्रदेश-गोदावरी तट (१६°·५७′ उत्तर—७३°·४७′ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४५।

नावदा टोली—मध्यभारत-जिला नीमार (२२°·१०′ उत्तर—७५°·५६′ पूर्व एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४५।

पटना—बिहार-प्राचीन पाटलीपुत्र (२५°·३६′ उत्तर—८५°·१०′ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४५।

बहाल—बम्बई—जिला पूर्वी खानदेश (२०°·७३′ उत्तर—७५°·२′ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४४।

बहुआ—उत्तर प्रदेश—जिला फतेहपुर इण्डियन आर्केआलोजी १६५७-५८ पृ० ६६।

बानगढ़—पश्चिमी बंगाल, जिला दिनाजपुर (२५°·३७′ उत्तर—८८°·१४′ पूर्व) के० जी० गोस्वामी—एक्सकवेशन्स एट बंगाल (कलकत्ता १६४८) पृ० २७।

बरनावा—उत्तर प्रदेश—जिला मेरठ तहसील सरधाना (२६°·७′ उत्तर—७७°·२६ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १३६।

बक्सर—बिहार—जिला शाहाबाद (२५°·३४′ उत्तर—८३°·५८′ पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४४।

भीटा—उत्तर प्रदेश—जिला इलाहाबाद (२५°·१८′ उत्तर—८३°·५६′ पूर्व) ऐन्युयल रिपोर्ट आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया १६११–१२ पृ० २६।

मसअंओन—उत्तर प्रदेश-जिला गाजीपुर (२५°·३४' उत्तर—८३°·१३' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १ पृ० ५२।

मथुरा—उत्तर प्रदेश—(२७°·२८' उत्तर—७७°·४२' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४५।

माहेश्वर—मध्य प्रदेश-जिला नीमाड़ नरमदा के उत्तरी तट पर (२२°·११' उत्तर—७५°·५६' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं १०–११ पृ० १४४।

राजघाट—उत्तर प्रदेश—जिला बनारस (२५°·१८' उत्तर—८३°·१' पूर्व) गंगा पर स्थित, एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४५।

राजगीर—बिहार-पटना से ६० मील दक्षिण पूर्व २५°·२' उत्तर—८५°·२५' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० ७ (१९५१) पृ० ६६।

रूपड़—पंजाब—जिला अम्बाला (३०°·५८' उत्तर—७६°·३२' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४१।

लहर—मध्यप्रदेश—जिला भिण्ड इण्डियन आर्केआलोजी १९५७–५८ पृ० ६७।

वैशाली—बिहार—जिला मुजफ्फरपुर (२५°·५८' उत्तर—८५°·८' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–१२ पृ० १४६।

शिशुपालगढ़—उड़ीस्सा-जिला पुरी-दो मील भुवनेश्वर से पूर्व (२०°·२३' उत्तर—८५°·५१' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० ५ पृ० ७९।

सनी—उत्तर प्रदेश—जिला मेरठ (२९°·२' उत्तर—७७°·४५') एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४१।

सारनाथ—उत्तर प्रदेश—जिला वाराणसी (२५°·२३' उत्तर—८३°·२' पूर्व) ३ मील वाराणसी शहर से—एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४५।

साँची—मध्यप्रदेश-भूपाल जिला २८ मील भूपाल से (२३°·२९' उत्तर—७७°·४५' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४५।

सोनपत—पूर्वी पंजाब-जिला रोहतक (२८°·५९' उत्तर—७०°·१' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० १४५।

हस्तिनापुर—उत्तर प्रदेश-जिला मेरठ (२९°·९' उत्तर—७८°·३' पूर्व) एनशण्ट इण्डिया नं० १०–११ पृ० ८।

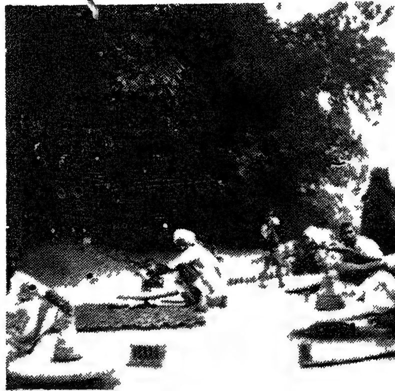
△ दक्षिण भारत के स्थान जहाँ से काले रंग से चित्रित लाल रंग के बर्तन प्राप्त हुए हैं

■ आधुनिक नगर

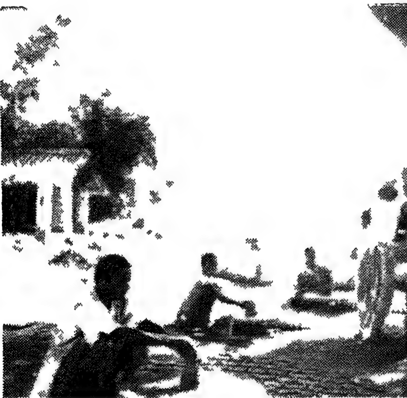
आधुनिक मिट्टी के बरतनों के बनाने की क्रिया :



मिट्टी का खूँदना



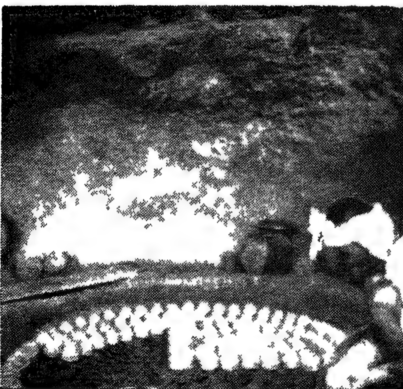
चाक पर बरतन



चक पर बरतन



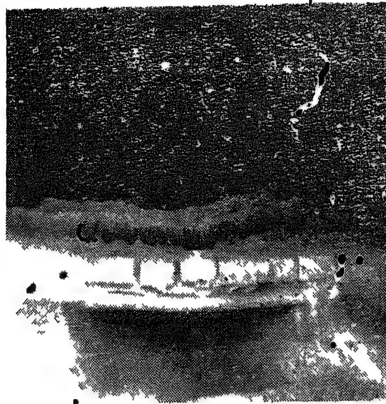
ठप्पे से तश्तरी बनाना व बरतन सुखाना



आंवा में बरतन चुनना



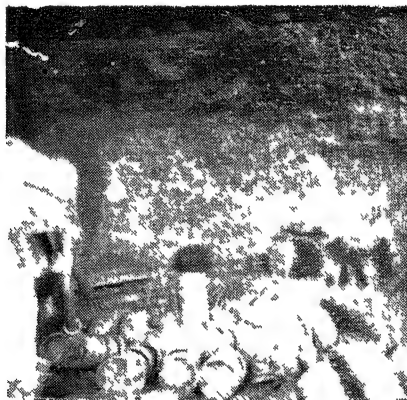
आंवा में बरतन



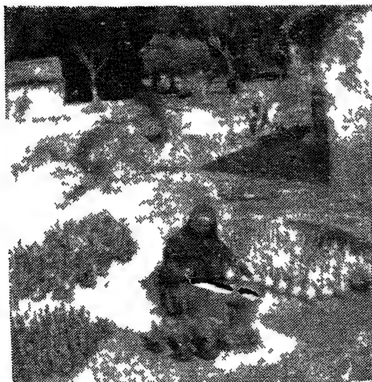
आंवा जिसमें नीचे से भी आग दी जाती है



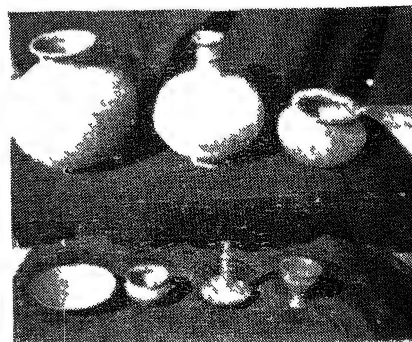
आंवा बन्द करना



आंवा का खोलना

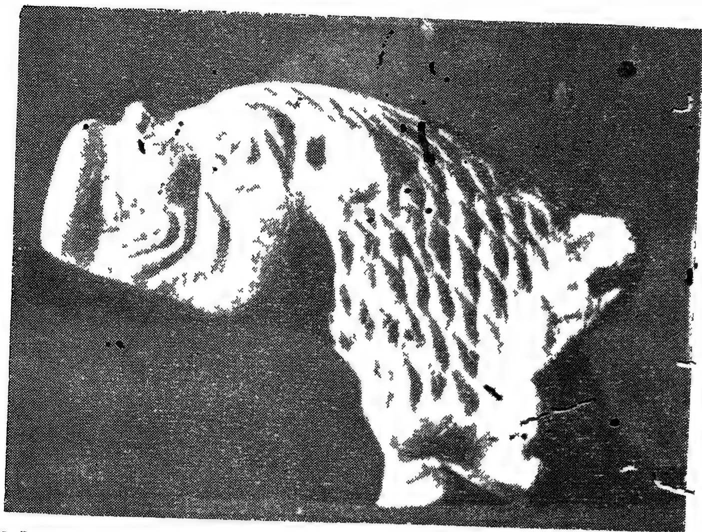


बरतन की रंगाई

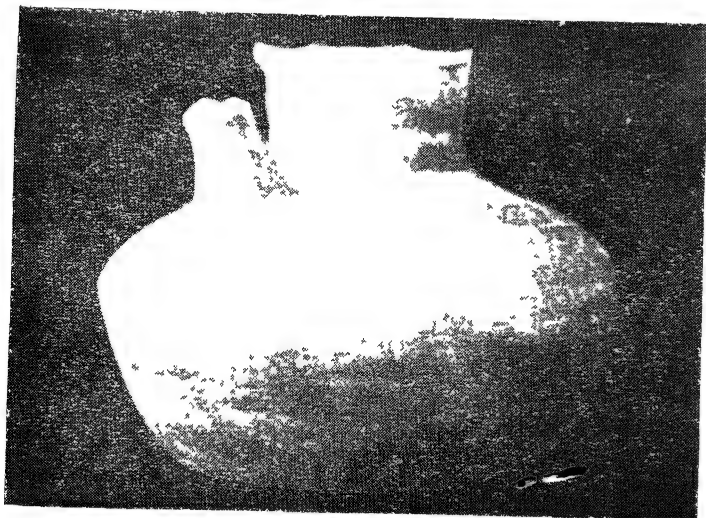


तैय्यार बरतन

राजघाट से प्राप्त बरतन मौर्यकालीन

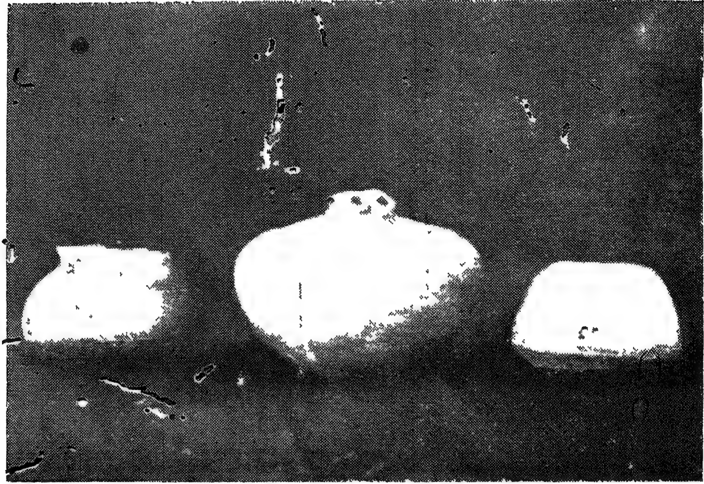


राजघाट से प्राप्त सिंहमुख की बरतन की प्रणाली (काली चमक)

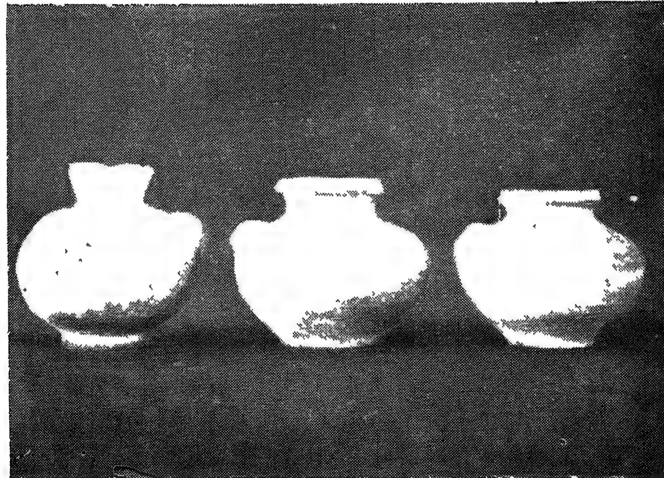


काली चमक का दो मुँह वाला गड्डुआ
(संरक्षक भारत कला भवन की कृपा से)

राजघाट से प्राप्त सुंगकालीन बरतन



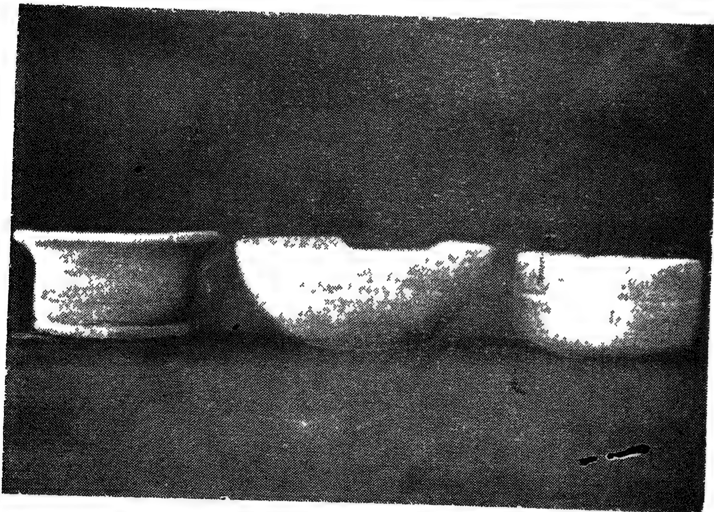
काली चमक के बरतन



लाल चमकीले बरतन
(संरक्षक भारत कला भवन की कृपा से)

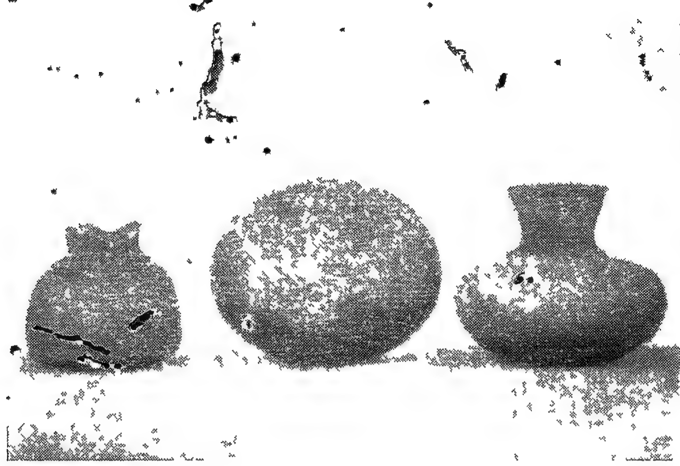


सुराही के मुँह

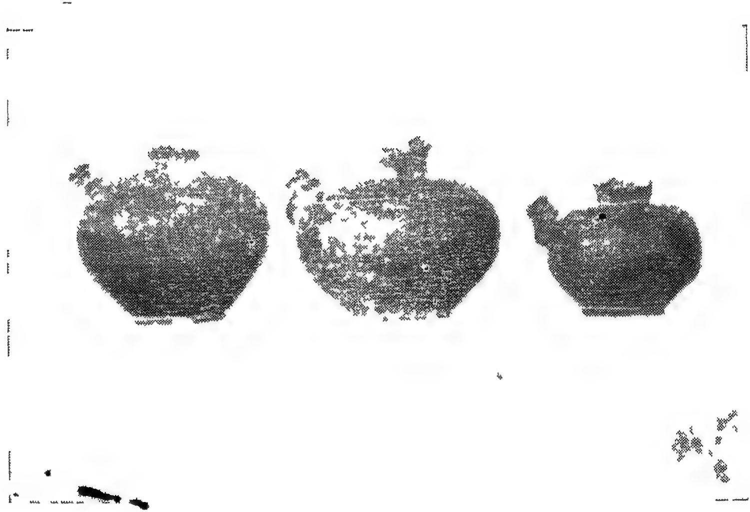


भिक्षा पात्र
(संरक्षक भारत कला भवन की कृपा से प्राप्त)

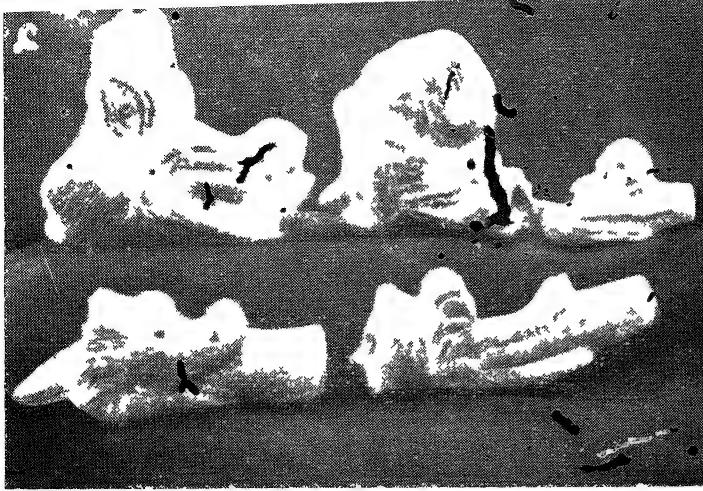
राजघाट से प्राप्त कुषाणकालीन बरतन



कुषाणकालीन लाल बरतन



कुषाणकालीन काले बरतन



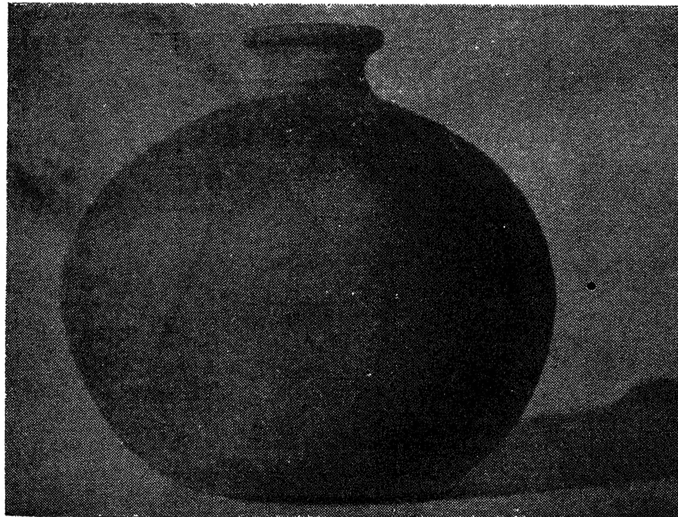
कुपाणकालीन मकरमुख प्रणाली



कुषाणकालीन पुरुषमुख प्रणाली
(संरक्षक भारत कला भवन की कृपा से प्राप्त)

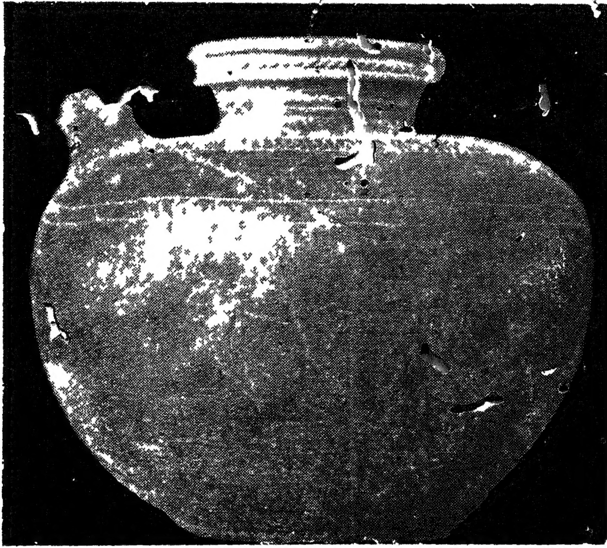


कुषाणकालीन लाल बरतन



कुषाणकालीन घट
(डा० अवधकिशोर नारायण का० वी० वी० की कृपा से प्राप्त)

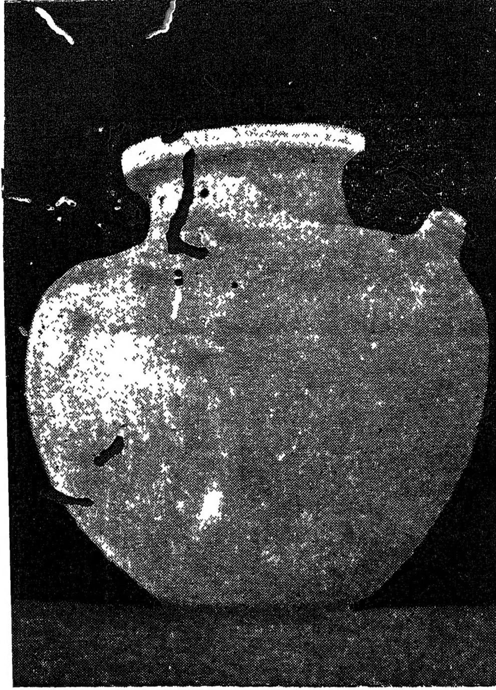
राजघाट से प्राप्त गुप्तकालीन बरतन



गुप्तकालीन मुँहदार घट



गुप्तकालीन कटोरे
(डा० अवधकिशोर नारायण का० वी० वी० की कृपा से प्राप्त)



गुप्तकालीन मुँहदार घट



बरतनों की हंसमुख प्रणाली
(डा० अवधकिशोर नारायण का० वी० वी० की कृपा से)



बरतन की गुप्तकालीन शुकमुख प्रणाली
(संरक्षक भारत कला भवन की कृपा से)